CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

4001

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

STATE MUSEUM, LUCKNOW

LIBRARY

Acc. No. _____

Book No. _____

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

4001
18.2.71

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

ज्येष्ठ सं० २०२४ वि०

सम्पादक :

श्री वृन्दावन दास

बी० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक :

श्री किशन प्रसाद जैन

संयुक्त प्रधान मन्त्री

अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा

वर्ष २१] वार्षिक मूल्य ४) [अङ्क १

अनुक्रमणिका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१. सम्पादकीय	... श्री वृन्दावनदास	१
२. ग्रन्थावलोकन	... श्री राजेन्द्र रञ्जन एम. ए.	३
३. कवीन्द्र रवीन्द्र की आकांक्षा	... श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर	४
४. कूप पूजन और उसके बुन्देली गीत	... श्री सावित्री बौहरे ज्ञानश्री	७
५. हिन्दी साहित्य का रीति काल	... श्री वृन्दावनदास	९
६. ब्रज में सौं खाइबे के प्रकार	... श्री मोहनलाल शर्मा एम.ए.	१५
७. ब्रज-भारती बन्दना [कविता]	... श्री दाऊदयाल गुप्त	१६
८. पं० श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्र	... श्री रामचरण हयारण 'मित्र'	१७
९. ग्रीष्म [कविता]	... श्री भगवान दत्त चतुर्वेदी	२०
१०. बुन्देली का फाग-साहित्य [समीक्षा]	... डा० गनेशीलाल बुधौलिया	२१
११. बन्धु भावना [कविता]	... श्री बालमुकुन्द चतुर्वेदी	२४
१२. हर्षोत्तर भारत में समाज की दशा	... श्री वृन्दावनदास	२५
१३. ब्रज के एक परिवार की साहित्यिक परम्परा	... श्री राधेश्याम अग्रवाल एम.ए.	३३
१४. युगल छवि [कविता]	... श्री दुर्गाप्रसाद 'श्याम'	३६
१५ पत्र-व्यवहार [ग्वाल समारोह]	...श्रीभगवानसहाय पचौरी एम.ए.	३७
१६. राष्ट्रभाषा हिन्दी और शौरसेनी	... श्री किशोरीदास बाजपेयी	३९
१७. वट सावित्री व्रत कथा	... श्री उमाशङ्कर दीक्षित एम.ए.	४२
१८. गीत [कविता]	... श्री महेन्द्र शर्मा "निशेश"	४३
१९. वृन्दावन के दीवान चम्पाराम की दो अज्ञात रचनाऐं	... श्री अगर चन्द नाहटा	४४
२०. आइये हम अपने गाँव को गोकुल बनायें	... श्री विनोवा भावे	४६

ब्रज भारती

अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मण्डल को मुख पत्रिका सम्बन्धित

स्वामित्व तथा अन्य बातों का विवरण

१.	मुद्रण का स्थान—	राष्ट्रीय प्रेस, मथुरा
२.	प्रकाशन का अवधि-क्रम—	त्रैमासिक
३.	मुद्रक एवं प्रकाशक—	श्री किशन प्रसाद जैन
	राष्ट्रीयता—	भारतीय
	पता—	संयुक्त मन्त्री, अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा
४.	सम्पादक का नाम—	श्री वृन्दावनदास
	राष्ट्रीयता—	भारतीय
	पता—	
६.	स्वत्वाधिकारी—	अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा

मैं किशन प्रसाद जैन, यह घोषित करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य हैं।

(ह०) किशन प्रसाद जैन
प्रधान मन्त्री
अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रजभारती

[अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य-मण्डल की मुख-पत्रिका]

वर्ष २१] मथुरा ज्येष्ठ सं० २०२४ [अङ्क १

संपादकीय

मथुरा के प्रख्यात साहित्यकार श्री जवाहरलाल जी चतुर्वेदी आज कल अपने कलकत्ता प्रवास में 'सूरसागर' के संपादन में व्यस्त हैं। उनके महान् परिश्रम के फलस्वरूप और स्वर्गीय सेठ गोवर्द्धनदास बिन्नानी की उदारता के प्रतीक रूप में सूरसागर का प्रथम खण्ड प्रकाशित हो चुका हैं। इस ग्रन्थ का विमोचन संस्कार भी राजधानी में एक भव्य समारोह के अन्तर्गत हो चुका है। चतुर्वेदी जी ने इस ग्रन्थ की भूमिका के रूप में 'संपादन-कथा' वर्णन की है। इस कथा में चतुर्वेदी जी ने ब्रजभाषा, हिन्दी-संस्कृत और उर्दू-फारसी की जो सरस त्रिधारा बहाई है उससे उनकी विषय के प्रतिमार्मिक मानसिक प्रवृत्तियों का पता चलता है। सूरसागर के अनेकों संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं परन्तु चतुर्वेदी जी की राय में उनमें एक भी प्रामाणिक नहीं। चतुर्वेदी जी के विचार से हिन्दी के उन विद्वानों ने सूर-कृतियों के प्रति को परिश्रम न कर सूर की भाषा तथा उसके रूपों पर भी विचार नहीं किया और सूर की कृति को उसके अत्यन्त विकृत रूप में प्रस्तुत किया है। चतुर्वेदी जी को सूरसागर की अनेकों हस्तलिखित प्रतियाँ देखने में आयीं परन्तु वे संपूर्ण रूपेण श्री मद्भागवत् के द्वादश स्कंधात्मक जैसी थीं। चतुर्वेदी जी की मन्यता है कि सूरसागर का द्वादशस्कंधात्मक रूप कृत्रिम है। "सूरद्वारा नाना राग-रस- रञ्जित अपनी संख्या से परे संपूर्ण जीवन की ललित कृतियों को किसी संज्ञा के साथ पुस्तक रूप देना समझ के बाहर बात बनती है। श्री सूर तो मन-भावने अनन्त भगवच्चरित्रों के गायक थे, लेखक नहीं। वे अपने आराध्य "ब्रज-भूषण" की नाना भाव भरी रसमयी लीलाओं को हृदय की आंखों से निरख-परख कर और अपने शब्दों में पिरोकर गाया करते थे" इन शब्दों के द्वारा चतुर्वेदी जी ने स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दिया है कि सूर का पद-साहित्य द्वादशस्कन्धात्मक आधार पर पुस्तक रूप में नितान्त अमान्य है। चतुर्वेदी जी का मत है कि सूरसागर का उद्भव तो उस विशाल कीर्त्तन-साहित्य से है जो ब्रजोत्पन्न अष्ट-सखा-मुखोद्गीत है। कीर्तन संग्रह के तीन भाग हैं, नित्य कीर्तन, वर्षोत्सव और बसन्त धमार। चतुर्वेदी जी के अनुसार इन कीर्तन संग्रह ग्रन्थों से स्वेच्छया सूरसागर आदि अष्ट संग्रह किये गये यह सौटंच खरे सोने जैसी सुन्दर बात है। फलतः आज चार सागर—सूर-सागर, कृष्ण-सागर, परमानन्द-सागर तथा नन्द-सागर आदि मिलते हैं जो अपने विषय वर्णन में प्रायः एक से हैं और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाना समय के हैं। चतुर्वेदी जी के मतानुसार सूरसागर का संग्रहात्मक रूप स्कन्धात्मक रूप से कहीं कहीं पुराना है और प्रामाणिक है। सूरसागर का संग्रहात्मक रूप सूर-संमान्य ब्रजभाषा तथा रागों से तद्वत्-सुगंधित है, साथ ही वह अपने मौलिक रूप में है तनिक भी विकृत नहीं हुआ है। पण्डित जवाहरलाल जी सूरसागर के संग्रहात्मक रूप को ही वन्दनीय मानते हैं।

सूरसागर का यह प्रथम खंड विस्तृत पाठांतर और टिप्पणी सहित है। ब्रजभाषा के प्रकाण्ड पण्डित द्वारा सुसंपादित यह ग्रन्थ ब्रजभाषा साहित्य के गौरव को बढ़ाता है इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं है। हमने इस ग्रन्थ को देखकर इसमें एक कमी महसूस की और वह थी भाषानुवाद के अभाव के रूप में। हमें यह सूचित करते हुए प्रसन्नता है कि चतुर्वेदी जी के अभी हाल के आये पत्र से विदित होता है कि प्रथमखंड भाषानुवाद के साथ पुना प्रकाशित होगा और आगामी सभी खंड भाषाटीका सहित होंगे। निस्संदेह जब यह कार्य पूरा हो जायगा। तब इसकी हिन्दी साहित्य की एक महान् उपलब्धि के रूप में गिनती होगी। इस अमर कृति के लिए पण्डित जवाहर लाल चतुर्वेदी अक्षय-यश के भागी होंगे।

सूर जयन्तियाँ

इस वर्ष ब्रज-प्रदेश में सूर जयन्तियों की धूमधाम रही। ब्रज साहित्य-मंडल तथा अन्य अनेक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं ने सूर जयन्ती बड़े धूमधाम से मनाई। गोवर्द्धन क्षेत्र के पारासौली ग्राम में सूर जयन्ती समारोह बड़े उत्साह से सम्पन्न हुआ। ब्रजभाषा-गगन के सूर्य के प्रति ये अर्घ्यांजलियाँ वास्तव में बड़ी प्रेरणादायक रहीं।

आचार्य श्री रामचन्द्र वर्मा का अभिनन्दन

पं० किशोरीदास जी वाजपेयी सूचित करते हैं कि आगामी २६, २७ जून को हरिद्वार में वर्मा जी का अभिनन्दन समारोह हो रहा है। समारोह की अध्यक्षता बा० श्री प्रकाश जी करेंगे। आचार्य वर्मा की एक पूरी पीढ़ी की हिन्दी सेवाओं के प्रति कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखलाना है। इस समारोह में प्रदेश के अनेक हिन्दी विद्वान और वर्मा जी के प्रशंसक अच्छी संख्या में भाग ले रहे हैं। हम समारोह की सफलता और वर्मा जी के दीर्घ जीवन की कामना करते हैं।

नवीन ब्रज का निर्माण

पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी का उपरोक्त शीर्षक के अन्तर्गत एक महत्व पूर्ण लेख दैनिक अमर उजाला में हाल ही में प्रकाशित हुआ है। लेख को पढ़ने से विदित हो जाता है कि चतुर्वेदी जी को केवल ब्रज का साहित्यिक उत्थान ही नहीं अपितु उसका सर्वाङ्गीण सांस्कृतिक अभ्युदय अभीष्ट है। वे सत्तात्मक राजनीति के आधार पर नहीं वरन् साहित्यिक सांस्कृतिक एवं कलात्मक उन्नयन के हेतु एक पृथक् ब्रजप्रदेश के निर्माण की कल्पना करते हैं। यदि इस प्रदेश के कार्यकर्ता-गण एवं सार्वजनिक संस्थाऐं इस दिशा में अपना अनुकूल योगदान दें तो चतुर्वेदी जी का स्वप्न साकार हो सकता है।

हम इस सम्बन्ध में ब्रजसाहित्य-मंडल के कर्तव्यों के प्रति जागरूक तो हैं परन्तु कुछ कठिनाइयों के कारण अभी तक प्रदेश के समस्त जनपदीय साहित्यिक बन्धुओं को आमन्त्रित कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एक मञ्च पर एकत्रित करने में असमर्थ रहे हैं। स्थानीय कार्यकर्ताओं का विचार है कि भूमि अधिग्रहण सम्बन्धी हमारा कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न हो जाय तब ही हम इस प्रकार का आयोजन अपनी भूमि पर करें। यदि अधिग्रहण सम्बन्धी सब कार्य शीघ्र सम्पन्न हो गये तो ठीक है अन्यथा सम्मेलन तो निकट भविष्य में बुलायेंगे ही। तब तक जितने जनपदीय साहित्यिक केन्द्र हैं उनका मंडल से सम्पर्क स्थापित होना वांछनीय है। यदि प्रत्येक केन्द्र अपने कार्यकलापों का लेखा जोखा हमें भेजता रहे तो हम मंडल से उसकी विज्ञप्ति करने की योजना बनायेंगे तथा ब्रज-भारती में एतदर्थ एक स्तम्भ ही खोल देंगे।

—बृन्दावनदास

ग्रन्थावलोकन

समालोचनार्थ
प्रत्येक पुस्तक पत्र-पत्रिकाओं की दो प्रति आनी चाहिये,

[राजेन्द्र, रंजन एम ०ए०]

द्वितीय महासमर (ब्रजभाषा काव्य)

रचयिता पं० श्री मधुसूदन चतुर्वेदी एम० ए०, प्राप्तिस्थान भारतीय पुस्तक भण्डार बेगम बाजार हैदराबाद (दक्षिण) मूल्य ५० पैसे।

द्वितीय महासमर श्री मधुसूदन चतुर्वेदी की सरस सरल और सफल कृति है। इसमें द्वितीय विश्व महायुद्ध का ओजस्वी और परिष्कृत ब्रजभाषा में बड़ा सजीव और रोचक वर्णन किया है। वास्तव में यह सुन्दर काव्य यह सिद्ध करता है कि ब्रजभाषा में निर्माण की गति अनवरुद्ध है और उसके प्रकाशन सतत रूप से हो रहे हैं। वास्तव में तो आज ब्रज और ब्रजभाषा साहित्य पुनः अपना स्वरूप विस्तार कर रहा है और ब्रजी के पुनरुत्थान के लिये सिद्धान्तसमर, दैत्यवंश, ब्रजरज, ब्रजविभूति वीर सतसई, राधा, पूछरी कौ लौठा, सुपर्णा और कूदरी की गौरवमयी शृङ्खला में यह एक नई कड़ी है। ब्रजभाषा की इन रचनाओं का हार्दिक स्वागत है। साथ ही यह रचना तो ब्रजभाषा की नई दिशा की ओर संकेत करती हुई सशक्त गवाही देनी है कि ब्रजभाषा शृङ्गार और भक्ति गीतों के लिए तो कामधेनु है ही साथ ही मानव जीवन की प्रत्येक दिशा, चिन्तन और तत्संबधित विषयों के सफल प्रतिवादन के लिये पूर्ण समर्थ है।

महासमर में ब्रजभाषा का स्वरूप विशुद्ध और परिनिष्ठित है, रचना में सर्वत्र प्रसाद गुण और ओजस्विता विद्यमान है, लेखक ने इस गौरव के अनुरूप ही एक अनोखे छन्द को काव्य का माध्यम बनाया है। (नंद दासी भँवर गीत)

महासमर नें युग चेतना के सम्यक् दर्शन होते हैं यथा :—

या जगतें अब प्रीत रीत सब निवटि गई है।
राजनीति की जोति कपट की बेलि बई है॥
स्वरथ में रत देखियत आज सकल संसार।
अपनी-अपनी लगि रही करत कुटिल व्यवहार॥
साँच कौ लेस ना।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवीन्द्र रवीन्द्र की आकांक्षा

(ब्रजभूमि में पुनर्जन्म के लिए)

आवश्यक निवेदन

विश्व कवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर रचित बङ्गला कविता 'जन्मान्तर' बड़ी ही उत्कृष्ट और भावपूर्ण है। आदरणीय पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने इसे हिन्दी लिपि में लिखवाकर हमारे पास भेजी है। उन्होंने बाबू श्यामसुन्दर खत्री कलकत्ता वालों से उसका गद्यानुवाद भी कराकर हमारे पास भेजा है। उनकी इच्छा है कि ब्रज-भारती के पाठक तथा अन्य कवि इस कविता का सुन्दर पद्यानुवाद ब्रजभाषा तथा खड़ी बोली में करें। सुन्दरतम अनुवाद पर मण्डल के अध्यक्ष बाबू वृन्दावनदास की ओर से पुरस्कार (ब्रजभाषा अनुवाद पर २५ रु०, खड़ी बोली पर २० रु०) दिया जायगा। रचनायें आषाढ शुक्ला पूर्णमासी तक सम्पादक ब्रज-भारती मथुरा अथवा पं० बनारसीदास चतुर्वेदी फीरोजाबाद के पते पर पहुँच जानी चाहिये। यदि अधिक रचनायें प्राप्त हुईं तो द्वितीय तथा तृतीय पुरस्कार भी प्रदान किये जायेंगे।

अब हम पहिले बंगला कृति 'जन्मान्तर' की हिन्दी लिपि और फिर उसका गद्यानुवाद कवियों की जानकारी के लिए उद्धृत करते हैं।

—वृन्दावनदास
सम्पादक ब्रज-भारती

जन्मान्तर

(कवीन्द्र रवीन्द्र कृत) (बङ्गला)

आमि छेड़ेइ दिते राजि आछि सुसभ्यतार आलोक।
आमि चाइ न होते नववंगे नवयुगेर चालक।
आमि नाइ-वा गेलाम विलात,
नाइ-वा पेलाम राजार खिलात,—
यदि परजन्मे पाइ रे होते व्रजेर राखालबालक।
तबे निविये देबो निजेर घरे सुसभ्यतार आलोक॥

जारा नित्य केवल धेनु चराय बंशीबटेर तले,
जारा गुञ्जाफूलेर माला गेथे परे पराय गले,
जारा वृन्दबनेर बने,
सदाइ श्यामेर बाँशि शोने,
जारा यमुनाते झाँपिये पड़े शीतल कालो जले।
जारा नित्य केवल धेनु चराय बंशीबटेर तले॥

ओरे बिहान होलो जागोरे भाइ—डाके परस्परे—
ओइ जे दधि मंथ ध्वनि उठलो घरे घरे।
हेरो बाहेर पथे धेनु
चले उड़िये गोखुररेणु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हेरो आँगिनाते ब्रजेर बधु दुग्धदोहन करे।
ओरे बिहान होलो जागो रे भाइ—डाके परस्परे ।।
ओरे साऊनमेघेर छाया पड़े कालो तमालमूले,
ओरे एपार ओपार आँधार होलो कालिन्दीर कूले।
घाटे गोपाङ्गना डरे
काँपे खेयातरीर 'परे'
हेरो कुञ्जवने नाचे मयूर कलापञ्चानि तूले।
ओरे शाऊनमेघेर छाया पड़े कालो तमाल मूले ।।
मोरा नव-नवीन फागुनराते नीलनदीर तीरे।
कोथा जाबो चलि अशोकवने, शिखिपुच्छ शिरे ।।
जबे दोलार फूलरशि
दिबे नीपशाखाय कषि
जबे दखिन वाये बाँशिर ध्वनि उठबे आकाश घिरे,
मोरा राखाल मिले करबो मेला नीलनदीर तीरे ।।
आमि होबो ना भाइ, नवबंगे नवयुगेस चालक,
आमि जालाबो ना आँधार देशे सुसभ्यतार आलोक।
यदि ननीछानार गाँये
कोथाओ अशोकनीयेर छाये
आमि कोनो जन्मे पारि होते ब्रजेर गोप बालक।
तबे चाइ ना होते नव बंगेर नवयुगेर चालक ।।

जन्मान्तर

(गद्यानुवाद)

मैं सुसभ्यता का आलोक त्याग ही देने को राजी हूँ।
मैं नव बंग में नव युग का चालक नहीं होना चाहता ।।

क्या हुआ, जो मैं विलायत नहीं गया,
क्या हुआ, जो मैंने राजा की खिलअत नहीं पाई,—

अरे, यदि मैं परजन्म में ग्वालबाल हो सकूँ।
तो मैं अपने घर में सुसभ्यता का आलोक बुझा दूँगा ।।

जो लोग वंशीवट के तले नित्य केवल धेनु चराते हैं।
जो लोग गुञ्जाफूलों की माला गले में पहनते और पहनाते हैं ।।

जो लोग वृन्दावन के वन में।
सदा ही श्याम की वंशी सुनते हैं ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो लोग यमुना के काले शीतल जल में कूद पड़ते हैं।
जो लोग वंशीवट के तले नित्य केवल धेनु चराते हैं॥

अरे, सवेरा हुआ, जागो रे भाई—परस्पर पुकारते है,—
अरे, वह, घर घर में दधि मन्थन की ध्वनि उठी।
देखो, मैदान के पथ में धेनुऐं
खुरों से रेणु उड़ाती चलती हैं
देखो, आँगनों में ब्रज की वधुऐं दुग्धदोहन करती हैं।
अरे, सवेरा हुआ, जागोरे भाई—परस्पर पुकारते हैं॥
अरे, सावन के मेघों की छाया काले तमालमूलों पर पड़ती है।
अरे, कालिन्दी के कूलों पर इस पार उस पार अँधेरा हो गया।
घाट में गोपाङ्गनायें डरती हैं।
आरपार जाने वाली नाव पर काँपती हैं,
देखो, कुञ्जवन में मोर कलाप उठाकर नाचते हैं।
अरे, सावन के मेघों की छाया काले तमालमूलों पर पड़ती है,

हम लोग नव-नवीन फागुन की रात को सिर पर मयूर पुच्छ,
धारण करके नील नदी के तीर पर कहीं किसी अशोक-वन में चले जायेंगे
जब झूले की पुष्परज्जु।
कदम्ब की शाखा में कस जायगी॥
जब दक्षिणी वायु में आकाश को घेरती हुई वंशी की ध्वनि उठेगी,
हम सब ग्वालबाल मिल जुल कर नील नदी के तीर पर मेला रचायेंगे॥

नहीं भाई, मैं नव बंग में नव युग का चालक नहीं होना चाहता,
मैं अँधेरे देश में सुसभ्यता का आलोक नहीं जगाऊँगा।
यदि मक्खन और छेने के गाँव में।
कहीं अशोक कदम्ब की छाँव में॥
यदि मैं किसी जन्म में भी ब्रज का गोप-बालक हो सकूँ।
तो मैं नव बंग में नव युग का चालक होना नहीं चाहता॥

गद्यानुवाद—श्यामसुन्दर खत्री

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कूप-पूजन और उसके बुन्देली लोक-गीत

[सावित्री बोहरे ज्ञान श्री सावित्रीसदन राठ हमीरपुर]

चक्की पीसना और कुएँ से पानी भर कर लाना भारतीय महिलाओं के लिए अच्छे व्यायाम थे इस कल-युग ने इन दोनों व्यायामों को नगरों से तो पूर्ण विदाई दे ही दी है, पर सौभाग्य से ग्रामों में अभी पानी भरने का व्यायाम शेष है। फलत: ग्रामीण ललनाऐं नागरिकाओं से अब भी अधिक स्वस्थ दिखाई पड़ती हैं। नगरों में घर-घर में नल-सिस्टम हो जाने के कारण स्त्रियों का यह स्वास्थ्य का साधन यद्यपि छिन गया है, पर कूप-पूजन के रूप में उसकी स्मृति अब भी शेष है।

यह कूप-पूजन स्त्रियों के बच्चा पैदा होने पर दस दिन के पश्चात् किसी शुभ मुहूर्त में प्राय: रात्रि-मुख में किया जाता रहा है। ज्यौतिष-ग्रन्थों में इसके लिए विशिष्ट तिथि, वार और नक्षत्रादि का उल्लेख है। अत: वह एक राष्ट्रीय प्रक्रिया है। यहाँ मैं बुन्देलखण्ड जनपद का कूप पूजन और उसके लोक-गीत प्रस्तुत कर रही हूँ।

बच्चा होने के पश्चात् जब स्त्री कुछ स्वस्थ हो जाती है–कुएं तक चल सकने योग्य-तभी ज्योतिष के पण्डितों से शुभ मुहूर्त पूछ कर सायंकाल दीपक जल जाने पर कूप-पूजन सम्पन्न किया जाता हैं। इष्ट-मित्रों के यहाँ की स्त्रियों को आमंत्रित किया जाता है तथा सब के एकत्र हो जाने पर कूप-पूजन के हेतु जब स्त्रियाँ घर से चलती हैं तो उनके आगे-आगे बाजे वाले मङ्गल वाद्य बजा हुए चलते हैं, पीछे-पीछे सुसज्जित महिला-मण्डल निम्न गीत को गाता हुआ चलता है :—

ऊपर गगन घहराय री,
तरें गोरी, पनियां खां निकरीं।
जाय जौ कहियौ उन राजा ससुर सों–
अङ्गना में कुइया खुदांय री, तरें०।
जाय जौ कहियौ उन राजा जेठ सों,
चन्दन पटरी डरायं री, तरें गोरी०।
जाय जो कहियौ उन राजा देवर सों–
रेशम डोरी डरांयरीं, तरें गोरी०।
जाय जो कहियौ उन राजा बलम सो–
सोने के घैलना मंगायं री, तरें गोरी०।

कुएं पर पहुंच कर हलदी—चावल और बतासा आदि से कूप-पूजा की जाती है और फिर प्रसूता से पानी भरवाया जाता है। उस समय निम्न गीत गाया जाता है :—

गर्रा पै डोरी डार गुंइयां।
डार गुंइयां री उतार गुंइयां। गर्रा पै०।
गर्रा पै डोरी जब नीकी लागै–
सोने के घैलना होंयं गुंइयां। गर्रा पै०।
सोनें के घैलना जब नीके लागे–
रेशम की डोरी होय गुंइयां। गर्रा पै०।
रेशम डोरी जब नीकी लागें—
मुतियन कुनरी होय गुंइयां। गर्रा पै०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुतियन कुनरी जब नीकी लागै—
पतरी सी धनियाँ होय गुइयाँ। गर्रा पै०।
पतरी सी धनियाँ जब नीकी लागै-
बोली झडुलना होय गुंइयाँ। गर्रा पै०।

कहीं-कहीं इसी गीत में तीन-चार कड़ियां और जोड़ ली जाती हैं, अप्रासङ्गिक होने के कारण वे इस गीत का अङ्ग नहीं जान पड़तीं, अतः उन्हें यहाँ छोड़ दिया गया है। पानी भर लेने के बाद फिर उसी क्रम से घर को लौटती हैं। लौटते समय निम्न गीत गाया जाता है :—

जल भरन जानकी आई तीं।
किन की बहू कौन की बेटी—
किन की नार कहाई तीं? जल०।
दसरथ बहू जनक की बेटी—
राम की नार कहाई तीं। जल०।
सिर पर धड़ा धड़ा पै गगरी—
रेशम डोरी लाई तीं। जल०।

गृह के द्वार पर पहुँचने पर प्रसूता का देवर उसके सिर पर से घड़ा उतारता है, इस समय उसे कुछ नेग दिया जाता है और निम्न गीत गाया जाता है :—

हम पैरें मूँगन की माला—
हमारी कोउ गगरी उतारो।
कहाँ गए मोरे सइंयां-गुसइंयाँ-
कहाँ गए वारे लाला। हमारी०।
एक हात मोरी गगरी उतारो—
दूजे में घूँघट संभारो। हमारी०।
एका हात मोरी गगरी उतारो-
दूजे सें चूनर संभारो। हमारी०।
एका हाथ मोरी गगरी उतारो-
दूजे सें ललना संभारो। हमारी०।
हम पहरें मूँगन की माला-
हमारी कोउ गगरी उतारो।

इस मधुर गीत की समाप्ति के साथ गृह में प्रवेश कर स्त्रियां बैठ कर कुछ अन्य मांगलिक गीत भी गाती हैं। अन्त में सभी को बतासे या मोदक दे-दे कर विदा किया जाता है। इस प्रकार आज का यह कूप-पूजन और पानी भरना यद्यपि प्रथा के रूप में ही अवशिष्ट है, फिर भी इन मधुर-गीतों के साथ वह महिलाओं का एक विनोदपूर्ण महोत्सव ही नहीं, अपितु हमारी संस्कृति का एक आवश्यक अङ्ग बन गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिन्दी साहित्य का रीति काल

(सन् १७०० ई० से १८०० ई० तक)

लेखक—श्री वृन्दावनदास

हिन्दी साहित्य का रीति काल भारतीय इतिहास के मुगल काल के अन्तर्गत है। मुगल कालीन भारत में आन्तरिक शान्ति स्थापित हो गई थी। अफगान शासकों की अपेक्षा मुगलों में विवेक बुद्धि अधिक थी। जब मुगल भारत में आये तो उन्हें दो राज्य शक्तियों से निपटना था। पहिले तो अफगान शासक और उनके अमीर उमरा और दूसरे हिन्दू राजपूत राजा लोग। मुगलों ने सोचा कि अफगानों से सत्ता तो छीन ही रहे हैं अब उन्हें स्वभावतया राजपूतों से मेल कर लेना चाहिए। ये नीति बहुत ही उपयुक्त और सामयिक थी। मुगल-राजपूत सहयोग से भारत में एक महान केन्द्रीय साम्राज्य की स्थापना हुई।

मुगल साम्राज्य के अन्तर्गत अनेक छोटे छोटे हिन्दू राजे मुगलों के मन्सबदार थे। वे अपने आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्र थे। अपने प्रभु मुगल शासकों की भाँति के विलासी और कलाप्रिय थे। मुगल दरबार की विलासप्रियता और सौन्दर्योपासना का उन पर प्रभूत प्रभाव पड़ा था। उस काल में शृङ्गार की वृत्ति व्यापक थी, समाज में भी और काव्य में भी। उस समय प्रत्येक वस्तु में शृङ्गारिक स्पर्श लगाने की प्रवृत्ति व्याप्त थी। इस काल में जो शृङ्गार-रस और वीर-रस की कविताएँ हुई उन्हें रीति काल की कविताएँ कहते हैं। शृगार रस की प्रधानता के कारण यदि इसे शृङ्गार काल भी कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी।

काव्य सम्प्रदाय छः हैं, रस, अलङ्कार, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि और औचित्य। इन्हीं में से एक सम्प्रदाय रीति सम्प्रदाय है। साधारणतया रीति का अर्थ है 'प्रकार'। लक्षणों के साथ अथवा अकेले उनके आधार पर लिखे गये काव्य को रीति काव्य कहते हैं।

रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ

रीति काल की प्रधान प्रवृत्तियाँ है—(१) लक्षण ग्रन्थों की रचना, (२) शृङ्गार की अलौकिक अभिव्यक्ति, (३) रचनाओं की कलात्मकता, (४) प्रकृति का उद्दीपक स्वरूप, (५) मुक्तक काव्य, (६) विरक्ति की प्रवृत्ति, (७) वीर रसात्मक काव्य।

रीति काल में दो प्रकार का साहित्य रचा गया—(१) राज्याश्रित (दरबारी), (२) लोक साहित्य। राज्याश्रय प्राप्त साहित्य विलासिता से ओत प्रोत था। लोक साहित्य के अन्तर्गत वीर रस का काव्य था। परन्तु श्रङ्गारिकता का स्पर्श उसमें भी था। भूषण, लाल, सूदन, घनानन्द, आलम, बोधा आदि कवियों द्वारा लोक-साहित्य का सृजन किया गया।

साहित्य के ऊपर देश, काल का प्रचुर प्रभाव पड़ता है। कुछ विद्वानों का मत है कि रीति कालीन साहित्य में विलासप्रियता का आधिक्य तत्कालीन परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप था। उस काल में हिन्दू तो अपनी स्वतन्त्रता खोकर अत्याचार पीड़ित थे। दासता ने और मुसलमानों की विलासप्रियता के प्रभाव ने उनके नैतिक बल में ह्रास ला दिया। नादिरशाह और अहमदशाह अब्दाली के बर्बर आक्रमणों ने तो रहे सहे नैतिक बल को समाप्त ही कर दिया। मुसलमान भी अत्यधिक विलासी होने के कारण अपना चारित्रिक अधः पतन कर चुके थे। ऐसी दशा में कला बिक रही थी और वह शासकों की विलास-पूर्ति का साधन बन गई।

राधाकृष्ण के काव्य का रूप देवोत्तर होने की अपेक्षा लौकिक बन गया। रीति काल ने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कृष्ण-काव्य के आध्यात्मिक स्वरूप को समाप्त कर दिया। राधाकृष्ण एक नायक और नायिका के रूप में चर्चित और वर्णित होने लगे। रीति काल पर लिखते हुए कुछ विद्वान् तो यहाँ तक कह गये हैं कि राधा और कृष्ण की लीलाओं के वर्णन के बहाने कवियों ने अपनी कामुक भावनाओं का नग्न प्रदर्शन किया था। इन विद्वानों की राय में विरक्ति भावना का काव्य तो कवियों द्वारा अपनी वृद्धावस्था में लिखा गया था। कारण युवावस्था में तो वे सौन्दर्य और शृङ्गार प्रधान कविताओं की रचना कर रहे थे। वृद्धावस्था में जब विलासिता से तृप्ति हो गई और परलोक गमन के पूर्व कुछ भगवत्स्मरण की चिन्ता हुई तभी विरक्तिभावना पूर्ण कविता का निर्माण हुआ।

वीर काव्य का सृजन हिन्दू राष्ट्र की भावना से प्रेरित था। चूँकि हिन्दू जनता मुसलमानों के अत्याचारों से पीड़ित थी, अतः हिन्दू वीरों की प्रशस्ति गाकर उनका मनोबल ऊँचा करने का प्रयास वीर काव्य का प्रधान लक्ष्य था।

रीतिकाल के प्रवर्तक दो समझे जाते हैं—(१) केशवदास और (२) चिन्तामणि। कुछ विद्वान् केशव को रीतिकाल का प्रवर्तक मानते हैं और कुछ चिन्तामणि को। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल चिन्तामणि त्रिपाठी को रीतिकाल का प्रवर्तक मानते हैं। यद्यपि रीतिग्रन्थों की परम्परा की स्थापना केशवदास द्वारा निर्मित रसिक प्रिया और कविप्रिया आदि ग्रन्थों ने कर दी थी तथापि रीतिग्रन्थों की परम्परा ५० वर्ष बाद चिन्तामणि के काल में प्रारम्भ हुई।

केशवदास और चिन्तामणि से बहुत पहिले भी रीति ग्रन्थों का निर्माण हुआ था। इन प्राचीन ग्रन्थों में कृपाराम कृत हित तरङ्गिणी, मोहनलाल मिश्र कृत शृङ्गार सागर और करुणेश कवि कृत कर्णाभरण, श्रुति भूषण और भूप भूषण उल्लेखनीय हैं। इनसे भी पहिले सूरदास की साहित्यलहरी और नन्ददास की रस मंजरी भी वास्तव में रीतिग्रन्थ थे लेकिन उनकी रचना सम्पूर्ण रीति ग्रन्थों के रूप में नहीं की गई थी।

संस्कृत वाङ्मय प्रधानतया रीति साहित्य का आदिश्रोत है। रीति साहित्य में काव्य का स्वेच्छा पूर्वक विकास नहीं है वरन् पाण्डित्य प्रदर्शन और अलङ्कार वर्णन इसके प्रधान लक्षण हैं। संस्कृत का साहित्यिक आधार होने के कारण इसमें काव्य शास्त्र का निरूपण है। उदाहरण वास्तव में बड़े उत्कृष्ट दिये गये हैं। लक्षणों की बड़ी अद्भुत व्यञ्जना की गई है। इस काल में भाषा समृद्ध एवं परिमार्जित हुई। बाबू गुलाबराय ने रीति काल पर अपना मत प्रकट करते हुए लिखा है :—

"रीतिकाल के कवि शृङ्गार रस को रसराज मानते थे। इस साहित्य में शृङ्गार के आलम्बनों और उद्दीपनों के बड़े उत्कृष्ट और मर्मस्पर्शी उदाहरणों की रचना हुई। रस, अलङ्कार और विविध काव्याङ्गों की विवेचना खूब की गई। वीर रस की कविताऐं भी लिखी गईं। कवित्त और सवैयों के रूप में कविता अधिक लिखी गई। बिहारी के दोहे अत्यन्त उत्कृष्ट थे। उनकी भाषा अवधी और ब्रज का मिश्रण थी। इनमें भावपक्ष की प्रधानता थी।"

संक्षेप में केशवदास की कविप्रिया और रसिकप्रिया से रीतिकाल का आरम्भ हुआ। इसके बाद कवि चिन्तामणि, भूषण और मतिराम हुए। रीतिकाल की प्रथम अर्द्धशताब्दी में कुलपति, सुखदेव और देव के नाम विशेष महत्वपूर्ण हैं। बिहारी भी इसी काल में हुए थे। देव के बाद विस्तार हुआ। कालिदास, सूरति मिश्र, श्रीपति, सोमनाथ, कुलपति मिश्र ने इस परम्परा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का विस्तार किया। रीतिकाल के अन्तिम प्रतिभाशाली कवि पद्माकर हैं। इनके बाद बैनी कवि और प्रतापसिंह हैं।

अब रीतिकाल के कुछ प्रमुख कवियों के कृतित्व और व्यक्तित्व पर प्रकाश डालना वांछनीय होगा।

आचार्य केशवदास

ये कवि और आचार्य दोनों थे। इनका जन्म सन् १६१२ ई० में हुआ। इनके पिता का नाम काशीनाथ मिश्र था। ये ओड़छा नरेश इन्द्रजीत के आश्रित थे। इनके प्रमुख सात ग्रन्थ हैं (१) विज्ञान गीता (२) रतन बावनी (३) जहाँगीर जस चन्द्रिका (४) वीरसिंह देव चरित्र (५) रसिक प्रिया (६) कविप्रिया (७) रामचन्द्रिका। रसिक प्रिया में रसनिरूपण, श्रृङ्गार रस और नायिका भेद का वर्णन है। कविप्रिया में काव्य के विषय और अलंकारों का वर्णन है।

चिन्तामणि त्रिपाठी

इनका जन्म १६६० ई० में हुआ। इनके पिता का नाम रत्नाकर त्रिपाठी था। ये नागपुर के सूर्यवंशी भोंसला सरदार मकरन्द शाह के आश्रित थे। इनके मुख्य ग्रन्थ 'काव्य विवेक', 'कविकुल कल्पतरु', 'काव्य प्रकाश' और 'छन्द विचार' हैं। संस्कृत के चन्द्रलोक और कुवलयानन्द नामक ग्रन्थों के आधार पर इन्होंने रस प्रधान कविता की। परवर्ती कवियों ने इनकी शैली का अनुसरण किया। इनकी कविता सरल तथा अनुप्रासयुक्त, शैली मधुर और भाषा ललित थी। इन्होंने काव्यशास्त्र की स्पष्ट व्याख्या की। लक्षणकारों में इनकी गणना सर्वप्रथम आती है। कुछ विद्वानों का मत है कि ऐसा सुगम और स्पष्ट लक्षण देने वाला कोई अन्य कवि नहीं हुआ।

तिराम

ये भूषण और चिन्तामणि त्रिपाठी के भाई थे। मिश्रबन्धुओं ने इन्हें नवरत्नों में से एक माना है। इनके ग्रन्थ हैं (१) ललित ललाम (२) रसराज (३) मतिराम सतसई (४) छन्दसार (५) साहित्य सागर (६) लक्षण श्रृंगार। इनके ग्रन्थों में रसराज सर्वश्रेष्ठ है और दूसरा नम्बर ललित ललाम का आता है। इनकी भाषा "सुव्यवस्थित परिपक्व, प्रवाहपूर्ण और प्रसादगुण युक्त है।" इनके वर्णन सुन्दर और सच्ची अनुभूति के बोधक हैं। मतिराम सतसई में ७०० दोहे हैं। ये श्रृङ्गार रस के अत्युत्तम हैं परन्तु फिर भी बिहारी के समकक्ष नहीं। इनके कवित्त सवैयों में भारतीय जीवन का सुन्दर चित्रण है।

भिखारीदास

इनको काव्यशास्त्र का अतीव ज्ञान था। अपनी काव्य प्रतिभा से इन्होंने काव्याङ्गों का निरूपण किया। ये रीतिकाल के अन्तिम बड़े आचार्य थे। इनके ग्रन्थ हैं (१) काव्य निर्माण (२) श्रृंगार निर्माण, (३) छन्दोर्णव (४) विषय और रस सारांश। इन्होंने काव्य के गुण दोषों का बड़ा विशद विवेचन किया है। अलंकारों का वर्गीकरण भी किया है। विवेचन स्पष्ट और वैज्ञानिक है। भाषा ललित, व्यवस्थित और प्रसादपूर्ण है।

बिहारीलाल

ये रीतिकाल के जनप्रिय कवि और काव्यशास्त्र के मर्मज्ञ थे। एक विद्वान् के अनुसार "पूर्ण पाण्डित्य और व्यापक विदग्धता को लेकर मर्मस्पर्शी ललित काव्य के प्रणेता बिहारी हिन्दी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के सर्वश्रेष्ठ कवियों में माने जाते हैं। इनका जन्म सन् १६०३ ई० में ग्वालियर राज्य के बसुआ गोविन्दपुर नामक स्थान में केशोराय के घर हुआ था। जयपुर के राजा जयसिंह ने इनकी रचनाओं से प्रसन्न होकर इन्हें प्रचुर सुवर्णदान दिया था। कहते हैं कि सतसई के ७०० दोहों में से प्रत्येक पर इन्हें एक सुवर्ण मुद्रा राजा जयसिंह से प्राप्त हुई। बिहारी सतसई की जितनी टीकाऐं हुई हैं वैसी किसी अन्य ग्रन्थ की नहीं। सतसई लक्षण रहित रीति ग्रन्थ है। यह वह गागर में सागर है जिसमें अलंकार, रस, रीति, वक्रोक्ति ध्वनि आदि सब कुछ है। बिहारी सहज और सूक्ष्म कलाकार हैं। इनकी रचनाओं में भाव और कला का अद्भुत संगम है। सतसई शृंगार के सब भावों से परिपूर्ण है। इनके एक एक दोहे में कई कई अलंकार आ गये हैं। इसी बात को लेकर स्वर्गीय राधाचरण गोस्वामी का मत है कि यदि सूर सूर तुलसी शशी उड़गन केशवदास हैं तो बिहारी पीयूषवर्षी मेघ हैं जिनके उदय होने से सबका प्रकाश आच्छन्न हो जाता है।

देव

इनका जन्म सन् १६७३ ई० में और मरण सन् १७६७ ई० में ९४ वर्ष की आयु में हुआ। इनके प्रमुख ग्रन्थ हैं, भाव विलास, अष्टयाम, राग रत्नाकर, जाति विलास, रस विलास, काव्य रसायन, राधिका विलास, नीति शतक, नख शिख प्रेम दर्शन, वृक्ष विलास आदि। इन ग्रन्थों में नायिका भेद, शृंगार काव्य, पिंगल, ऋतु वर्णन, नखशिख वर्णन आदि प्रचुर मात्रा में मिलता है। इनकी रचनाओं में काव्याङ्गों का सुन्दर विवेचन है। प्रसिद्ध आलोचक रामचन्द्र शुक्ल का इनके विषय में निम्नलिखित मत है, "रीतिकाल के लक्षणकारों में देव का स्थान बड़ा उच्च है। इनके ग्रन्थों में विचार की स्पष्टता, वर्गीकरण की मौलिकता और उदाहरणों की रमणीयता द्रष्टव्य है। इनका सा अर्थ सौष्ठव और नवोन्मेष बिरले ही कवियों में मिलता है। रीतिकाल के कवियों में ये बड़े ही प्रगल्भ और प्रतिभा सम्पन्न कवि थे।" डाक्टर श्यामसुन्दरदास का मत देव के विषय में बड़ा स्पष्ट और हृदयग्राही है। वे लिखते हैं, "पाण्डित्य की दृष्टि से रीतिकाल के समस्त कवियों में देव का स्थान आचार्य केशवदास से कुछ नीचा माना जा सकता है, कलाकार की दृष्टि से वे बिहारी से निम्न ठहरते हैं परन्तु अनुभव और सूक्ष्मदर्शिता में उच्चकोटि की काव्य प्रतिभा का मिश्रण करने और सुन्दर कल्पनाओं की अनोखी शक्ति लेकर विकसित होने के कारण हिन्दी काव्य-क्षेत्र में सहृदय और प्रेमी कवि देव को रीतिकाल का प्रमुख कवि स्वीकार करना पड़ता है।"

अन्य कवि

अन्य रीति कालीन कवियों में कवि कालिदास ने कालिदास हजारा नामक ग्रन्थ की रचना की। इसमें एक हजार कवियों की रचनाओं का संग्रह है। सूरति मिश्र ने अपने ग्रन्थ काव्य सिद्धान्त में काव्य के सभी अङ्गों का पाण्डित्य पूर्ण विवेचन किया है। कवि श्रीपति ने 'काव्यसरोज' नामक ग्रन्थ लिखकर काव्य के स्वरूप व गुण दोष पर अधिकारपूर्ण विचार किया है। सोमनाथ के ग्रन्थ 'रस पीयूष निधि' में काव्यशास्त्र के विभिन्न अङ्गों पर प्रकाश डाला गया है। १०० पदों के संग्रह 'कविकुल कण्ठाभरण' के रचयिता दूलह कवि भी रीतिकालीन कवि प्रसिद्ध हैं।

पद्माकर

पद्माकर रीतिशास्त्र के अन्तिम प्रभावशाली कवि हैं। इनके दो ग्रन्थ पद्माभरण और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जगद्विनोद रीति साहित्य के हैं। इनकी कविता में रसार्द्रता, सौंदर्योपासना, शृंगार और प्रेम का आधिक्य है। इनके वीर रस के ग्रन्थ हैं (१) हिम्मत बहादुर विरुदावली और (२) जयसिंह विरुदावली।

बैनी कवि का नवसतरंग और प्रतापसाहि की व्यङ्गार्थ कौमुदी उत्कृष्ट रीतिग्रन्थ हैं। प्रतापसाहि नायिकाभेद और गूढार्थ लिखने में सिद्ध हस्त हैं।

रीतिमुक्त कवि

ये कवि दो प्रकार के हैं (१) राष्ट्रीय विचार धारा वाले जिनमें भूषण, सूदन, लाल, चन्द्रशेखर प्रमुख हैं (२) प्रेम के गायक कवि जिनमें आलम, शेख, घनानन्द और बोधा उल्लेखनीय हैं। सेनापति की रचनाऐं दोनों प्रकार की हैं।

कवि भूषण

वीर काव्य के कवियों में भूषण सर्वश्रेष्ठ हैं। इन्होंने हिन्दुओं के पुनरुत्थान और पुनर्जागरण में अपना योग दिया। वीरों के हृदयों में वीरता का संचार किया। भूषण का जन्म सन् १५७९ ई० में हुआ। भूषण अपने समय के राष्ट्र कवि थे। उन्होंने दो हिन्दू राष्ट्र नायकों का यशगान किया (१) छत्रपति शिवाजी (२) महाराज छत्रसाल। शिवा बावनी, शिवराज भूषण और छत्रसाल दशक उनके प्रमुख ग्रन्थ हैं। भूषण रीति पद्धति के भ्रमजाल में न पड़े। काव्यांगों में उन्होंने केवल शृंगार का ही आश्रय लिया। भूषण उल्लास और भूषण हजारा नामक दो ग्रन्थ उन्होंने और लिखे परन्तु वे अप्राप्य हैं। यद्यपि भूषण ने व्रजभाषा में लिखा परन्तु उसमें अन्य भाषाओं का मिश्रण भी हुआ है। उन्होंने शब्दों की तोड़ मरोड़ बहुत की है। भाषा ओज से परिपूर्ण है। भूषण के काव्य के साथ इतिहास का समन्वय है। उनका काव्य हिन्दुत्व के गौरव से ओतप्रोत है। उनकी लिखी महाराज छत्रसाल की प्रशस्ति भी सुन्दर है। तत्कालीन हिन्दुओं की उत्पीड़ित और अवनत दशा का लक्ष्य करके भूषण ने अपनी कविता द्वारा वीरत्व का आह्वान किया।

इनके अतिरिक्त चन्द्रशेखर बाजपेयी ने हमीर हठ और सूदन ने सुजान चरित्र जो भरतपुर के राजा सुजानसिंह का जीवन वृत्त है नामक ग्रन्थों की रचना की।

घनानन्द

घनानन्द व्रजभाषा के महानतम कवियों में से एक थे। इनका जन्म सन् १६८९ ई० में हुआ था। इनकी मृत्यु १७३९ ई० में नादिरशाह के दुष्ट सैनिकों द्वारा हाथ काट दिये जाने से हुई। वे दिल्ली के बादशाह के मीरमुंशी थे। नादिरशाह के सिपाहियों ने इनसे खजाने की बाबत पूछा तो इन्हें कोई जानकारी न होने के कारण मना करना पड़ा। परन्तु दुष्ट सैनिकों ने इनके हाथ काट डाले जिससे इनकी मृत्यु हो गई। इनके विषय में एक मनोरंजक कहानी प्रचलित है। इनका सुजान नामक वेश्या से प्रेम था। बादशाह ने इन्हें एक बार गाने पर बुलाया, इन्होंने इस शर्त के साथ सहमति दी कि उस समय सुजान भी आनी चाहिये। दरबार में इन्होंने सुजान की तरफ मुंह करके गाया, दैवात् ऐसा करने से इनकी पीठ बादशाह की तरफ हो गई। बादशाह ने इस पर रुष्ट होकर इन्हें देश निकाला दे दिया। इन्होंने सुजान से साथ चलने को कहा परन्तु उसने इन्कार किया। फलतः ये अकेले ही चले गये। उसके विरह में इन्होंने प्रेमपूर्ण व्यथा सहित जिस काव्य का सृजन किया है वह व्रजभाषा के सर्वोत्तम काव्य में से है। वृन्दावन जाकर ये निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्होंने ४० ग्रन्थों की रचना की। इनमें सुजान सागर, विरह लीला, कोकसार, रसकेलि-वल्ली, कृपा काण्ड, घनानन्द कवित्त आदि विशेष प्रसिद्ध हैं।

रीतिकालीन प्रबन्ध काव्य

सबलसिंह चौहान का दोहा चौपाइयों में लिखा हुआ महाभारत, छत्रसिंह की विजय मुक्तावली, गुमान मिश्र की नैषध कथा, गुरु गोविन्दसिंह का चण्डि चरित्र, जोधराज का हम्मीर रासो आदि रीति कालीन उत्तम प्रबन्ध काव्य हैं।

रीति कालीन भक्ति साहित्य

रीतिकालीन भक्ति साहित्य में प्रबन्ध और मुक्तक दोनों मिलते हैं। इस काल के भक्त कवियों में नागरीदास प्रसिद्ध हैं। कहते हैं इन्होंने ७२ ग्रन्थ लिखे। बख्शी हंसराज प्रेमसखी सम्प्रदाय के कवि थे। इन्होंने स्नेह सागर, विरह विलास, रामचन्द्रिका, बारहमासा आदि ग्रन्थ रामोपासना में लिखे। महाराज विश्वनाथसिंह ने भी रामभक्ति विषयक अनेक ग्रन्थ परिमार्जित भाषा लिखे।

रीतिकाल में वृन्द, गिरधर और दीनदयाल नामी कवि उत्कृष्ट सूक्तकार हो गये हैं। इनकी सूक्तियाँ जनता में बहुत प्रचलित हैं।

उपसंहार

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तथा डा० रामशंकर शुक्ल रसाल आदि आलोचकों का मत है कि रीतिकाल तो एक प्रकार से कलाकाल था। रीतिकालीन साहित्य में उनके मत के अनुसार कला का कृत्रिमता के साथ गठजोड है तथा हृदय के स्थान पर मस्तिष्क ने काम अधिक किया है। उनके मत से रीतिकालीन कवि चमत्कार प्रिय होते हुए जन जीवन से दूर थे। उनका साहित्य वासनाओं से ओथ-प्रोत था। अपने आश्रमदाताओं की वासनाओं को उत्तेजित करना और पुरस्कार पाना उनका ध्येय था। शृंगार रस की व्याख्या, नायिका भेद की व्याख्या, रस के स्थान पर अलंकार और छन्दों का प्रदर्शन आदि उनके मुख्य ध्येय थे।

माना कि वर्तमान काल के आलोचकों का मत रीति कालीन साहित्य पर ठीक हो परन्तु यह तो निर्विवाद है कि रीतिकालीन कवियों का दृष्टिकोण कलावादी था। यदि केशव, चिन्तामणि, राजा जसवन्तसिंह, भिखारीदास और कुलपति आदि में आचार्यत्व के प्रदर्शन की भावना अधिक थी तो देव, बिहारी, मतिराम पद्माकर जैसे सहृदय कवियों की रचनाओं में हृदय पक्ष का अत्यन्त सुन्दर चित्रण हुआ है। स्वयं आचार्य शुक्ल के शब्दों में" इन कवियों का उद्देश्य कविता करना था न कि काव्यों का शास्त्रीय पद्धति पर निरूपण करना। अतः उनके द्वारा बड़ा भारी कार्य यह हुआ कि रसों और अलंकारों के बहुत ही सरस और हृदयग्राही उदाहरण अत्यन्त प्रचुर परिमाण में प्रस्तुत किये गये।"

रीतिकालीन काव्य में ब्रजभाषा परिमार्जित हुई और इस परिष्कार से भाषा समृद्ध हुई। भाषा-परिष्कार और कलात्मक सौंदर्य रीतिकाल की विशिष्ट देन है। रीतिकाल के "श्रुति मधुर शब्द चयन, सरस स्वर लहरी ध्वनि, लाक्षणिक वक्रता, सुकुमार कल्पना और अलंकार वैचित्र्य" से साहित्य के एक अङ्ग की पूर्ति तो हुई ही।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज में सौं खाइबे के प्रकार

—श्री मोहनलाल शर्मा, एम० ए० साहित्यरत्न

सौं खाइबे की प्रथा मनुष्य समाज में बड़ी पुरानी है। यौं तौ समाज में व्यवस्था रखिबे के ताईं कानून आदि हू बनाए जांय हैं पर पारस्परिक विश्वास के बिना काहू समाज कौ काम नांय चलि सकै। या विश्वास-बद्धता ते ही समाज कौ सङ्गठन गुथ्यौ भयौ है। कहनौ नांय होयगौ कै पक्कौ विश्वास दिबाइबे कूँ ही सौं खाई जाय है। अलग-अलग समाजन में सौं खाइबे के अलग-अलग प्रकार प्रचलित हैं। हमारे ब्रज लोक जीवन में हूँ सौं खाइबे के कछू प्रकार बहु-प्रचलित है। ब्रज लोक जीवन के कुशल चितेरे महाकवि सूरदास जी ने हू जसोदा मैया कूँ अपने सच्चे मातृत्व के प्रति लाला कृष्ण को पक्कौ विश्वास बैठाइबे के ताँई गौधन की सौं खवाई है—

"सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत।
सूर स्याम, मोहि गोधन की सौं, हौं माता तू पूत॥"

पक्कौ विश्वास दिबाइबे के ताँई प्रिय ते प्रिय अपनी वस्तु की सौं खाई जाय है। ब्रज लोक-जीवन के स्वरूप की झांकी इनसौं खाइबे के प्रकारन में स्पष्ट रूपते झलकै है—

देवता और महापुरुषन के प्रति

राम् दुवाई—[राम दुहाई] प्रायः सबरे ब्रज में प्रचलित है।
नन्द बाबा की सौं—नन्दगाम के आस-पास खाई जाय है।
श्रीजी की सौं—बरसाने के आस-पास के क्षेत्र में प्रचलित है।
गिर्राज जी की सौं—प्रायः सबरे ब्रज में और विशेषकर गोवर्धन मांऊ प्रचलित है।
दाऊजी की सौं—बल्देव, महाबन, गोकुल में बोली जाय है।
बिहारी जी की सौं—प्रायः सर्वत्र प्रचलित है। वैसे वृन्दावन के आस-पास खूब चलै है।
भगवती मैया की सौं—कोसी क्षेत्र में प्रचलित है।

परिवारजनन के प्रति

दद्दू की सौं—प्रायः जादों ठाकुरन में खाई जाय है। कहूँ-कहूँ 'कक्कू की सौं' हू प्रचलित है।
बाबा की सौं—प्रायः जाटन में अपने पिता कूँ लक्ष्य करके खाई जाय है।
मैय्यो की सौं—सम्पूर्ण ब्रज में प्रचलित है।

अपने प्रति

तेरी सौं, मेरी सौं—प्रायः सम्पूर्ण ब्रज में पारस्परिक प्रगाढत्व प्रकट करबे कूँ बोली जाय है।

धार्मिक प्रतीकन के प्रति

जमुना जी की सौं—प्रायः मथुरा और जमुना के आंचल में याकौ प्रचलन है।
गायनई—गैयन कूँ लक्ष्य करिकें ब्रज के किसान या सौं कूँ खाये है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बर्धनईया बर्धन की सौं—ब्रज के ठाकुर बैलन के प्रति विश्वास कूँ यासौं प्रकट करैं हैं।

धरमते—ब्रज में सर्वत्र प्रचलित है।

ईमानते—प्रमाणिकता सिद्ध करिबे कूँ ईमान की सौं हू सर्वत्र प्रचलित है।

ये तौ भईं सौं जो केवल उच्चारण करिकें ही प्रकट करी जांय हैं पर कछू ऐसे हू कार्य-कलाप ब्रज में प्रचलित हैं जिनकूँ क्रियात्मक रूप ते करिकें विश्वास भाजन बनायौ जाय है। उनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं :—

[१] तेरे मूड़ पै हाथ धरूँ—प्रायः मूड़ पै हाथ धरिके या बात कौ विश्वास दिबायौ जाय है कि मूड़ पै हाथ धरिबे बारौ कबहू नांय चाहै कि जाके मूड़ पै हाथ धर्यौ है वाकौ कछू अनिष्ट होय।

[२] जमुना मांऊ हाथ करिके—जमुना जी के प्रति अगाध श्रद्धा कूँ या क्रिया में विश्वास कौ आधार बनायौ गयौ है।

[३] अन्न देवताए हाथ में लैंके—अन्न तौ जीव कौ प्राण है। कौन झूठि बोलिकें भूखौ मरिबौ चाहेगौ। सो अन्न के प्रति विश्वास जागरित करिके सांच दिबायौ जाय है।

[४] छोरा के मूँड़ पै हाथ धरिकै—अपने बेटा ते प्यारौ और कौन है सकै है। सो बाकी सौगन्ध खायकै हू विश्वास दिबायौ जाय है।

[५] गङ्गा मांऊ मोंह करिकै—या गिर्राज जी मांऊ मोंह करिकें हू पर्याप्त प्रचलित है।

ब्रज-भारती वन्दना

—श्री दाऊदयाल गुप्त,

सुन्दर सुर बिजन साज साजि बरन माला गल,
कवियन की, ग्यानिन की जिह्वा पै विराजती।
गाजती भवानी भव्य भव-भोर हरनी जानि,
भगतन अरु मुमुच्छन भीर जै-जै पुकारती॥
पैनी दुख द्वन्द छैनी सुरग की नसैनी पाहि,
मन-भवन में भावना की आरती उतारती।
बजती उर तंत्री सर्व यन्त्री मंत्र दैनी मंजु,
हे बरबेस ! बरदे ! बर ! बन्दौ ब्रज-भारती॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पं० श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के—पत्र

—श्री रामचरण हयारण 'मित्र', साहित्य शिरोमणि

मानव के व्यक्तित्व और कृतित्व का सही स्वरूप उसके मित्रों को लिखे हुए निजी पत्रों में उभरता है। उनमें प्रसन्नता-अप्रसन्नता, आशा-निराशा, स्नेह-सहानुभूति, भय-संकोच, घृणा-आश्चर्य आदि के भाव चित्र यथार्थ में आपको अवलोकन करने को मिलेंगे।

वास्तव में निजी पत्र व्यक्ति का स्वभाव, प्रभाव और व्यक्तित्व जानने में बड़े ही उपयोगी सिद्ध होते हैं। किसी लेखक या कवि का स्वरूप जो मंच या पत्र पत्रिकाओं में उसके लेख या कविता द्वारा दृष्टिगत होता है प्राय: वह उसके मित्रों के पत्रों से भिन्न होता है।

आपको स्वयं अनुभव होगा कि जब कोई कवि मञ्च पर वीर भाव या सच्चरित्रता का चित्र जनता के सन्मुख उपस्थित कर आदर्श का सन्देश देता है वही कविता पाठ के प्रथम या पश्चात् मित्रों या संयोजक से बढ़िया शराब की फरमायश करते दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त जब वही कवि अपने मित्रों को पत्र लिखता है तब उसका भाव चित्र उन दोनों स्वरूपों से विलग दृष्टिगत होता है।

इससे यह सिद्ध है कि निजी पत्र लिखते समय का व्यक्ति मञ्च पर के व्यक्ति से भिन्न है। इसी दृष्टिकोण को रखते हुए मेरा विश्वास है कि जब तक मनुष्य के अन्त:करण के भाव वाह्य विचारों के अनुरूप नहीं हो जाते तब तक मानव को असफल ही कहा जा सकता है।

पं० बनारसीदास चतुर्वेदी का व्यक्तित्व और कृतित्व उनकी साहित्य साधना के अनुरूप ही उनके मित्रों को लिखे हुए निजी पत्रों में दृष्टिगत होता है। ऐसे उनके अनेक प्राप्त पत्रों में से मैं यहाँ केवल पाँच पत्र उपस्थित कर रहा हूँ जिनको हृदय के भावों की अमूल्य निधि कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

कुण्डेश्वर
१३-१०-३८

प्रियवर,

मेरा विचार आपको जतारा में पद्मसिंह पुस्तकालय के उद्घाटन के अवसर पर श्री व्यास जी के साथ बुलाने का है। उन्हें तो मऊ रानीपुर से जतारा आना होगा, आपको कौन से मार्ग से आने में सुविधा होगी ?

मैं जानता हूँ कि राज्य के आर्थिक सहायता के प्रश्न को आप अधिक महत्व नहीं देते, आप जैसे स्वाभिमानी के लिए यही उचित है, इसीलिए आपको बिना संकोच के कुण्डेश्वर पधारना चाहिए।

विनीत
बनारसी ास चतुर्वेदी,

मैं उनकी आज्ञा से जतारा कवि सम्मेलन में गया और साथ ही कुण्डेश्वर भी। यह मेरा श्रद्धेय चतुर्वेदी के दर्शन प्राप्त करने का प्रथम अवसर था। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि इस मनीषी के दिल ही दिल हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं उनके साथ तीन दिवस रहा, परन्तु उनको कभी स्व० सत्यनारायण के तो कभी स्व० पद्मसिंह जी के गुण गान करता ही बीतता।

सन् १९६१ में चतुर्वेदी जी दिल्ली में अस्वस्थ हो गये, मित्रों को चिन्ता हुई, किन्तु वह अस्वस्थ अवस्था में भी अपने कार्य में दृढ़ रहे जैसा उनके इस पत्र से भासित होता है।

प्रिय मित्र जी,

वन्दे।

आप लोगों की सद्भावना तथा शहीदों के आशीर्वाद से मुझे दीर्घायु प्राप्त होगी, यह मेरा दृढ़ विश्वास है। मेरे स्वास्थ्य के विषय में आप चिन्ता न करें। मुख्य काम यह हैं जिनको पूरा करना है :—

१—व्यास जी की सर्वोत्तम १०१ रचनायें उनके संस्मरण सहित, २—मुन्शी जी के संस्मरण जो प्रताप में छपे थे और मुन्शी जी के विषय में संस्मरण, ३—रसिकेन्द्र जी की श्रेष्ठ रचनायें १२८ पृष्ठों में।

अब की बार झांसी में आपके यहाँ व्यालू पक्की रही, और दक्षिणा में ढ़ाई सेर कठिया गेहूँ का आटा भी। कुछ बङ्गाली मिठाई तो रहेगी ही। लेखक होने पर भी मैंने जिजमानी नहीं छोड़ी है।

विनीत

बनारसीदास चतुर्वेदी

जैसा मैंने प्रथम उल्लेख किया कि श्री चतुर्वेदी जी सदैव दूसरों के गुण गायन करने में तल्लीन रहते हैं, इसका आभास आपको उनके इस पत्र से ज्ञात होगा।

फिरोजाबाद (आगरा)

प्रिय मित्र जी, २३-२-६२

आशीष !

कृपया अपनी वह कविता जिसमें पुत्र बधू द्वारा प्रातः काल में उठकर दही बिलौने इत्यादि का दृश्य अङ्कित किया गया है श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस गोरखपुर को भेज दीजिए, मैंने उसकी प्रशंसा में उन्हें लिख दिया है और उस कविता की एक प्रति अपने सुन्दर अक्षरों में मुझे भी भेजिए। अगर सुविधा हुई तो उसका ब्लाक बनवाकर 'आजकल' मैं छपवा दूँगा। यहाँ घर पर आराम करने आया हूँ।

विनीत

बनारसीदास चतुर्वेदी,

श्री चतुर्वेदी जी को जब अपने किसी मित्र के अस्वस्थ होने का समाचार प्राप्त होता है, तब वह अपना कष्ट भूल जाते हैं और उसकी चिन्ता में व्यस्त हो जाते हैं। सन् १९६२ की बात है कि मैं चि० चन्द्रकान्त के पास टाटानगर था। चीन ने भारत की सीमा पर आक्रमण किया, राष्ट्रीय विचार होने के कारण मेरे हृदय को ठेस पहुँची। फलस्वरूप मैं वहाँ की राष्ट्रीय सभाओं में भाग लेकर राष्ट्रीय कवितायें पढ़ने लगा जबकि मुझे कविता लिखने और पढ़ने के लिए डा० आर० एन० मिश्र, मेडिकल कालिज लखनऊ ने मना कर दिया था, क्योंकि मेरे मस्तिष्क की स्नायुऐं सन्

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१९२४ से सन् १९३५ तक राष्ट्रीय आन्दोलन में बिना माइक के हजारों की जन-सँख्या में कविता पाठ करने के कारण दुर्बल हो गई थीं।

२६ जनवरी को बारी-मैदान की राष्ट्रीय सभा में मैंने कुछ जोश में कविता पाठ किया, और जब घर वापिस आया तो दाहिनीं आँख में दर्द प्रारम्भ हुआ और जब दर्द बन्द न हुआ तब वहाँ के राजकीय अस्पताल के नेत्र विशेषज्ञों को दिखाया। उन्होंने कहा कि आपकी आँख में रोशनी ही नहीं है।

चि० चन्द्रकान्त को चिन्ता हुई और उसने श्री चतुर्वेदी जी को पत्र लिखा। श्री चतुर्वेदी जी ने शीघ्र प्रबन्ध कर कलकत्ता के श्री सीताराम जी सेकसरिया के लिए पत्र लिखा और दूसरा पत्र चि० चन्द्रकान्त को।

९९ नार्थ एव्यैन्यू
१३-२-६३

प्रिय चन्द्रकान्त जी,

आशीष !

मित्र जी के नेत्र कष्ट का हाल पढ़कर चिन्ता हुई। मेरा ख्याल है कि कलकत्ते में इलाज की उचित व्यवस्था हो जायेगी।

साथ का पत्र श्री सीताराम सेकसरिया के नाम है। वे कलकत्ते के अत्यन्त प्रतिष्ठित नागरिक हैं और मुझ पर उनकी बड़ी कृपा रही है।

इस पत्र को पेशगी में उनके पास भेज सकते हैं।

विनीत
बनारसीदास चतुर्वेदी,

मेरी इस नेत्र घटना से सभी मित्रों को चिन्ता हुई और उनके आशीर्वाद से मेरी आँख की रोशनी डा० मुस्तफी विस्टुपुर के इलाज से पुनः आगई।

सन् १९६५ में मुझे शान्ति-निकेतन के दीक्षान्त समारोह के कवि सम्मेलन में सम्मिलित होने का सुअवसर प्राप्त हुआ। शान्ति-निकेतन विश्व कवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की साकार मूर्ति का प्रतीक है। इसके पावन प्रांगण में राष्ट्रपिता गांधी की कुटी स्थापित है। समीप आम्र निकुंज की लहलहाती छाया में छात्र छात्राओं का विद्याध्ययन देख मन प्रसन्न हो उठा, परन्तु हृदय में यह ध्यान अवश्य आया कि यदि प्रकृति मां इस पुण्यस्थली के निकट एक सरिता को और प्रवाहित कर देती तो इस स्थल की रमणीयता और बढ़ जाती।

इस संदर्भ में मेरा ध्यान कुण्डेश्वर स्थित प्रशिक्षण विद्यालय की ओर गया, जो कि श्री चतुर्वेदी जी द्वारा निर्मित है, जहाँ प्रकृति देवी ने एक साथ दो सरिताओं 'जमड़ार और जामनेर' को इस पुण्यस्थली की रमणीयता बढ़ाने के लिए प्रवाहित किया है।

मैंने श्री चतुर्वेदी जी को शांति-निकेतन की चर्चा करते हुए तुलनात्मक दृष्टि से कुण्डेश्वर विद्यालय की छटा के सम्बन्ध में एक पत्र लिखा जिसका उन्होंने बड़े भावात्मक ढङ्ग से उत्तर मुझे इस पत्र में दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फिरोजाबाद
७-१-६५

प्रिय मित्र जी,

वन्दे !

कुण्डेश्वर में आश्रम को स्थापित करने की प्रेरणा मुझे गुरुदेव कवीन्द्र श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर से ही मिली थी। पर कहाँ गुरुदेव का शान्ति-निकेतन और कहाँ मेरा कुण्डेश्वर कुटीर! हां प्रकृति मां की देन कुण्डेश्वर को जो मिली है, वह शान्ति-निकेतन के लिए सर्वथा दुर्लभ है। दो नदियों का सङ्गम, जमड़ार तथा जामनेर का जल प्रपात, तथा दो वर्ग मील का मधुवन। जो कुछ कुण्डेश्वर में बन सका है उसका ९५ फीसदी श्रेय स्व० महाराज वीरसिंह जू देव को है, शेष ५ फीसदी में हम सब का हिस्सा है।

कल मुझे रसिकेन्द्र जी तथा व्यास जी की याद आगई। दोनों की शिकायत रही कि उनकी रचनाओं के संग्रह नहीं छपे। अपनों ने ही उन्हें नहीं पूँछा। क्या कहा जाय आधुनिक काल में बुन्देलखण्ड के छुठ भइयों की प्रायः उपेक्षा ही हुई है। स्व० व्यास जी के लिए आपने ही प्रशंसनीय कार्य किया है।

विनीत
बनारसीदास चतुर्वेदी

मेरा यह नम्र निवेदन है कि श्रद्देय बनारसीदास चतुर्वेदी के इन पत्रों से हम सब बुन्देलखण्ड के साहित्यिक प्रेरणा लेकर यहाँ के कवियों की रचनाओं को प्रकाश में लाने का प्रयत्न करें तो इस जनपद की बहुत बड़ी सेवा होगी।

ग्रीष्म

—श्री भगवान दत्त चतुर्वेदी

बिखर परी हैं कर प्रखर प्रभाकर की,
तपन लगी है भूमि गरम तये सी आज।
घटन लग्यौ है बारि तटिनी तड़ागन कौ,
बागन की छबि की छटा कौ भयौ छीन साज॥
कुञ्ज अति पुञ्जन की गुञ्जन बिहीन बनीं,
दीन बनी पिक की बिलीन सी भयी अवाज।
आज रितुराज के समाज कों दबाय देस-,
देसन में ग्रीसम ने अपुनों जमायौ राज॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बुन्देली का फाग-साहित्य

(एक शोध ग्रन्थ) (समीक्षा)

—डा० गनेशीलाल बुधौलिया

लेखक—पं० श्यामसुन्दर बादल
प्रकाशक—हिन्दी साहित्य परिषद राठ (हमीरपुर)
मुद्रक—दुलीचंद शास्त्री, मॉडर्न प्रिंटर्स हमीरपुर
पृष्ठ सं०—४४४
मूल्य—आठ रुपया

बुन्देलखंड के आचार्य कोटि के कवि तथा साहित्यकार श्री श्यामसुन्दर जी बादल का 'बुन्देली का फाग-साहित्य' बुन्देली के लोक-वार्ता साहित्य की एक शोध पूर्ण कृति है। इसके पीछे वर्षों की साधना निहित है। बादल जी इस जनपद के ऐसे सुधी हैं जिन्होंने इस क्षेत्र में शोध करके एक सवथा अभिनव प्रयास किया है। उनकी इस खोज से बुन्देली लोक-साहित्य के उद्यान में बहुत सी अनजानी सुन्दर कोकिलें कुहुकने लगी हैं। फाग एक लोक गायकी है इस विषय का विवेचन इस निबन्ध में बड़े ही शास्त्रीय और मौलिक ढंग से किया गया है। ग्रन्थ का गठन ऐसा सुन्दर हुआ है कि उसके पठन में जी नहीं ऊबता। उनकी विद्वत्ता और प्रतिभा के निखार का यह ग्रन्थ सुन्दर नमूना है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने इस शोध पूर्ण मौलिक निबन्ध पर साहित्य महोपाध्याय की उपाधि बादल जी को प्रदान की थी।

फाग-साहित्य बुन्देली वाङ्मय का एक ऋद्ध और सम्पन्न अंग है। बुन्देली जन-जीवन में यह लोक-गायिकी बहुत ही लोक प्रिय है। बसंत के आगमन के साथ ही सारे जनपद में इन लोक-गीतों का मधुर-मदिर स्वर गूँज उठता है। इन गीतों में साहित्य-संगीत और नृत्य की तरल त्रिवेणी तरगित हो उठती है। लोक वाद्यों और लोक नृत्य की संगति में लोक नर-नारियों के कंठों से ये गीत मुखरित होने लगते हैं। फागुन के मतवाले महीने भर इन गीतों की रसीली तानें जनपद के वायुमंडल में गूँजती रहती हैं।

बुन्देली फाग साहित्य में इन गीतों का वैज्ञानिक विवेचन किया गया है और इनको-शास्त्रीय आधार पर प्रतिष्ठित किया गया है। इन गीतों के काव्य-सौन्दर्य के साथ-साथ इनका साहित्यिक मूल्यांकन किया गयाहै। इस हेतु इस ग्रन्थ को बारह अध्यायों में विभाजित किया गया है।

अध्याय १ में बुन्देली के फाग साहित्य की उपेक्षा और उसके उद्धार के सम्बन्ध में विचार किया गया है। हमारी बोझीली विद्वत्ता के अहंकार के कारण इस साहित्य की उपेक्षा की गई है और उसके उद्धार के प्रयत्न के सम्बन्ध में पं० गौरीशंकर द्विवेदी, कृष्णानन्द गुप्त, महाराज ओरछेश, बनारसीदास चतुर्वेदी, अम्बिका प्रसाद दिव्य आदि का नाम उल्लिखित है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अध्याय २ में फाग साहित्य किसे कहते हैं। इसकी शास्त्रीय व्याख्या की गई है। उसके मूलउद्गम तथा उसकी परिभाषा पर विचार किया गया है। "सामान्यतः बुन्देली फाग गीत बुन्देलखंड जनपद के लोक-गीत हैं जो बसन्तोत्सव, होलिकोत्सव, फागोत्सव या रंगोत्सव पर गाए जाते हैं .....।

अध्याय ३ में फाग साहित्य का आविर्भाव तथा विकास शीर्षक से देश के विभिन्न अंचलों के लोक गीतों की पृष्ठभूमि में फाग गीतों की आत्मा को स्पर्श करने का प्रयास है। एक रसिया देखिए—

राधा खेलें होरी हो, मनमोहन के साथ मोरे रसिया।
कै मन केसर गारी हो, कै मन उड़त गुलाल मोरे रसिया।
नौ मन केसर गारी हो, दस मन उड़त गुलाल मोरे रसिया।
कौना को चूनर भींजी हो, कौना की पंचरंग पाग मोरे रसिया।
राधा को चूनर भींजी हो, कृस्ना की पंचरंग पाग मोरे रसिया।
कैसे कै सूखे चूनर हो, कैसे कैं पंचरंग पाग मोरे रसिया।
लहरन सूखै चूनर हो, झुकवन पंचरंग पाग मोरे रसिया।

अध्याय ४ में फाग के गीत के शास्त्रीय आधार पर विचार किया गया है। इस अध्याय के अन्तर्गत बुन्देली फागों के मुख्य रूप, फाग और संगीत शास्त्र, डिढ़ खुरपाऊ फाग, चौकड़िया फाग, शास्त्रीय संगीत और लोक संगीत की अन्योन्याश्रयता का उल्लेख है। डिड़खुरपाऊ फाग में खम्माच थाट, खड़ी फाग में खम्माच और यमन तथा चौकड़िया में काफी थाट के स्वर लगते हैं। ये फाग गीत प्रायः सप्तक के पूर्वाङ्ग स्वरों में ही गाते हैं। इनके गाने का महत्व एकाकी गायन में न होकर समवेत ढङ्ग से गाने में है।

अध्याय ५ में फाग साहित्य की लोक प्रियता के कारणों पर प्रकाश डाला गया है। इन फाग गीतों में चौकड़िया फाग अधिक लोकप्रिय है। इस फाग के जन्मदाता बुन्देली लोक कवि ईसुरी माने जाते हैं। ईसुरी की फागों में बुन्देली जन-जीवन तथा लोक संस्कृति का बड़ा सरस, मधुर और मादक चित्रण है। भाषा ठेठ बुन्देली होने के साथ ही कोमल तथा प्रसाद गुण युक्त है और यही कारण है कि ईसुरी की इन फागों का व्यापक प्रचार है। शृंगार रस प्रधान ये फागें श्लील और अश्लील मर्यादाओं से परे जन मानस की विविध गहराईयों का उद्घाटन करती हैं। इन गीतों के साथ लोक वाद्य, लोक संगीत तथा लोक नृत्य का समन्वय भी इन गीतों की लोक प्रियता का कारण है।

अध्याय ६ में फाग गीतों का साहित्यिक दृष्टि से अध्ययन किया गया है। इसमें फाग गीतों के कला पक्ष पर, उसके बहिरंग पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही फागों में लोक जीवन की मीमांसा भी की गई है।

एक आनन्द संमोहा ऊढ़ा परकीया किसी धृष्ट नायक के साथ सम्पन्न रति का किसी अन्तरंग सखी से वर्णन कर रही है। श्लीलता के बंधनों से मुक्त रोमांस से परिपूर्ण यह फाग देखिए—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लै गओ मजा हमारे तन कौ, छैला बाला पन कौ।
घूंघट खोल कपोलन ऊपर दै गयौ दाग दसन कौ।
धर गओ हाथ उरोजन ऊपर, हर गओ मान जुबन कौ।
गओ गढ़ टूट दुकूल खोल तन, लओ रस लूट मदन कौ।
'गंगाधर' रै गओ बालम खां, खाली कोठा धन कौ।

अनन्वय अलंकार इस फाग में कैसा मूर्तिमान हो उठा है—

हम खां मिलो न हम सों कोई, ढूँढ़ फिरे हग दोई।
जी सें मिले कपट न राखौ, काँ ऐसो दिल होई।
अपने अपने सब मतलब के, मानस बड़ो अबोई।
'ईसुर' होंत कात जो मिथ्या, ई को राम बिचोई।

अध्याय ७ में लोक-जीवन का प्रतिबिम्ब है। फाग साहित्य लोक गीतों का एक सरस और मधुर अंग है और उसमें भी बुन्देली फाग गीतों का विशिष्ट स्थान है। ब्रज का पड़ौसी होने के कारण बुन्देली फाग साहित्य में ब्रज के लोक साहित्य तथा वहाँ की लोक-संस्कृति का मिश्रण है। भगवान कृष्ण की लीला स्थली के कारण ब्रज जहाँ गौरवान्वित हुआ है वहाँ भगवान की लीलाओं से सम्बन्धित अनेक भाव धाराओं ने बुन्देली लोक साहित्य की भाव भूमि को अभिसिंचित किया है। लोक जीवन से सम्बन्धित फाग देखिए—

नौने नई नजर के मारें, राती रजउ हमारें।
रोजउ रोज झरैया गुनियाँ, दस दस बेरा झारें।
मन्त्र पढ़ा कें लट बंधवाई, जंत्र गरे में डारें।
विधना उदना अलफ बचावै, जिदना पटिया पारें।
'ईसुर' रोजऊ रजउ के ऊपर, राई नौंन उतारें।

जन जीवन में ऐसे लोक विश्वास आज भी प्रचलित हैं।

अध्याय ८—'प्राचीन तथा अर्वाचीन फाग-गीतों के विभिन्न स्वरूपों के मूल में जो एक समान आधार मिलता है उसी का स्पष्टीकरण इस अध्याय में किया गया है। 'नरेन्द्र छंद' का परमार्जित रूप ईसुरी छन्द ही चौकड़िया फाग है।

अध्याय ९—में परिवर्तित धारा में रसराज की रक्षा पर विचार किया गया है। विप्रलम्भ शृंगार की एक सहज फाग देखिए—

पीतम विलम विदेश रहे री, नैनन नीर बहे री।
मोय अकेलि निबल पिय बिन लख, अंग अनंग दहे री।
बागन, बनन, बंगलन बेलन कोयल सबद करे री।
'ईसुर' ऐसी विकल वाम भई सब सुख बिसर गई री।

अध्याय १०—में वृहत् त्रयी के तीन प्रमुख कवियों, ईसुरी गंगाधर व्यास और ख्यालीराम के व्यक्तित्व और कृतित्व पर सम्यक् रूप से विचार किया गया है। ये तीनों लोक कवि फाग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साहित्य के जीवनाधार हैं। ईसुरी के जीवन पर शोध पूर्ण तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं और उनके सम्बन्ध में चले आए कुछ विश्वासों का खंडन किया गया है।

अध्याय ११ में फाग साहित्य के अन्य कवि लगभग सत्तर का संक्षिप्त परिचय तथा उनके काव्य पर विचार किया गया है।

और अन्तिम अध्याय १२ में फाग साहित्य का भाषा विज्ञान की दृष्टि से अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसमें बुन्देली का व्याकरण दिया गया है और बुन्देली भाषा भाषी क्षेत्र का मान चित्र भी दिया हुआ है।

ग्रन्थ के अन्त में उसमें प्रयुक्त कठिन बुन्देली शब्दों का एक शब्द कोष भी दिया गया है। इससे पाठकों को समझने में सुविधा प्राप्त होती है।

इस शोध ग्रन्थ में लेखक का प्रयास कहाँ तक सार्थक हुआ है इस सम्बन्ध में कुछ मनीषी विद्वानों की सम्मतियाँ यहाँ दी जा रही हैं।

राजस्थान के राज्यपाल माननीय डा० सम्पूर्णानन्द जी ने लिखा है—

"इस पुस्तक को लिखकर श्री श्यामसुन्दर बादल ने बड़ा उपयोगी कार्य किया है। उन्होंने एक सप्रमाण जीवित साहित्य को सामने रखा है जिसको हम भूलते जाते हैं·····।

श्यामसुन्दर जी की यह रचना फागों का संग्रह ही नहीं इसमें ऐसे विद्वत्तापूर्ण लेख हैं जो लोक साहित्य विशेषतः बुन्देलखंडी साहित्य पर कई दृष्टियों से प्रकाश डालते हैं और उसको समझने में सहायता देते हैं।

स्व० डा० वासुदेवशरण जी अग्रवाल की सम्मति है—

"यह ग्रन्थ शोध ग्रन्थ के रूप में तैयार किया गया था और इसमें शोध के वे सभी गुण विद्यमान हैं जो ऐसे प्रबन्ध में होने चाहिए·····बुन्देलखंड की आत्मा का यह एक दर्पण है—फाग साहित्य में यह नई कड़ी स्वागत के योग्य है।"

बन्धुभावना

[बालमुकुन्द चतुर्वेदी 'मुकुन्द']

दूर हो हमारी संकुचितता की मनोवृती,
खंड खंड खंडन बिखडन विलय होइ।
एक एकताई सब ही कौं सुखदायी होइ,
जन जन मन में उदारता उदय होइ॥
मुदित 'मुकुन्द' बंधु भावना सनेह भरी,
विश्व में हमारौ राष्ट्र सर्व शोभा मय होइ।
मिटकैं अभाव नेह भाव भरैं आपुस में,
जय होइ भारत स्वतंत्रता की जय होइ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हर्षोत्तर भारत में समाज की दशा

—श्री वृन्दावनदास

सम्राट हर्षवर्द्धन की मृत्यु ६४८ ई० में हुई थी। परन्तु उसके १००, १५० वर्ष पहिले से ही अर्थात् ५०० ई० से १००० ई० तक भारत पर अरबों के आक्रमण के अतिरिक्त कोई अन्य विदेशी आक्रमण नहीं हुआ था। सामान्य जनता यवन, शक, कुषाण हूणों के आक्रमणों को भूल गई। राजाओं में सामान्य रूप से यह धारणा बद्धमूल हो गई कि भारत पर कोई विदेशी आक्रमण नहीं हो सकता, वह अजेय है। उनमें इस भावना ने अहङ्कार उत्पन्न कर दिया। अपना अहंभाव शान्त करने के लिए वे अपने ही देश के पड़ौसी राजाओं के साथ निरन्तर युद्ध करते रहते।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के शासन काल में भारत के अन्तिम गणराज्य नष्ट हो गये। गणराज्यों की प्रजा राजकीय मामलों में दिलचस्पी लेती थी और उसकी भावनाऐं राष्ट्रीयता से ओत प्रोत रहती थीं। गणराज्यों की समाप्ति के साथ प्रजा में राष्ट्रीय भावनाओं का अन्त हो गया। वह शिथिलताग्रस्त होकर पृथक् सी हो गई और उसमें शासन के प्रति उदासीनता की भावना उत्पन्न हो गई। ५०० ई० के पूर्व यवन, शक, कुषाण और हूणों के आक्रमणों से जनता में राष्ट्रीय चेतना बनी रहती थी। जिन वीर राजाओं ने उन आक्रमणकारियों को पराजय का मुंह दिखाया उनके साथ प्रजा ने सहानुभूति प्रदर्शित की और अपना सहयोग प्रदान किया। दुर्द्धर्ष शत्रुओं पर विजयश्री प्राप्त करने के कारण कुछ राजाओं का प्रभाव तो इतना बढ़ा कि वे चक्रवर्ती सम्राट हो गये। विदेशी आक्रमणों का प्रतिरोध जनता के देशप्रेम की भावना से होता था। वह भावना अब लुप्त होने लगी थी। यद्यपि ग्राम सभाऐं अब भी पूर्ववत् कार्य कर रही थीं परन्तु उनका कार्यक्षेत्र स्थानीय था और देश की शासन व्यवस्था से उनका कोई सबन्ध न था।

समाज

सातवीं शताब्दी के पहिले एक व्यक्ति एक वर्ण से दूसरे वर्ण में प्रविष्ट हो सकता था। लाखों की संख्या में शक, हूण, यवन हिन्दूधर्म में प्रविष्ट हो गये। हिन्दूधर्म में विदेशियों को आत्मासत् करने की अपूर्व क्षमता थी। परन्तु सातवीं सदी से हिन्दुओं के सभी वर्णों और जातिओं में संकीर्णता आ रही थी। लोग अपने वर्ण अथवा जाति की परिधि में रहना सुखकर समझने लगे। परिणाम यह हुआ कि छोटी-छोटी इकाइयाँ बनने लगीं। इन इकाइयों में से प्रत्येक के नियम, उपनियम अलग-अलग बनने लगे। इस प्रकार लोगों में एक दूसरे से पृथक् रहने की प्रवृत्ति बढ़ने लगी। समष्टि भाव के नष्ट होने से समाज का विघटन शुरू हो गया। प्रत्यक्ष है कि इस प्रकार का असङ्गठित समाज किसी व्यवस्थित शत्रु का सामना नहीं कर सकता था।

इस समय तक ब्राह्मणों की स्थिति अत्यन्त प्रतिष्ठापूर्ण हो चुकी थी। वे वेद और शास्त्र के ज्ञाता थे। वे वेद आदि धर्मग्रन्थ क्षत्रियों को तो पढ़ाते थे परन्तु वैश्यों और शूद्रों को उनका सुनना भी वर्जित था। इससे जातीय अभिमान और द्वेषपूर्ण भेदभाव बढ़ने लगा। इस प्रकार के भेद-भाव और अनर्हताऐं उस समय के सबसे बड़े दोष और अभिशाप थे। इनसे पार्थक्य की भावना बढ़ी और राष्ट्रीय उन्नति में बाधा आई। समाज असङ्गठित होकर छोटी-छोटी इकाइयों में बंट गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुलोम विवाह बहुत अर्से तक प्रचलित रहे। ब्राह्मण क्षत्रियों की लड़कियों से शादी कर लेते थे। राजशेखर ने चाहमान क्षत्रिय-कन्या अवन्ति सुन्दरी के साथ अपना विवाह किया। काश्मीर के राजा संग्रामराज ने अपनी बहिन का विवाह एक ब्राह्मण के साथ किया। राजवंशों में विभिन्न धर्मों की कन्याओं के साथ विवाह वर्जित नहीं था। गोविन्द चन्द्र गाहड़वाल ने बौद्ध कन्या कुमार देवी के साथ अपना विवाह किया। मुस्लिम इतिहासकार अलबरूनी (९७९—१०३९ ई०) वे तत्कालीन समाज की दशा का अच्छा चित्रण किया है। वह कहता है कि हिन्दुओं में चार जातियाँ आरम्भ से ही हैं। वह चार जातियों के अतिरिक्त आठ प्रकार के अन्त्यजों का भी उल्लेख करता है। अलबरूनी ने लिखा है कि चार जातियों के लोग रहते तो एक गाँव में ही पास-पास हैं परन्तु एक जाति के लोग दूसरी जाति के लोगों के साथ खान-पान नहीं रखते। अलबरूनी तो इसी बाधा को मुसलमानों को हिन्दुओं के निकट न आने का मुख्य कारण समझता है।

इस समय की एक बात बड़ी महत्वपूर्ण है। जो लोग बलात् धर्म परिवर्तन द्वारा मुसलमान बना लिए गए थे उन्हें फिर हिन्दू बनने में कोई बाधा उपस्थित नहीं हुई। सिन्ध में अरबों के आक्रमण के बाद कुछ हिन्दू मुसलमान बना लिए गए थे। देवल ने उनकी शुद्धि की अनुमति देदी। बीस वर्ष के अन्दर के सब लोग कुछ व्यवस्था कर देने के पश्चात् पुनः हिन्दू बना लिए गये। एक राजा ने भी मुसलमान होने के बाद पुनः हिन्दू धर्म अङ्गीकार कर लिया।

उस काल में स्त्रियों की दशा बहुत अच्छी थी। राजवंश की स्त्रियों में पर्दा प्रथा न थी। दरबारों में जन-साधारण रानियों को देख सकता था। उस काल की कई विदुषी महिलाओं के नाम उल्लेखनीय हैं। मण्डन मिश्र की स्त्री एक महान् विदुषी थी जिसने शङ्कराचार्य से शास्त्रार्थ किया था। लीलावती को गणित का असाधारण ज्ञान था। इस काल में कई महिलाएँ प्रान्तीय राज्यों की शासिकाएँ थीं। काश्मीर में क्षेमगुप्त की स्त्री रानी दिद्दा ने ९८० से लेकर १००३ ई० तक राज्य किया। काकतीय रानी रुद्राम्बा ने सन् १२६१ से १२९० तक राज्य किया। सोमेश्वर प्रथम की पत्नी मैलादेवी बनवासी प्रान्त की शासिका थी। विक्रमादित्य छठे की रानी लक्ष्मीदेवी सन् १०९५ ई० में १८ अग्रहारों पर शासन करती थी। अलबरूनी लिखता है कि हिन्दुओं में बाल विवाह प्रचलित हो गया था। दास प्रथा का भी मुस्लिम इतिहासकार द्वारा उल्लेख किया गया था।

धर्म

हिन्दू राजाओं में धार्मिक सहिष्णुता प्रचुर मात्रा में विद्यमान थी। राजा गोविन्द चन्द्र गाहड़वाल ने बौद्ध-बिहारों को कई गाँव दान में दिए। चोल राजा राजेन्द्र प्रथम कुलोत्तुङ्ग ने बौद्ध बिहारों के संरक्षणार्थ अतुल धन राशि दान में दी। चालुक्य राजागण जैन धर्म को आदर की दृष्टि से देखते थे। राष्ट्रकूट राजे अमोघवर्ष प्रथम, इन्द्र चतुर्थ, कृष्ण द्वितीय, इन्द्र तृतीय, जैन-धर्म को भी आश्रय प्रदान करते थे। गङ्ग राजागण ने जैन आचार्यों को संरक्षण दिया। महान् विट्टिग विष्णु वर्द्धन होयसल (सन् १११०—४० ई०) पहिले जैन का था फिर रामानुजाचार्य ने उसे वैष्णव धर्म में दीक्षित कर दिया। कुमारपाल के राज्य में हेमचन्द्र जैन का बड़ा प्रभाव था।

गुप्त काल में समाज में जो परिवर्तन हुए उनके फलस्वरूप बौद्ध धर्म का ह्रास होने लगा। इस काल में ब्राह्मणों ने जिस वैदिक धर्म का पुनरुत्थान किया उसका स्वरूप था पौराणिक धर्म

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और भक्ति मार्ग की सरस धारा का प्रवाह। वैष्णव, शैव और शाक्त मत भक्ति-मार्ग के संप्रदाय थे। गुप्त काल से ही भक्तिमार्ग ने जनता में अपूर्व जागरण उत्पन्न कर दिया और उसमें उत्साह की लहर दौड़ने लगी। विष्णु और शिव उपासना के मुख्य केन्द्र बने। ब्रह्मा, सूर्य, गणेश, कार्तिकेय, इन्द्र, अग्नि, यम, वरुण, मरुत आदि देवगण भी वन्दनीय थे। आधुनिक हिन्दू धर्म के स्वरूप का निर्माण उसी काल में हुआ। देवियों में मातृका, दुर्गा, लक्ष्मी आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। मन्दिरों के निर्माण और उनमें देवमूर्तियों के प्रतिष्ठापन का कार्य बड़ी तेजी से चला। निस्संदेह यज्ञों की अपेक्षा उपासना पद्धति और भक्ति मार्ग का अनुसरण अधिक सरल थे। इस कारण यज्ञों का प्रचलन कम हो गया। यज्ञों में विधि-विधान का बड़ा झंझट था। यज्ञ के सब विधानों को पूर्ण करने के लिए यजमान की अवस्था लम्बी होना अपेक्षित था। अलबरूनी कहता है कि इस काल में अवस्था कम होती थी इसलिए यज्ञों का किया जाना बन्द सा हो गया और यज्ञों का स्थान दान ने लिया अब यज्ञ की अपेक्षा दान मोक्ष प्राप्ति का सुगम मार्ग समझा जाने लगा।

साधारणतया चोल तथा दक्षिण के अन्य शासक सभी धर्मों के प्रति सहिष्णु थे और वैष्णव अलवार तथा शैव नयनमार दोनों को अपने सिद्धान्तों का प्रचार करने की छूट थी। धर्मोपदेशकों ने प्रचलित धर्मों में अपने उपदेशों द्वारा एक नवीन चेतना उत्पन्न कर दी। कुमारिल भट्ट, शङ्कराचार्य, रामानुजाचार्य तथा मध्वाचार्य जैसे महान् पुरुष दक्षिण भारत की देन थे। उन्होंने अपने आत्मबल एवं पाण्डित्य के द्वारा हिन्दू धर्म को एक जनप्रिय मोड़ दिया। उनके व्यक्तित्व की छाप हिन्दू धर्म पर सदा के लिए अङ्कित रहेगी।

सातवीं शताब्दी में ह्वेनसङ्ग ने कई सौ सङ्घाराम और दस हजार भिक्षु देखे। पल्लव राज्य में बौद्ध धर्म बहुत काल तक चलता रहा। आगे चल कर बौद्ध धर्म के मूल स्वरूप में एक विराट परिवर्तन आ गया था और वह इतना अधिक तान्त्रिक हो गया कि उसकी मौलिकता नष्ट सी हो गई प्रतीत होती थी। भिक्षु लोग विलासी हो गए। भिक्षुणियों के सान्निध्य से व्यभिचार की घटनायें सङ्घ में व्याप्त होने लगीं।

नवीं शताब्दी में वैष्णव धर्म में भी बाह्याडम्बर और भ्रष्टाचार का समावेश होने लगा। वैष्णव सम्प्रदाय में गोपी-प्रसङ्ग, अंतरङ्ग समाज, शैव सम्प्रदाय में पाशुपत, कापालिक और अघोरपंथ, शाक्त संप्रदाय में भैरवी चक्र योगियों में सिद्धि मार्ग आदि कुप्रथाओं ने धार्मिक क्रियाओं में अनैतिकता उत्पन्न कर दी।

काश्मीर, उड़ीसा, बङ्गाल और आसाम का स्वरूप तान्त्रिक हो गया। उसके कई सम्प्रदाय वाम मार्ग की ओर उन्मुख हो गये, जिनमें पञ्च मकारों—मदिरा, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन-को धर्म के नाम पर मान्यता प्राप्त हुई।

शङ्कराचार्य द्वारा प्रतिपादित वेदान्तमार्ग ने प्रचलित धर्म में युगान्तरकारी प्रभाव उत्पन्न किया। शङ्कराचार्य ने भारत के चार कोनों में चार मठ स्थापित किये। उत्तर हिमालय में बदरिकाश्रम, दक्षिण में मैसूर के अन्तर्गत शृंगेरी, पूर्व के उड़ीसा प्रान्त में पुरी और पश्चिम के सुराष्ट्र प्रदेश में द्वारका विशेष उल्लेखनीय हैं। इन मठों के अधिष्ठाता परम्परागत शङ्कराचार्य कहलाये। उनका मुख्य कार्य वेदान्त का प्रचार करना था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शासन-व्यवस्था

यद्यपि राजागण सदैव ही परस्पर युद्ध रत रहते थे, सरकारें सुसङ्गठित थी । युद्ध जन्य परिस्थितियों का शासन के प्रबन्ध पर बहुत कम प्रभाव पड़ता था । संघर्ष उत्तराधिकार सम्बन्धी भी हो जाते थे परन्तु इन सङ्घर्षों से प्रशासन-कार्य अप्रभावित रहता था । यद्यपि राजनीतिक दृष्टि-कोण से स्थितियाँ शान्तिपूर्ण न थी तथापि पाल, चोल और पूर्वी चालुक्य राजागण पूरी चार शताब्दियों तक अपना शासन स्थिर रखने में समर्थ रहे । प्रतीहारों, राष्ट्रकूटों और पश्चिम चालुक्यों में से प्रत्येक ने दो शताब्दी से ऊपर राज्य किया । उस काल में यातायात और परिवहन के साधन सीमित थे फिर भी सुदूर प्रान्तों तक फैला हुआ शासन एक सूत्र में बँधा रहा यह तत्कालीन प्रशासनिक दक्षता का द्योतक है ।

गुप्त पूर्व काल में अधिकारियों के पदों का जो नामकरण था उसमें अब कुछ भिन्नता आगई थी परन्तु अधिकारियों के कर्तव्य पूर्ववत् ही थे । सब राज्यों में शासन-यन्त्र उसी प्रकार का था । राज्य कई प्रान्तों में विभक्त था । उत्तर में प्रान्त को भुक्ति और दक्षिण में मण्डलम् कहते थे । प्रान्त विषय या भोगों में विभक्त था । कोट्टम या बलनाडु दक्षिण में मण्डल के भाग हुआ करते थे । विषय में कई अधिष्ठान होते थे । दक्षिण में यह नाडु कहलाते थे । अधिष्ठान ग्राम समूहों में बँटा होता था । ग्राम समूह को उत्तर में अग्रहार और दक्षिण में कुर्रम कहते थे । सबसे नीचे की इकाई ग्राम थी । शासन यन्त्र को संचालित करने के लिए बहुत से छोटे बड़े केन्द्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय कर्मचारीगण थे ।

साधारणतया राजा का ज्येष्ठ पुत्र ही उसका उत्तराधिकारी था इस लिये शासन के निर्वाचन का कोई प्रश्न ही न था । कभी ज्येष्ठ पुत्र अयोग्य होता अथवा कनिष्ठ पुत्र उससे अपेक्षाकृत अधिक योग्य होता तो उत्तराधिकार राजा के छोटे पुत्र को प्राप्त हो जाता था ।

जनता द्वारा राजा के निर्वाचन की घटनायें बहुत ही क्वचित् होती थीं । सन् ९३९ ई० में शूरवर्मन की मृत्यु के उपरान्त ब्राह्मणों के एक सम्मेलन ने यशःकर नाम के व्यक्ति को काश्मीर का राजा निर्वाचित किया । आठवीं शताब्दी में राजकीय विप्लवों से पीड़ित जनता ने बङ्गाल में गोपाल नामक व्यक्ति को वहाँ का राजा घोषित किया । राजा लोग बड़े ठाठ-बाट से रहते थे । उनकी स्वच्छन्दता और निरंकुशता अबाध थी । यद्यपि उस काल में मन्त्रियों और अमात्यों का का अस्तित्व था परन्तु ऐसी किसी बलशालिनी मन्त्रि परिषद् का उल्लेख नहीं मिलता जो राजा की स्वच्छन्दता अथवा निरंकुशता पर नियन्त्रण रख सके । ऐसे मन्त्री बहुत कम होते थे जो निर्भीकता पूर्वक राजा को परामर्श दें, कदाचित् वे राजा की हाँ में हाँ मिलाकर अपना पद सुरक्षित रखना अधिक उचित समझते थे । इस काल में मन्त्री लोग अधिकतर निर्बल और राजा के भय से त्रस्त हुआ करते थे यद्यपि कुछ उदाहरण दृढ़ प्रतिज्ञ, प्रतिभाशाली और उत्कट राज्य भक्ति से परिपूर्ण ऐसे महान् व्यक्तियों के भी मिलते हैं जिन्होंने बड़ी दक्षता से मन्त्रिपदों को सुशोभित किया ।

बहुधा राजा लोग युद्ध में जीते हुए राज्य को अपने राज्य में नहीं मिलाते थे । विजेता ऐसा करना धर्म और नीति के विरुद्ध समझता था । विजेता द्वारा विजित राज्य पराजित राजवंश के किसी योग्य व्यक्ति को सौंप दिया जाता था और वह उस राज्य को विजेता के नाम पर उसके एक सामन्त की स्थिति में चलाता था । मनु और कौटिल्य दोनों का ही यह मत था कि विजित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राज्य पराजित राजवंश को ही सौंपा जाय। पराजित राजा द्वारा विजेता की प्रभुसत्ता स्वीकार कर लेना ही यथेष्ट था। राजवंशों का उन्मूलन स्थानीय प्रजा को सह्य न था। कभी-कभी कुछ साम्राज्यवादी शक्तियों ने विजित प्रदेशों को अपने राज्य में मिला लेने की चेष्टा की परन्तु इसमें उन्हें अधिक सफलता न मिली।

सामन्त अथवा महासामन्त युद्ध में सेना लेकर अपने स्वामी के साथ जाते थे। उनका कर्तव्य था कि सुरक्षा के लिए पर्याप्त सेना रक्खें। इस विधान के कारण प्रभुओं में उपयुक्त परिमाण में सेना रखने की प्रवृत्ति कम होती गई। वे सामन्तों पर निर्भर रहने लगे। यह व्यवस्था आगे चलकर अभिशाप सिद्ध हुई। जब बाहरी शत्रुओं ने भारत पर आक्रमण किया तब राजाओं को इस घातक व्यवस्था का परिणाम भुगतना पड़ा।

शान्ति-सुरक्षा

उस काल में शान्ति सुरक्षा का बहुत ध्यान रक्खा जाता था। राजाओं की वैदेशिक नीति तो युद्धप्रियता से प्रभावित थी ही परन्तु शान्ति एवं सुरक्षा उत्तम प्रकार की गृह नीति की परिचायक थी। इतिहासकार अल सुलैमान प्रतीहार साम्राज्य में फैली हुई शान्ति एवं सुरक्षा से बहुत प्रभावित हुआ। उसने लिखा है, "भारत में ऐसा कोई राज्य नहीं है जो डाकुओं से इससे अधिक निरापद हो।" इससे दो शताब्दी पूर्व जब हुएनसांग भारत में आया था तो उसे डाकुओं से बड़ा तंग होना पड़ा था।

कर-पद्धति

राजकीय आय का प्रमुख माध्यम भूमि कर था। भूमि कर का निर्धारण करते समय भूमि का उपजाऊपन, सिंचाई सम्बन्धी साधन और राज्य की आर्थिक कठिनाइयों का विचार रक्खा जाता था। सामान्यतया कर की प्राप्ति उपज के रूप में की जाती थी। कभी-कभी कर नकद रुपये के रूप में भी उगाहा जाता था। भूमि की नाप समय-समय पर की जाती थी और जोत का हिसाब भी रक्खा जाता था।

समान व्यवसाय में लगे हुए लोग अपनी अलग श्रेणी या निकाय बनाते थे जिनके द्वारा उनके धन्धे का नियमन होता था। प्रत्येक श्रेणी का प्रमुख अलग होता था। ये श्रेणियाँ कभी कभी बैंक का काम भी करती थी। श्रेणियाँ मन्दिरों के सुचारु रूप से संचालन के निमित्त चन्दा भी करती थीं। श्रेणियाँ निश्चित ब्याज की दर पर धन जमा करती थीं। श्रेणियों के कार्यकलाप में शासन का हस्तक्षेप नगण्य था। समाज में अनुशासन बनाये रखने में श्रेणियों की भूमिका महत्वपूर्ण थी।

जन हित के निर्माण कार्य

जनता की सुख समृद्धि के लिए अनेक निर्माण-कार्य भी सम्पन्न हुए। चोल राजाओं ने बड़ी बड़ी सड़कों का निर्माण कराया। इससे व्यापारिक सुविधाऐं बढ़ीं और सेना के लिए यातायात के मार्ग खुले। इन राजाओं ने अनेकों कुओं और तालाबों का निर्माण कराया, कावेरी पर पुल बनवाया तथा नहरी व्यवस्था ठीक कराई। गंगाई कोण्डचोलपुरम् में कृत्रिम झील खुदवाई जो कोलेरून और वल्लर नदियों के जल से परिपूर्ण की गई। चन्देलों ने महोबा में मदनसागर और परमारों ने धार में मुंजसागर का निर्माण करवाया। काश्मीर में महाराज अवन्ति वर्मन के मन्त्री सुय्य ने अनेकों नहरें बनवाईं जिनसे वहाँ के लोग सिंचाई की सुविधा के कारण समृद्ध हो गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भाषा और साहित्य

प्राय: ग्यारहवीं सदी तक सभी महत्वपूर्ण ग्रन्थ संस्कृत में लिखे गये। कई राजागण ऐसे हुए जिन्होंने स्वयं साहित्य सृजन किया, वे सामान्यतया विद्वानों और कलाकारों को प्रश्रय देते थे। जिन राजाओं ने स्वयं साहित्यिक रचनाऐं कीं उनकी संक्षिप्त नामावली इस प्रकार है :—

राजा का नाम	कृति
बल्लभ सेन	दान-सागर, अद्भुत सागर।
राजा भोज (परमार)... ...	आयुर्वेद सर्वस्व, राज मृगांक, व्यवहार समुच्चय, शब्दानुशासन, समरांगण सूत्रधार, सरस्वती-कण्ठाभरण, नाम मालिका, युक्ति कल्पतरु।
अमोघवर्ष प्रथम (राष्ट्रकूट) —	कविराज मार्ग, प्रश्नोत्तर मालिका।
सोमेश्वर तृतीय (चालुक्य) —	मानसोल्लास।
विग्रहपाल विसलदेव (चाहमान)	हरकेलि नाटक।

इनके अतिरिक्त पूर्वी चालुक्यों, गंगों और पल्लवों में कई राजे अच्छे लेखक और काव्य-निर्माता हो गये हैं। पूर्व मध्यकाल में विद्वानों द्वारा प्रभूत मात्रा में साहित्य सृजन हुआ। कुछ उल्लेखनीय ग्रन्थों की तालिका इस प्रकार है :—

	ग्रन्थकार	ग्रन्थ
काव्य :—	श्रीहर्ष	नैषिधचरित
	जयदेव	गीतगोविन्द
	मंख	श्रीकण्ठचरित
	विल्हण	विक्रमांकदेव चरित्
	पद्म गुप्त	नवसाहसांक चरित्
	सोमदेव	कीर्ति कौमुदी
	जयानक	पृथ्वीराज विजय
	कल्हण	राजतरंगिणी

अन्तिम पांच ऐतिहासिक ग्रन्थ हैं।

नाटक	भवभूति	मालतीमाधव, महावीर चरित, उत्तर रामचरित
	दामोदर	हनुमन्नाटक
	कृष्णमिश्र	प्रबन्ध चन्द्रोदय
	सोमदेव	ललित विग्रहराज
काव्यशास्त्र	राजशेखर	काव्यमीमांसा
	आनन्दवर्द्धन	ध्वन्यालोक
	मम्मट	काव्यप्रकाश
	धनंजय	दशरूप
	हेमचन्द्र	काव्यानुशासन
	वैद्यनाथ	प्रतापरुद्रीय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शब्दकोष	हेमचन्द्र	अभिधान चिन्तामणि
	हलायुध	अभिधान रत्नमाला
	यादवभट्ट	वैजयन्ती कोष
आयुर्वेद	वाग्भट्ट	अष्टांगहृदय
	वृन्द	सिद्धयोग
	शार्ङ्गधर	शार्ङ्गधरसंहिता
नीति	चन्द्रेश्वर	नीति रत्नाकर
	सोमदेव	नीति वाक्यामृत
व्याकरण	हेमचन्द्र	हेमव्याकरण
	शकटायन	शकटायन व्याकरण
	क्रमदीश्वर	संक्षिप्त सार
विधि	मेधातिथि	मनुस्मृति (टीका)
	गोविन्दराज	,,
	विज्ञानेश्वर	मिताक्षरा (याज्ञवल्क्य स्मृति)
	लक्ष्मीधर	स्मृतिकल्पतरु
	हेमाद्रि	चतुर्वर्ग-चिन्तामणि
	हलायुध	ब्राह्मण सर्वस्व
दर्शन	कुमारिल	श्लोक वार्तिक, तन्त्र वार्तिक
	मंडन मिश्र	मीमांसानुक्रमणी, विधि विवेक
	वाचस्पति मिश्र	न्याय कणिक, तत्वबिन्दु, सांख्य तत्व कौमुदी
	शंकराचार्य	उपनिषदों पर भाष्य, आत्म बोध, गीता और ब्रह्मसूत्र पर भाष्य
	रामानुज	वेदान्तसार, गीता और ब्रह्मसूत्र पर भाष्य
	उदयन	कुसुमांजलि
	मध्वाचार्य	तत्वसार संग्रह
	हेमचन्द्र	प्रमाणमीमांसा

इनके अतिरिक्त प्राकृत में भी उत्कृष्ट रचनाऐं की गईं जिनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं। वाक्पतिराज कृत गौडवहो, राजशेखकर की कर्पूरमंजरी, भोज का कूर्मशतक, हेमचन्द्र कृत कुमारपाल चरित् और सोमप्रभा का कुमारपाल प्रबोध उत्कृष्ट प्राकृत रचनाऐं हैं।

पूर्वमध्य काल में राजकीय पत्र, प्रशस्तियां, दानपत्र और उत्कीर्ण लेख संस्कृत भाषा में हुआ करते थे। इस काल में कुछ प्रान्तीय भाषाओं का विकास भी हुआ। 'भारतीय इतिहास की भूमिका' नामक अपने ग्रन्थ में पृष्ट ३३९ पर डा० राजबली पांडेय इस प्रकार लिखते हैं, "संस्कृत की प्रधानता होते हुए भी प्रान्तीय भाषाओं—हिन्दी, गुजराती, मराठी, तामिल, तेलगु आदि का विकास इसी काल के अन्तिम भाग में प्रारम्भ हुआ। राजनैतिक विकेन्द्रीकरण और बाहरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आक्रमणों से उत्पन्न परिस्थिति ने आगे चलकर इस प्रक्रिया को प्रोत्साहन दिया। विदेशी राजनीति और धर्म भारत की संस्कृति, इतिहास और धर्म की भाषा को देश के पुनरुत्थान के भय से नहीं सहन कर सकते थे। वे प्रान्तीय बोलचाल की भाषा को, जिसमें साधारण काम-काज हो सकते थे, प्रोत्साहन देते थे। जनता की ऊँची आकांक्षाऐं दबी रहतीं, अतः वह इसी भाषा से संतोष करतीं थीं।"

कला

यद्यपि इस काल में राजागण परस्पर युद्धरत रहे और एक केन्द्रीय शासन का अभाव था तथापि इस काल में हिन्दुओं ने ललित कलाओं में बड़ी उन्नति की। जिस प्रकार संस्कृत भाषा के अन्तर्गत प्रभूतमात्रा में साहित्य का निर्माण हुआ उसी प्रकार अभिनय, संगीत, नृत्य, वाद्य आदि कलाओं की भी महती उन्नति हुई। धर्म और उपासना पद्धति से ललित कलाऐं प्रभावित हुईं। देवमण्डल का विस्तार हुआ। मन्दिरों का बड़ी संख्या में निर्माण हुआ। उनमें अगणित मूर्तियाँ प्रतिष्ठापित हुईं। मौर्य-गुप्त काल में कलाकृति सजीव एवं सरल थी। उसमें शालीनता तो थी ही लालित्य और हस्तकौशल का भी अभाव न था। परन्तु इस काल की कला अलंकरण की प्रचुरता से दब सी गई थी। इसमें मौलिकता और प्राकृतिकता का अभाव था। यह सब होते हुए भी उसमें सौन्दर्य और कलाप्रदर्शन की कमी न थी। मन्दिर देवालयों के निर्माण की तीन शैलियाँ थीं (१) नागर शैली (ऊँचे शिखरों से युक्त निर्माण) (२) बेसर शैली (चालुक्यों की स्थापत्य कला) (३) द्रविड़ शैली सुदूर दक्षिण की शैली जिसमें विशाल मन्दिरों के ऊपर विमान और रथ बने रहते थे) इस काल की स्थापत्य कला में अलंकारिता और सजावट अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई थी। चन्देल राजाओं द्वारा निर्मित खजुराहो के मन्दिर, उड़ीसा में भुवनेश्वर के मन्दिर, काश्मीर का मार्तण्ड मन्दिर, हिन्दचीन में बोरोबुदुर का मन्दिर उत्तर भारत की स्थापत्य कला की उत्कृष्ट कृतियाँ हैं। जावा और सुमात्रा के मन्दिर भी उत्तरी भारत की कला के अङ्ग हैं। अजन्ता और इलोरा के गुहा मन्दिर दक्षिण भारत की प्रसिद्ध कृतियों के रूप में दर्शनीय स्थल हैं।

मूर्तियों का निर्माण बहुत बड़े परिमाण में हुआ। ब्राह्मण, बुद्ध और जैन तीनों धर्मों से सम्बन्धित मूर्तियों की रचना हुई। विष्णु, शिव, शक्ति, सूर्य ब्रह्मा, गणेश, यक्ष, किन्नर, गन्धर्व आदि की मूर्तियाँ ब्राह्मण धर्म की थीं। बुद्ध और बोधिसत्वों की अनेक मूर्तियाँ बौद्ध धर्म की थीं। तीर्थङ्करों की प्रतिमाऐं जैन धर्म से सम्बन्धित थीं। अधिकांश मूर्तियाँ पत्थर की थीं। कुछ मूर्तियाँ धातु की भी होती थीं। पशु, पक्षी, वृक्ष, लता, पुष्पादि के चित्र भी पत्थरों पर सजावट की दृष्टि से उत्कीर्ण किये जाते थे। सौन्दर्य उस समय की कला का प्रधान अङ्ग था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१९ वीं शती से २० वीं शती तक
ब्रज के एक परिवार की साहित्यिक-परम्परा

—राधेश्याम अग्रवाल एम. ए., सा. रत्न,

श्री युत लाला रामलाल अग्रवाल वृन्दावन के प्रतिष्ठित नागरिक हुए हैं जिन्होंने दो प्रसिद्ध कवि रत्नों को जन्म दिया। १९ वीं शती में उनके ये दोनों पुत्र समग्र ब्रज साहित्य जगत् में यश प्राप्त कर चुके थे। वद्रीदास 'लाल बलवीर' उनके ज्येष्ठ पुत्र थे और प्रेमदास 'प्रेम सखी कनिष्ठतम।

लाल बलवीर—लाल बलवीर प्रसिद्ध महाकवि ग्वाल के समकालीन थे। उन दिनों काव्य-दङ्गल हुआ करते थे। किसी एक कवि के नेतृत्व में अन्य कवि काव्य-शिक्षा ग्रहण किया करते थे। समस्या-पूर्ति का युग था। गुरु और शिष्यों की टोली अन्य पक्ष को प्रतियोगिता के लिए आमंत्रित करती थी। प्रायः आशु रचनायें भी होती थीं और जो पक्ष निरुत्तर हो जाता था, वही पराजित माना जाता था। ऐसी अनुश्रुति है कि लाल बलवीर राय भाटों से कदापि प्रतियोगिता नहीं करते थे। एक बार शाह बिहारी लाल जी के मन्दिर में तीन दिन तीन रात तक काव्य-प्रतियोगिता होती रही। बाद में लाल बलवीर जी को ज्ञात हुआ कि प्रतियोगी भाट हैं, वह तुरन्त प्रतियोगिता छोड़कर चले आए।

इसी प्रकार जानकी नवमी के दिन मथुरा-वृन्दावन मार्ग पर स्थित अक्रूर घाट पर लाल बलवीर एवं परिकर और भोला भण्डारी, नवनीत चतुर्वेदी और परिकर का काव्य-दङ्गल जमा। अटल बिहारी पर समस्या पूर्ति हुई। उस वर्ष भोला भण्डारी जी का पक्ष प्रबल रहा। पुनः अगले वर्ष लाल बलवीर पूर्ण तैयारी के साथ गए और नवनीत और भंजरी भी उनका प्रतिवाद न कर सके।

गोवर्धन जिला मथुरा में नवनीत जी (नवनीत चतुर्वेदी नहीं) उनके परम मित्र थे। यहाँ भरतपुर नरेश की बनवाई हुई तिवारी है। जब पूज्य लाल बलवीर जी गोवर्धन की यात्रा पर जाते तो नन्दगाँव और बरसाने भी जाते। गोवर्धन में भरतपुर वाली तिवारी में और नन्दगाँव में काव्य-गोष्ठियां होती थीं।

वृन्दावन में रङ्ग जी के बाग में वसन्त पञ्चमी और चैत्र वदी दशमी को आतिशबाजी के मेले के अवसर पर काव्य-गोष्ठियां आयोजित होती थीं। लाल बलवीर उस समय वृन्दावन के प्रमुख कवि होने के कारण इन गोष्ठियों के मुख्य चर्चित व्यक्ति होते थे। उनका काव्य ब्रज क्षेत्र के अतिरिक्त रियासतों में नरेशों द्वारा भी बहुप्रशंसित था। टीकमगढ़, चरखारी, दतिया, समथर, विजावर, ओरछा, अलवर, मुरसान आदि नरेशों के वे कृपा पात्र थे। इन रियासतों में बलवीर जी का साहित्य अब भी प्राप्य है।

लाल बलवीर का रचना काल सं० १९२० विक्रमी से प्रारम्भ होता है। बलवीर हजारा अर्थात् ब्रज-विनोद में उनके १००० छन्द संग्रहीत हैं जिनमें कई शतक और विविध विषयों पर कवित्त हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कुछ उदाहरण

कृष्ण की बाल-छवि वर्णन—छोटे से चरन मांहि नूपुर की घोर होय,
रेसमी जरी को कटि काछनी कसी रहै।
उर वन माल गज मुक्त माल गुंज माल,
वीरी मुख लाल जू के ललित लसी रहै॥
लाल बलवीर चटकीले मटकीले नैन,
वदन निहार छकि सरद शशी रहै।
ऐसी छवि माधुरी सलौनी अंग अंगन की,
एहो ब्रजराज मेरे दृगन बसी रहै॥

दान लीला वर्णन—देख देख नारी गिरिधारी कही सखन तें,
कारी लीनी सारी ये घटा सी दरसाती हैं।
अंग-अंग कंचन के अलिकार साजें कल,
चोरन के तीर चंचला सी झलकाती हैं॥
लाल बलवीर गगरी सकल दधि धारें सीस,
घेरिये रंगीले धाय कहां जे सिधाती हैं।
लीजै दधि दान जान दीजै ना सयान कियें,
हियें हरषाती आज कैसी चली जाती हैं॥

प्रेम सखी—आप लाल बलवीर के सबसे छोटे भाई थे और प्रेमदास नाम था। प्रेमसखी उपनाम से काव्य-रचना करते थे। आप भक्ति और भक्तों के प्रभाव में आकर साधु हो गए थे। आपकी सभी रचनायें भक्ति पूर्ण हैं। लाल बलवीर की विचारधारा और व्यक्तित्व का आप पर गहरा प्रभाव दृष्टिगत होता है। आप भी बलवीर की भांति सखी भाव के उपासक थे। साधु अवस्था में ही आपका देहान्त हो गया था। लाल बलवीर जी के जीवन-काल में 'बलवीर हजारा' मुद्रित हो गया था। हजारा में प्रेमदास जी की रचनायें भी संग्रहीत हैं। उनका काव्य-कौशल बलवीर जी से किसी भी प्रकार कम नहीं है। भाव और कला दोनों ही पक्ष उत्कृष्ट हैं। भक्ति पक्ष और सन्त विचारधारा काव्य के प्रमुख विषय हैं।

कुछ उदाहरण

वृन्दावन छवि—प्रान धन वृन्दावन ताकौं ना बिसार मन,
निरख लतान छवि उमड़ी परत हैं।
नैन भर ढारें हेर-हेर मतवारे सन्त,
कदली कदम्ब अम्ब मन को हरत हैं॥
झुकें हैं तमाल बट रज कौं नवत माथ,
दंपत विलोक मन भाई सी करत हैं।
सेवा की निकुंजन में चरन पलोटें प्यारौ,
प्यारी जू की प्रेम सखी बीजना ढुरत हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शयन लीला— खोले द्वार कुंजन के भीतर बढ़ी है मुस्क,
सोइ रहे दोऊ पट झीने में लखात हैं।
पीतम की दाईं भुजा राजत है प्यारी अंग,
बांयौ कर प्यारी जू कौ अति सरसात है।
चुंबक पै पान बीर देत ही में नींद आई,
सखी हरषाय कछू अचरज पात है॥
कृष्ण अली वाली बीरौ देत रही प्यारे मुख,
जौलों नींद आई कर चुवक सुहात है।

संत काव्य— गुरु बिन कौन हरै भव भर्म।
जोग जप तप नेम संजम मरत कर कर कर्म॥
छांड़ कर हर सेव्य सेवक भेव्य भेषक धर्म।
प्रेम सखी अब खात गोता तुमहीं जानत मर्म॥

लाल बलवीर जी के पांच पुत्र हुए। १. संतदास, २ लड़ैतीलाल, ३. बांके लाल, ४. रामस्वरूप, ५. पूरनचन्द। इनमें संतदास और रामस्वरूप दोनों पुत्रों ने अपने पूज्य पिताश्री की परिपाटी का निर्वाह किया है। संतदास जी भी कवि थे और काव्य-रचना किया करते थे। अभी इनके विषय में विशेष परिचय प्राप्त नहीं हो सका है क्योंकि इनका एक पुत्र था—वह भी दिवङ्गत हो चुका है और स्वयं भी। रामस्वरूपजी ब्रज लोक साहित्य के प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। आपका ख्याल जगत् में सर्वोत्कृष्ट स्थान है। कलगी (टकसालियों) वाले अखाड़े के आप उस्ताद हैं और नौटंकी, भगत की कथाओं की काव्यमय रचना करते हैं। 'रतनकुमार' नामक स्वांग में आपका योगदान रचना और अभिनय व्यवस्था में प्रशंसनीय रहा था। आप में आशु काव्य-रचना की प्रतिभा विद्यमान है। टकसालिया से तात्पर्य ही यही है कि केवल निजी रचनाओं का ही प्रयोग करते हैं। कवित्त दोहा, छन्द आदि भी अनेक लिखे हैं। अनेकों प्रतियोगिताएं जीत चुके हैं। ब्रज क्षेत्र में वे रामस्वरूप सादाबादिया के नाम से प्रसिद्ध हैं।

लाल बलवीर से छोटे दो भाई और थे। १—द्वारकादास २—गोकुलदास। द्वारकादास जी के दो पुत्र १—मनोहरलाल २—प्यारेलाल हुए। मनोहरलालजी अधिक पढ़े लिखे नहीं थे, किन्तु जो भी ज्ञानार्जन उन्होंने किया, वह किया अपने परिश्रम और जिज्ञासा वृत्ति के माध्यम से। उन्होंने साधारण व्यक्ति के रूप में जीवन प्रारम्भ किया और समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति बन गए। इस अवस्था तक पहुँचने की उनके संघर्ष की अलग ही कहानी है। पुस्तक विक्रेता के रूप में जीवन प्रारम्भ कर उन्होंने प्रतिष्ठित प्रकाशक और मुद्रक की स्थिति प्राप्त की। प्रसिद्ध मनोहर मानचित्रावली उनके जीवन की अन्यतम उपलब्धि थी, जिसका संपादन, प्रकाशन, मुद्रण और विक्रय सभी कुछ उनके कुशल हाथों से हुआ था। वह साहित्यकार तो नहीं थे, किन्तु उनमें ऐसी प्रतिभा अवश्य थी कि वह साहित्य के रस को पहचानते थे। लाल बलवीर की काव्यगोष्ठियों का भी आनन्द लेते थे तो भगत नाटक और अन्य रसमयी विधाओं का भी। स्वयं के अभाव की पूर्ति उन्होंने अपने पुत्रों को शिक्षित-दीक्षित करके की। प्रस्तुत पंक्तियों का लेखक उन्ही यशस्वी व्यक्तित्व का पुत्र कहलाने का अधिकारी है। साहित्य-जगत् में एक-दो चरण जो कुछ भी रख सका हूं,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसमें पूज्य पिताश्री और ज्येष्ठ भ्राता भगवानदासजी का प्रमुख भाग है, जिन्होंने मुझे सर्व प्रकारेण योग्य बनाया।

ला० प्यारेलाल जी भी जीवन-भर मुद्रण और पुस्तक व्यवसाय से सम्बन्धित रहे हैं। तो न सही वे साहित्यकार, किन्तु साहित्य के प्रभाव में तो रहे ही हैं। और फिर 'काजर की कोठरी में कैसो हू सयानो जाय, नैंक रेख लागि है पै नैंक रेख लागि है।' जिस पर भी उन्हें बाबू प्रभुदयाल जी मीतल का साहचर्य प्राप्त हुआ है।

बाबू वृन्दावनदास—

आपका नाम सर्वविदित है राजनीति और साहित्य दोनों के क्षेत्र में। आप लाल बलवीर के अनुज द्वारकादास जी के दौहित्र हैं। प्रारम्भ से ही आप साहित्य और सहकारिता आन्दोलन से संबद्ध रहे हैं। बहुत दिनों राजनीति के झमेले में भी निरन्तर लगे रहे हैं और मथुरा नगर की नगरपालिका के अध्यक्ष पद को निरन्तर वर्षों तक सुशोभित किया है। राजनीति के वातावरण से मुक्त हो आप पुनः साहित्य-सेवा में निरत हैं। आप ब्रज-साहित्य मंडल, जो ब्रज-क्षेत्र और साहित्य की प्रतिनिधि संस्था रही है, के अध्यक्ष हैं और प्रस्तुत पत्रिका का ३ वर्षों से संपादन कर रहे। ब्रज साहित्य मंडल के पुनरुत्थान का महान् प्रयास आपके द्वारा हो रहा है, यह विशेष गौरव की बात हैं। कई शिक्षा संस्थाओं से भी सम्बद्ध रहे हैं। अग्रवाल जाति और संस्थाओं के भी पोषक और उन्नायक रहे हैं। आपका आलोचक स्वरूप, निष्पक्ष है। आपके लेखों में विपुल साहित्यिक सामग्री विद्यमान है जिसे कुछ विद्वान् संकलित और संपादित कर पुस्तकाकार करने की योजना बना रहे हैं। हिन्दू जाति का इतिहास अभी तक जैसा होना चाहिए था, वैसा किसी भी इतिहासकार ने प्रस्तुत नहीं किया है। बाबूजी इस अभाव की पूर्ति कर रहे हैं जो श्लाध्य है। मेरे तो वे ज्येष्ठ भ्राता हैं। मैं किस प्रकार उनके प्रति श्रद्धा प्रकट करूं-शब्द अक्षम है।

ईश्वर से यही प्रार्थना है कि हमारे परिवार की इस साहित्यिक परम्परा को वह भविष्य में भी अक्षुण्ण रखे।

—:*:—

❀ युगल छवि ❀

[श्री दुर्गाप्रसाद 'श्याम' विशारद कोसीकलां]

सांवरे! भली बनी तेरी जोरी।
नैना तव दरसन कूं ललचत हियौ करत वरजोरी।
मोर मुकुट सिर ऊपर राजत, कानन कुंडल जोरी।
नैनन कजरा गल वैजंती, माथे चन्दन खोरी।
पीत उपरना कांधे सोहत, वेनु सुधारस बोरी।
करि श्रृंगार नाना भूषण वर, चितवत मनहुँ चकोरी।
कर में कमल लिये कोमलवर संग में श्यामा गोरी।
प्रियप्यारी की चितवनि मुस्क्यानि लखत 'श्याम' तृन तोरी॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पत्र व्यवहार

महाकवि ग्वाल-निर्माण-शताब्दी-समारोह

मथुरा,
१२ मई १९६७ ई०

आदरणीय सम्पादक महोदय
'ब्रजभारती'

अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मंडल की शोध पत्रिका 'ब्रज भारती' अनवरत अप्रतिहत प्रकाश में आ रही है। यह हिन्दी का विशेषकर ब्रजी का सौभाग्य है कि प्रायः छिन्न मूल यह पादप नव्यांकुरों से अपने नैरन्तर्य की उद्घोषणा कर रहा है। यह एक जीवट का कार्य है, जो श्रमसाध्य और व्ययसाध्य भी है। इसके साथ आपने ब्रजी साहित्य का प्रकाशन भी आरंभ कर कर दिया है। हिन्दी की इस पुण्य सेवा के लिये आप हिन्दी संसार के साधुवाद के पात्र हैं। आपसे और मंडल से अभी हिन्दी को भविष्य में अनेक आशायें हैं। इस सम्बन्ध में हम आपसे और 'ब्रजभारती' के माध्यम से हिन्दी के साहित्यकारों, कवियों, शोधकारों, ब्रजी-भक्तों, साहित्य-नुरागियों और राष्ट्रभाषा के उन्नायकों से अपील करने की अनुमति लेते हैं और वह है महाकवि ग्वाल के साहित्य, कृतित्व और व्यक्तित्व को प्रकाश में लाने की, उनके कवित्व और आचार्यत्व की प्रतिष्ठापना करने की दिशा में सक्रियता लाने की।

मथुरा स्थित कवि की विशाल हवेली, ग्वालेश्वर मन्दिर और इतस्ततः बिखरा पड़ा ग्वाल साहित्य एक मूक संवेदना-संवलित करुण कथा के साक्ष्य हैं। हवेली की प्राचीरें, वे भवन-कक्ष आपसे कुछ कहते से प्रतीत होते हैं। क्या आप नहीं सुन पाये आग की लपटों में धूधू कर भस्मसात होते सहस्र साहित्य-ग्रन्थों के चीत्कार को। क्या महाकवि ने आपसे कुछ नहीं कहा, हिन्दी ने कुछ नहीं कहा। ब्रजी और ब्रज के दायित्व ने आपसे कुछ अधिकार नहीं माँगा क्या? भगवान श्रीकृष्ण की जन्मभूमि, लीलाभूमि के इस यशस्वी शारदापुत्र की चिन्ता में भगवान विश्वनाथ की पुरी वाराणसी उद्वेलित हुई और चंडीगढ़ तक से बार-बार उलाहने आये। ऐसी दशा में आपने अपने दायित्व के कंधों को न झकझोरा हो, यह हम मानने को तैयार नहीं हैं। आपने भी कई बार सोचा होगा, योजना बनाई होंगी किन्तु साधनों ने उत्तर दे दिया होगा अथवा अन्य बाधा व्यवधान सामने आ खड़े हुए होंगे। यह स्मरणीय है कि महाकवि ग्वाल और नवनीतजी के साहित्य को एकत्र करने और छपाने का आग्रह सर्वप्रथम आदरणीय साहित्यकार पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने किया था (देखिये ब्रजभारती वर्ष ९ अंक २) ग्वाल ग्रन्थावली के सम्पादन का प्रस्ताव भी आया था। श्री प्रभुदयालजी मीतल ने इस दिशा में विशेष श्लाघ्य साहित्य सृजन किया था। काशी हिन्दू विश्व विश्वविद्यालय के प्राध्यापक आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने ग्वाल ग्रन्थावली का संपादन करना प्रारम्भ कर दिया था। उनके पत्र के अनुसार कुछेक ग्रन्थों का सम्पादन हो गया है। उनके मगध विश्वविद्यालय में चले जाने से शेष ग्वाल साहित्य का सम्पादन शेष ही रह गया। श्रद्धेय श्री मिश्रजी ने भूषण, पद्माकर, केशव, भिखारीदास घनानन्द आदि की ग्रन्थावलियों का सम्पादन किया है। उनके समर्थ हाथों में यह काम सुरक्षित है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भगवान से प्रार्थना है कि यह काम शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण हो। भाई श्री देवेन्द्रसिंह विद्यार्थी चंडीगढ गत कई वर्षों से ग्वाल साहित्य की खोज में दत्तचित्त है। उनकी उपलब्धियाँ हिन्दी की निधि हैं।

महाकवि ग्वाल के प्रति हिन्दी के कर्तव्य की अनिवार्यता को हम कैसे नकार सकते हैं? तब फिर प्रश्न उछलकर सामने आता है—हमने क्या किया। अतीत ने उत्तर मांगा हमने भविष्य पर छोड़ा। भविष्य सीमातीत है। तब फिर हम कब इस विलम्बित—आश्वासित प्रश्न को उत्तरायँगे। अतः यह अपील है।

महाकवि ग्वाल का स्वर्गवास लगभग १०० वर्ष पूर्व हुआ था। आगामी सितम्बर में उनको विगत हुए १०० वर्ष होंगे। यह निर्वाण शताब्दी का अवसर उनके कृतित्व और व्यक्तित्व के मूल्यांकन, प्रकाशन, गुणकीर्तन एवं साहित्य प्रदर्शन के लिये उपयुक्त हो सकता है। उनके निर्वाण दिवस पर एक 'निर्वाण शताब्दी समारोह' की आयोजना हो सकती है। हमने इस सम्बन्ध में एक गोष्ठी श्री माथुर चतुर्वेद विद्यालय में श्री प्रभुदयालजी मीतल की अध्यक्षता में की भी थी जिसमें सर्वसम्मति से निश्चय हुआ था कि इस समारोह के सम्पादन की योजना के विचारार्थ भविष्य में एक और गोष्ठी की जाय जिसमें उत्सव की पूर्ण रूपरेखा निर्धारित हो। (यह गोष्ठी अभी होनी है) इस सम्बन्ध में सम्प्रति सक्रिय अखिल भारतीय संस्था 'ब्रज साहित्य मण्डल' की ओर हमारी आँखें लगी हैं। प्रस्तावित 'ग्वाल निर्वाण शताब्दी समारोह' की सामयिक महत्ता तो होगी ही, साथ ही हिन्दी और ब्रजी का भी गौरव इससे वृद्धिगत होगा। एक ओर इस अवसर पर अनेक ख्यातनामा विद्वान् साहित्यकारों के दर्शन और विचार हमें मिलेंगे, दूसरी ओर विचार संगोष्ठियों की गुरु गरिमामयी स्रोतस्विनी में निमज्जन करने का दुर्लभ सुयोग भी हाथ आयेगा। यह समारोह दो या तीन दिन चल सकता है। साहित्य गोष्ठी, विचार संगोष्ठी, कवि दरबार, ब्रजी सम्मेलन, कवि सम्मेलन, साहित्य प्रदर्शनी आदि के कार्यक्रम आयोजित हो सकते हैं। समारोह के स्वरूप निर्धारण के सम्बन्ध में और सहयोग के सम्बन्ध में समस्त हिन्दी के विद्वानों के अमूल्य सुझावों का आदर किया जाय। इस योजना को कार्य रूप में परिणित करने के लिये लक्ष्मी देवी की आराधना भी करनी आवश्यक है। साहित्यानुरागी धनिक वर्ग सदैव से साहित्य-श्री-वर्द्धन हेतु आगे बढ़ते आये हैं। हमें उनसे भी अपील करनी है कि इस प्रस्तावित महत्कार्य में अपना योग देकर अपने महाकवि के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करें।

यह योजना अभी से तैयार कर लेनी चाहिए ताकि सितम्बर ६७ तक अधिकाधिक विद्वानों से सम्पर्क स्थापित किया जा सके तथा समारोह को जैसी आवश्यकता हो वृहत् या लघु रूप दिया सा सके। यह एक पुण्य अनुष्ठान कार्य होगा, विद्वानों से अधिकाधिक साहचर्य-सहयोग अपेक्षित है।

आशा है आप इस दिशा में अग्रणी बनकर श्रेय के भागी बनेंगे।

पूर्व धन्यवाद सहित

आपका

भगवानसहाय पचौरी एम० ए०

रिसर्च स्कालर

प्रभा-प्रकेत, कृष्णापुरी मथुरा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राष्ट्रभाषा हिन्दी और 'शौरसेनी अपभ्रंश'

--श्री किशोरीदास बाजपेयी

भाषाविज्ञानियों ने राष्ट्रभाषा हिन्दी का उद्भव-विकास 'शौरसेनी अपभ्रंश' से माना है और 'शौरसेनी अपभ्रंश' की प्रकृति है 'शौरसेनी प्राकृत'। यानी प्राकृत भाषा से 'अपभ्रंश' और अपभ्रंश से वर्तमान लोकभाषा। क्रम तो ठीक है; परन्तु 'शौरसेनी' (प्राकृत-अपभ्रंश) से 'हिन्दी' ('खड़ी बोली' यानी वर्तमान राष्ट्रभाषा) की उत्पत्ति बतलाना ठीक नहीं है-गलत है। मिसरी से सेंधा नमक नहीं बना है और न फिटकरी से मिसरी बनी है। अलग-अलग स्वरूप हैं। जो स्वाद मिसरी में है वह सेंधा नमक में नहीं और जो उस नमक में है वह फिटकरी में नहीं। इसी तरह 'शौरसेनी' (प्राकृत-अपभ्रंश) से वह प्राकृत अपभ्रंश भिन्न होनी चाहिए, जिसका वर्तमान रूप हिन्दी (राष्ट्रभाषा) है (और जिसका एक दूसरा रूप उर्दू नाम से प्रसिद्ध है)। हिन्दी-उर्दू 'कुरुजनपद' की 'प्राकृत' भाषा के रूपान्तर हैं।' 'कुरुजनपद' में उत्तर प्रदेश के मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर आदि जिले आते हैं। 'दिल्ली' यद्यपि विभिन्न भाषाओं की 'देहली' है: परन्तु फिर भी, वह 'कुरुजनपद' से संवलित है। 'देहली' से पश्चिम पैर रखो, तो 'रेवाड़ी' से 'राजस्थानी' भाषा चल पड़ती है; उत्तर में 'कौरवी' है; पूरब में पाञ्चाली है और दक्षिण-पश्चिम में 'ब्रजभाषा' हैं। दिल्ली के समीप ही 'हरियाना' है, जो किसी समय 'कुरुजाङ्गल' कहलाता था। इसे ही 'बाँगर' भी कहते हैं। यमुना के इधर सहारनपुर 'कुरुजनपद' में है और उधर 'करनाल' आदि 'कुरुजाङ्गल' में। एक ही क्षेत्र द्विधा विभक्त है और दोनों क्षेत्रों की भाषा का उद्गम एक ही है। आगे 'पंजाबी' भाषा का क्षेत्र 'अंबाला' से उधर है। कौरवी बाँगरू और पंजाबी भाषाएँ एक पट्टी की हैं—'आ' (खड़ी पाई) की विशेषता इनमें है। राजस्थानी, गुजराती, काठियावाड़ी, कच्छी और सिन्धी भाषाएँ दूसरी (पश्चिमी) पट्टी है। 'ब्रजभाषा' की भी 'देहली' दिल्ली ही है। दिल्ली से डाकगाड़ी छूटी हुई मथुरा ही जाकर रुकती है। इधर उत्तर को चली डाकगाड़ी (दिल्ली से चल कर) मेरठ रुकती है। यानी मथुरा और मेरठ में बहुत अन्तर नहीं है; न 'रेवाड़ी' और 'मेरठ' में ही; परन्तु फिर भी भाषा में बड़ा (मौलिक) अन्तर है।

ब्रज को ही लोग 'शोरसेन प्रदेश' कहते हैं, जहाँ की भाषा 'ब्रजभाषा' नाम से प्रसिद्ध है। बहुत से उर्दूवालों ने भी 'ब्रजभाषा' से ही उर्दू की उत्पत्ति बतलाई है। यह सब गलत है। राजस्थानी आदि पश्चिमी भाषाएँ किसी एक प्राकृत-धारा से हैं और हिन्दी, बाँगरू, पंजाबी आदि दूसरी से: पाञ्चाली, अवधी, भोजपुरी आदि (पूरबी पट्टी) की भाषाएँ किसी तीसरी 'प्राकृत'-धारा) से हैं और पहाड़ी (गढ़वाली, कुमायूनी, नेपाली आदि) चौथी से; बँगला-असमिया आदि पाँचवीं से और मराठी आदि छठी से। इसी तरह विभिन्न 'प्राकृत'-धाराओं से विभिन्न लोक-भाषाओं का विकास है।

ब्रजभाषा एक मिश्रित भाषा

'ब्रज' का क्षेत्र एक ओर 'कुरुजनपद' से मिलता है। दिल्ली को ब्रजभाषा छू रही है। दूसरी ओर ब्रजभाषा का (भरतपुर, धौलपुर आदि) क्षेत्र राजस्थानी भाषा से मिलता है और तीसरी ओर 'बाँगरू' से; तो अन्यत्र 'पाञ्चाली' (कन्नौजी) से उसका सम्बन्ध है। इन सबका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रभाव ब्रजभाषा पर है; परन्तु मुख्यतः उत्तरी और पश्चिमी पट्टी का प्रभाव है। यानी राजस्थानी और कौरवी, (मेरठी) भाषाओं की प्रकट छाप ब्रजभाषा पर है। परन्तु राजस्थानी और कौरवी भाषाओं में बड़ा अन्तर है—एकदम भिन्न चीजें हैं। स्थिति स्पष्ट करने के लिए पहले हम राजस्थानी और कौरवी के रूप सामने रखेंगे और तब आप देख सकेंगे कि ब्रजभाषा में दोनों का कैसा मिश्रण है।

राजस्थानी भाषा

राजस्थानी भाषा के दो रूप हैं—जयपुरी और जोधपुरी। एक में सम्बन्ध प्रत्यय 'क' है, दूसरी में 'र'। संज्ञा-विभक्ति उभयत्र 'ओ' है—'राम को छोरो' जयपुरी और 'राम रो छोरो' जोधपुरी। शेष सब तत्त्व प्रायः समान हैं। कुरु जनपद और कुरुजाङ्गल की ही स्थिति समझिए। राजस्थानी के दोनों रूपों में 'एक वचन' और 'बहुवचन' यों रहते हैं।

एकवचन—राम को छोरो आयो
(राम रो छोरो आयो)

बहुवचन—राम का छोरा आया
(राम रा छोरा आया)

यानी हिन्दी (राष्ट्रभाषा) में जो रूप 'एकवचन' का होता है, वह राजस्थानी में बहुवचन का होता है। है न स्पष्ट अन्तर ? राजस्थानी का यह रूप प्राप्त संस्कृत-प्राकृत रूपों से एकदम मेल खाता है :—

संस्कृत	—	पुत्रः गतः	—	पुत्राः गताः
प्राकृत	—	पुत्तो गदो	—	पुत्ता गदा
राजस्थानी	—	छोरो गयो	—	छोरा गया

यानी 'द' को 'य' हो गया है; जैसे 'मद' का 'मय'। शेष सब प्रक्रिया (या चाल) वही है। प्राकृत में विसर्ग नहीं रहते, इस लिए एक जगह 'ओ' और अन्यत्र लोप।

परन्तु हिन्दी में एकदम स्थिति भिन्न है। एकवचन 'गया' और बहुवचन 'गये'–'गए'। इस रूप-भेद का कारण क्या है और कैसे यह रूप भेद हुआ; ये सब विस्तार की बातें हैं, जो 'भारतीय भाषा विज्ञान' में देखी जा सकती हैं। यहाँ तो केवल यह बतलाना है कि 'शौरसेनी' (प्राकृत–अपभ्रंश) से हिन्दी भाषा का उद्गम बतलाना गलती है। दोनों की पृथक् स्थिति है। 'हिन्दी' और राजस्थानी की पृथक्-पृथक् धाराएँ हैं और बीच की ब्रजभाषा दोनों से प्रभावित है। देखिए, एक वचन –

सुग्गो गयो	—	राजस्थानी
सुग्गा गया	—	हिन्दी
सुग्गा गयो	—	ब्रजभाषा

ब्रज में 'छोरा गयो' होता है; 'छोरो गयो' राजस्थानी में और 'छोरा गया' हिन्दी में। 'छोरा' की जगह 'छोकरा' या 'लड़का' आदि कोई भी संज्ञा कर लें; गति (चाल) वही रहेगी। यानी ब्रजभाषा में संज्ञा का रूप 'खड़ी बोली' (हिन्दी) की तरह (आकारान्त) और क्रिया का रूप है राजस्थानी की तरह (ओकारान्त) स्पष्ट ही दोनों धाराओं का प्रभाव है बहुवचन में भी यही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्थिति है—दोनों का प्रभाव ब्रजभाषा पर है :—

सुग्गा गया — राजस्थानी
सुग्गे गये (गए)—हिन्दी
सुग्गा गए — ब्रजभाषा

ब्रज में 'छोरा गए' बहुवचन है; राजस्थानी की तरह 'छोरा गया' नहीं। 'खड़ी बोली' में 'सुग्गे गए'–'लड़के गए' यों कर्ता–क्रिया दोनों एकारान्त हैं; पर ब्रजभाषा में कर्ता (बहुवचन में भी) आकारान्त ही रहेगा—'छोरा गए'। 'छोरे गए' ब्रजभाषा में नहीं होता। राजस्थानी में क्रिया (बहुवचन) आकारान्त है—'गया'; परन्तु ब्रजभाषा में एकारान्त है—'गए'। यानी संज्ञा का रूप बहुवचन में राजस्थानी की तरह है—आकारान्त; पर क्रिया का रूप 'खड़ी बोली' की तरह है—एकारान्त 'गए'। इसी प्रकार अन्य प्रभाव भी हैं। सो, लोकभाषाओं की उत्तरी धारा में हिन्दी है और पश्चिमी धारा में राजस्थानी। इन दोनों धाराओं का उद्गम पृथक्-पृथक् प्राकृतों से है। एक ही प्राकृत से हिन्दी और राजस्थानी का विकास नहीं है। बीच की ब्रजभाषा एक तीसरी चीज है, जिस पर दोनों का प्रभाव है। यानी कौरवी 'प्राकृत भाषा' से वह 'प्राकृत भाषा' भिन्न है, जिसका रूपान्तर राजस्थानी है। एक तीसरी प्राकृत 'शौरसेनी' नाम की, जिसका वर्तमान रूप 'ब्रजभाषा' नाम से प्रसिद्ध है। यह एक भिन्न प्राकृत जनभाषा है। सो, 'शौरसेनी' प्राकृत-अपभ्रंश से हिन्दी का विकास नहीं है; प्रत्युत हिन्दी ('खड़ी बोली') से ब्रजभाषा प्रभावित है; यानी 'कौरवी प्राकृत' का प्रभाव 'शौरसेनी प्राकृत पर है। हिन्दी और राजस्थानी भाषाएँ स्पष्टतः भिन्न प्रकृति की हैं; यद्यपि इन सबका मूल एक ही है। हिमालय ही गंगा, यमुना आदि नदियों का उद्गम स्थान है; परन्तु गंगा उसके किसी एक अंश से है और यमुना किसी दूसरे से। आगे कहीं जाकर इनका संगम भी है। परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि गंगा से यमुना निकली है; या यमुना ही गंगा का उद्गम है।

'भाषाविज्ञान' अभी तक हिन्दी में एक खिलवाड़ ही है; जैसे कि व्याकरण था। व्याकरण अब बन चुका है और भाषा विज्ञान की भी नींव लग गई है, अब नम्बर आया है रस, अलंकार, शब्द शक्ति आदि के विवेचन का। हिन्दी में इन सबकी भी बड़ी दुर्दशा है। सन् १९२० में रस-अलंकार आदि पर ध्यान गया था; काम भी शुरू कर दिया था। परन्तु व्याकरण को प्राथम्य देना पड़ा। नींव की चीज है उसके साथ ही 'भाषा विज्ञान' आ गया। इतने दिन लग गए। बीच में भाषा परिष्कार भी हुआ। करने जा रहा था कुछ, करना पड़ गया कुछ :—

सोचा मैंने उषा काल में,
मा का भवन संजाऊँ।
अभिनव अर्थ उपार्जित कर के,
मैं भी भेंट चढ़ाऊँ!
किन्तु भक्तपद-प्रक्षेपों से,
धूल यहाँ पर आई,
रहा बुहार उसी को तब से,
यों सब उम्र गँवाई!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वट सावित्री व्रत कथा

—उमाशङ्कर दीक्षित एम. ए., साहित्य रत्न

जेठ के महीना में जो मावस आवै है वाकूँ बड़ मावस कहैं हैं वा दिना विशेष करिकै बड़ (वट) के पेड़ की पूजा होय है। व्हौत से तौ अपने घर में ही भीति पै हल्दी ते बड़ कौ पेड़ काढ़ि कें और बड़ की टैहनी मँगाय कें बाकी ही पूजा करें हैं। जा वर्त के करिवे ते सुहागिनी नारीन को सुहाग अचल होय हैं ताते जा वर्त कूँ सभी सुहागिनी नारी करें हैं। जा वर्त में सत्यवान-सावित्री और धर्मराज (यमराज) की हू पूजा करें हैं ताते जाय वट सावित्री कौ वर्त हू कह्यौ है।

बड़ मावस के दिना पीरे-पीरे घोटा के ओढ़ना ओढ़ि कें रङ्ग विरङ्गी धोती पैहर कें, हाथ में पूजा की थारी और झारी लैकें, झिलमिल-झिलमिल करतीं सभी सुहागिनी नारी बड़ के पेड़ के पास जाय कें वाकी पूजा करें हैं। परिकम्मा लगावें हैं और बैठि कें सत्यवान-सावित्री को कहानी कूँ सुन हैं। उनमें ते एक औरत तौ कहानी कूँ कहैं हैं और वाकी औरत वाके ओर-पास बैठि कें बड़ी श्रद्धा और भक्ति ते वा कहानी कूँ सुनै हैं। वु कहानी ऐसे कहैं हैं :—

व्हौतु पुरानी बातै, एक राजा ओ। बाकौ नाम ओ द्युमतसेन, वाकें एक बेटा ओ सत्यवान। सत्यवान के रूप और गुन की बड़ी चर्चा ही। मद्र देस के राजा अस्वपती की लड़िकी सावित्री नें बाके रूप और गुन की प्रसंसा सुनी और वाय रूपवान और गुनवान जानकें अपने मन में ही पती बनाय लयौ। एक दिना नारद जी सावित्री के पिता अस्वपती के य्हाँ घूमते घामते आय पौंहचे। सावित्री के पिता ने उनकी पूजा करकें आसन दियौ और सावित्री कौ भविष्य पूछ्यौ।

नारदजी नें वाके पती सत्यवान की खूब बड़ाई करी और व्हौत से गुन बताये। परि एक दोषु हू बतायौ कै वाकी उमरि व्हौतु थोरी है और कही कै थोरे से दिना पीछें बाके माँ बाप हूँ अन्धे है जाविंगे और सब राज पाट छिन जायगौ। ऐसै सुनिकें पिता नें सावित्री ते सत्यवान के सङ्ग ब्याह करिवे की व्हौतु मनै करी। परि बानें एक न मानी और पिता ते कही कै पिताजी भारत की नारी तौ अपने जीवन में मन वानी और कर्म ते एक ही पती बनावें हैं। अब जो भी होय मेरौ तौ ब्याह राजकुमार सत्यवान के सङ्ग ही होयगौ। तब राजा ने बाकी बात कूँ मानकें शुभ महूर्त में सत्यवान के सङ्ग वाकौ ब्याह कर दीयौ।

सावित्री ने नारदजी ते सत्यवान की मृत्यु कौ दिना और समै सब पूछि कें याद रक्खौ। ब्याह के बाद सावित्री सुसरार में सुखते रहन लगी। सास सुसर और पती की खूब सेवा करौ करै। कछू समैं बाद सास-सुसर अंधे है गये और राजपाट सब सत्रून ने छीन लियौ। विचारे जङ्गल में झोंपड़ी बनाय कें रैहन लगे। सावित्री हू उनके सङ्ग वहीं सुख पूर्वक रैहन लगी।

तब वु समै आयौ जा दिना नारदजी ने सत्यवान की मृत्यु बताई हती। वु दिना बड़मावस कौ ही दिना हो। सत्यवान जङ्गल में लकड़िया काटिवे चल्यौ, तौ सावित्री हू वा दिना वाके सङ्ग ही जङ्गल कूँ पीछै परिकें चल दीनी। वहाँ सत्यवान एक पेड़ पै ते लकड़िया काटन लग्यौ। थोरी देर बाद बाकी छाती में बड़े जोर की पीड़ा उठी। तब तौ वु पेड़ पै ते उतरिकें सावित्री की गोद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में अपनौ सिर धरिकें सोयगौ। सावित्री सब जानि गई के नारदजी की बात कहूँ झूँठी नाहिं है सकै।

कछू देर बाद वानें बड़े तेजस्वी और भैंसा पै सवार जमराज कूँ आवत देख्यौ। वे सत्यवान के जीव कूँ लैकें दक्खिन दिसा कूँ चलन लगे। तौ सावित्री हू उनके पीछे-पीछे चलन लगी। सावित्री कूँ आमतु देखि कें जमराज ने पूछी कै तू काये कूँ पीछे-पीछे चलि रही है। अब तेरे पति के प्राण तौ लौटिंगे नांहि। व्हौतु समझायौ पर वु न लौटी तौ जमराज नें बाकुँ वरदान देवै कौ बचन दीयौ और कही कै पती के प्राणन कूँ छोड़ि कें जो चाहै सो वरदान माँग लै। तौ बानें अपने सास-सुसरन के नेत्रन की जोति माँगी। जमराज ने वु दै दीनी। तऊ सावित्री न लौटी। तब जमराज ने दूसरौ वर माँगवे की कही—तब सावित्री ने अपने सास सुसरन कौ राज वापिस माँग्यौ। परि फिरहू सावित्री जमराज के पीछें-पीछें ही चलिवौ करी। जमराज ने बाकूँ बहुत समुझायौ और तीसरों वरदान हू मांगिवे की कही—तीसरे वरदान में सावित्री ने अपने सौ पुत्र माँगे जमराज ने कही कै 'अच्छा ऐसें ही होय।' तब तौ सावित्री हाथ जोरि के जमराज ते बोली-हे धर्मराज ! आपने मोकूँ सौ पुत्रन को वरदान तौ दै दियौ और मेरे पती कूँ आप लैकें जाय रहे हौ। भारतीय नारीनं कें अपने पतीदेव के बिना सन्तान कैसी ? जमराज सावित्री की बुद्धिमानी और सतीत्व कूँ देखि कें दङ्ग रहि गये और बड़े प्रसन्न है कें सत्यवान के जीव कूँ वापिस करि दीयौ। सावित्री प्रसंन्न है कें अपने पती के साथ अपने घर कूँ आई। वहाँ बाके सास-सुसरन की आँखि हू अच्छी ह्वै गईं और धीरे से समैं में उनको राजहू वापिस मिल गयौ। सावित्री पती के सङ्ग सुखते रहिवे लगी। बस, जैसी मावस मैय्या बाकूँ आई ऐसी सब काहू कें अइयो।

ऐसें कहिकें सब औरत बट के पेड़ कूँ धोक देंकें गाती बजाती अपने घरन कूँ आवें हैं और फिर परसाद पावें हैं। ऐसे सालभर पती पुत्रन के सङ्ग आनन्द ते रहें हैं।

गीत

—महेन्द्र शर्मा "निशेश"

कितो बार तुमसौं हम कहत-कहत हार गईं—
'श्याम जू, न मारौ हम पै रङ्ग भरो पिचकारी।'
आँखियन में लाज के समुन्दर कूँ रोकें हम,
जुग-जुग ते निरखें-तिहारी मनमानी।
पर, तुम नटखट हौ, कौतुक रचावत हो,
अंग के बचावन कूँ, झोनी चूनर तानी॥
खेल मत करौ तुम हमारी विवसता ते—
एक ही हमारो, अभिलाषा है बनवारी॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वृन्दावन के दीवान चम्पाराम की दो अज्ञात रचनायें

–श्री अगरचन्द नाहटा

हिन्दी भाषा में जैन कवियों ने बहुत-सा साहित्य निर्माण किया है । पर वह अधिकांश अप्रकाशित है और बहुत-सी रचनाओं की तो एक-दो प्रतियाँ ही कहीं किसी भण्डार में पड़ी हैं। अर्थात् उनका प्रचार नहीं हो पाया । अतः उन रचनाओं की जानकारी सुगमता से प्राप्त नहीं की जा सकती । क्यों कि जिन रचनाओं की कई प्रतिलिपियाँ हो जाती हैं वे तो किसी न किसी भण्डार में मिल ही जाती हैं पर जिन रचनाओं की एक-२ प्रति ही लिखी गयी उनका तब तक पता नहीं चलता, जब तक जिस ग्रन्थ भण्डार में वह प्रति है उसी भण्डार की खोज न हो । यहाँ ऐसे ही एक हिन्दी जैन कवि की दो रचनाओं का विवरण प्रकाशित किया जा रहा है जिसकी एक मात्र प्रति कलकत्ते के स्व० श्री पूरण चन्द जी नाहर के संग्रह में दखने को मिली । एक प्रति अभी यथास्वरूप नागौर भदारव भंडार में भी ज्ञात हुई है ।

वृन्दावन के दीवान चम्पाराम ने सं० १९९२ में 'सङ्गहित' और 'जिन चैत्य स्तव' नामक दो हिन्दी पद्य बद्ध रचनायें की जिनकी प्रति रचना काल के २ महीनों बाद की लिखी हुई प्राप्त हुई है और वह भी चम्पाराम के भानजे लालजीमल ने अपने पढ़ने के लिए लिखवायी थी । २० पत्रों की यह प्रति भावसा गोत्रीय श्रावक भवानीचन्द, जो झिलाय के निवासी थे, की लिखी हुई है । 'सङ्गहित' १२७ पद्यों की रचना है । सं० १९९२ के मिगसर बदि ६ को वृन्दावन में इसकी रचना हुई है । चम्पाराम ने अपना कुछ भी परिचय प्राप्त दोहों या रचना में नहीं दिया । केवल अपने नाम के साथ दोनों रचनाओं में एक-एक जगह श्रावक और दीवान विशेषण ही अपने नाम के साथ दिये हैं । 'जिन चैत्य स्तव' में आसकरण नामक एक व्यक्ति का उल्लेख अन्तिम पद्य में हैं, जिसका विशेषण 'साधु' और 'सुमति' दिया है । उनके लिये इस 'जिन चैत्य स्तव' की रचना हुई हुई है । पता नहीं यह आसकरण कौन थे ? श्रावक चम्पाराम का दीवान विशेषण इनके उच्च राज्याधिकारी पद का सूचक है । उनका विशेष परिचय अभी अन्वेषणीय है ।

'जिन चैत्य स्तव' की रचना सं० १९९२ के कार्तिक बदि अष्टमी को हुई है । ४७ वें पद्य में रचना की समाप्ति भी मालूम देती है, पर उसके बाद 'विमुख स्वरूप' शीर्षक देते हुए कुछ पद्य और रचे हैं इससे कुल पद्यों की संख्या ६० हो गयी है । ५९ वें पद्य में 'जिन चैत्य स्तव' का उल्लेख होने से 'विमुख स्वरूप' इसी रचना का उपशीर्षक सिद्ध होता है, जो एक विषय के साथ दूसरे विषय के आरम्भ होने की सूचना देता है । दोनों रचनायें साधारण हैं और प्रधानतया दोहा, छन्दों में है । दोनों रचनाओं के आदि अन्त के कतिपय पद्य नीचे दिये जा रहे हैं ।

जिन चैत्यस्तव–(आदि) दोहा :—

बन्दों श्री जिन जगतगुरु, उपदेशिक शिवपंथ ।
सम श्रुति शासन तैं रच्यो, जिन-चैत्य-स्तव ग्रंथ ॥
श्री जिन ध्यान हिये धरूं, करि प्रतिमा से प्रेम ।
निज गुरु वन्दों भाव सों, मेरे यह नित नेम ॥२॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महिमा श्री जिन चैत्य की, श्री जिन तें अधिकाय ।
चम्पाराम दिवान कुं, सतगुरू दई दिखाय ॥३॥

मध्य—

श्रावक चम्पाराम पै, श्री गुरु सदा सहाय ।
ता प्रसाद अति गुप्त यह, श्रुति मत दियो दिखाय ॥२॥
आसकरण साधु सुमति, तिन हित कियौ नवीन ।
नीकै दियौ सिखाइ के, पुनि ऐसें कहि दीन ॥४३॥

पद्य ४७ के बाद–अथ–सवैया–अन्त :—

चिन्तामन अरु कल्प तरु, जितै होहि तिहु काल ।
जिन चैत्य स्तव तुल्य नहीं, सिव कर ग्रंथ रसाल ॥५६॥
अष्टापद (दश) शत ऊपरै, लग्यौ बियासी साल ।
गुरु कार्तिक बद अष्टमी, पूरण कियौ सुकाल ॥

* इति श्री जिन चैत्य स्तव सम्पूर्ण *

२ संधहित (आदि) :—

नमो आदि जिण आदि दे, महावीर परिजन्त ।
चउवीसौं जिन जगत गुरू, तीर्थंकर अरिहन्त ॥

(अन्त) :—

'चम्पाराम' दीवान अब, विनती करि करि देत ।
सुनिकें ग्रंथ नवीन यह, समझै हेत कुहेत ॥११३॥
श्रावक चम्पाराम ने, धरि निज मन गुरु ध्यान ।
कियौ 'संघहित' ग्रंथ यह, मुक्ति सुपथ संधान ॥११८॥
'जिन-चैत्य-स्तव' ग्रंथ शुभ, कियौ प्रथम सुख कन्द ।
भवि निति याकै पाठतें, धन लहि करै आनन्द ॥११९॥
सिद्धान्तन के मत प्रबल, तिन बल 'चम्पाराम' ।
'वृन्दावन शुभ थान में, रच्यौ ग्रंथ बन धाम ॥१२३॥
अठारै सै तन उपरै, लग्यौ बियासी साल ।
मार्गशीर्ष वदि पंचमी, बुध सुदिन गुनमाल ॥११६॥
सम्पूर्ण इह ग्रंथ शुभ, कीनु शिवरस लीन ।
जैवन्ती वरतौ सदा, जब लुं सघ प्रवीन ॥१२६॥

श्री प्रभुदयालजी मीतल लिखित ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास के पृष्ठ ५४५ "मथुरा का सेठ घराना" शीर्षक में गोकुलदास पारीख का परिचय देते हुए उनके दो मुनीमों का उल्लेख किया है, मनीराम और चंपाराम । मनीराम और उनके वंशजों का तो मीतलजी ने विस्तृत विवरण दिया है पर चंपाराम के सम्बन्ध में कुछ भी जानकारी वे नहीं दे सके हैं । मेरे ख्याल से इस लेख में जिन दीवान चंपाराम का परिचय दिया जा रहा है वे सेठ गोकुलदास पारिख के मुनीम ही होंगे, उनके वंशज भी संभव है अभी वृन्दावन मथुरा में हों, अतः विशेष जानकारी प्रकाश में लाना आवश्यक है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आइये, हम अपने गाँव को गोकुल बनायें

—आचार्य बिनोवा

हमारे एक मित्र जर्मनी गये थे। वह वहाँ का एक प्रसंग सुनाते थे—"हम सब विद्यार्थी इकट्ठे हुए थे। फरासीसी, जर्मन, अंग्रेज, जापानी, रूसी सब एक साथ बैठे थे। सबने अपने-अपने देश के राष्ट्रीय वाद्य बजाकर दिखाये, फरासीसियों ने वायोलिन बजाया, अंग्रेजों ने वाद्य बजाया। मुझसे कहा गया 'तुम हिन्दुस्तानी वाद्य सुनाओ।' मैं चुपचाप बैठा रहा। वे मुझसे पूछने लगे, "तुम्हारा भारतीय वाद्य कौनसा है?" मैं उन्हें बता न सका।

मैंने तुरन्त अपने उस मित्र से कहा, "अजी हमारा वाद्य बाँसुरी है।" लाखों गाँवों में वह गाई जाती है, सीधी सादी और मीठी। कृष्ण भगवान ने उसे पुनीत किया है। एक बाँस की नली ले ली, उसमें छेद बना लिए। बस वाद्य तैयार हो गया।"

ऐसा वाद्य श्री कृष्ण बजाते थे। वह गोकुल का स्वदेशी देहाती वाद्य था। अच्छा श्री कृष्ण खाते क्या थे? बाहर की चीनी लाकर खाता था? वह अपने गोकुल की मक्खन मलाई खाता था, दूसरों को खाना सिखाते थे। ग्वालिनें गोकुल की यह लक्ष्मी मथुरा को ले जाती थीं। परन्तु गाँव की इस अन्नपूर्णा को कन्हैया बाहर नहीं जाने देता था। वह उसे लूटकर सबको बाँट देता था। सारे गोकुल के बालक उसने हृष्ट-पुष्ट किये। जिन्होंने गोकुल पर चढ़ाई की, उनके दाँत उसने अपने मित्रों की मदद से खट्टे किये। गोकुल में रह कर भी वह क्या करता था? गायें चराता था। उसने दावानल निगल लिया। यानी क्या किया? देहातों को जलाने वाले लड़ाई झगड़ों का खात्मा किया। सब लड़कों को इक्ट्ठा किया। प्रेम बढ़ाया। इस तरह यह श्री कृष्ण गोपाल कृष्ण है। वह तुम्हारे गाँव का आदर्श है। गोपाल कृष्ण ने गाँवों का वैभव बढ़ाया, गाँवों की सेवा की, गाँवों पर प्रेम किया, गावों के पशु-पक्षी, गाँव की नदी, गाँव का गोवर्धन पर्वत—इन सब पर उसने प्रेम किया। गाँव ही उसका देवता था। आगे चल कर वे द्वारिकाधीश बने। लेकिन फिर भी गोकुल में आते थे, फिर गायें चराते थे, गोबर में हाथ डालते थे, गोशाला बुहारते थे, वन-माला पहिनते थे, वंशी बजाते थे, लड़कों के साथ, गोप ग्वालों के साथ खेलते थे। ब्रजकिशोर उनका प्यारा नाम था। उन्होंने गोकुल में असीम आनन्द और सुख पैदा किया।

गोकुल का सुख असीम था। ऐसे गोकुल के अन्न के चार कणों के लिए देवता तरसते थे। अपने गाँव को गोकुल के समान बनाओ। तब वे शहर के नगर सेठ तुम्हारे गाँवों की नमक रोटी के लिए लालायित होकर दौड़ते आयेंगे। हमें देहातों को हरा-भरा गोकुल बनाना है—स्वाश्रयी—स्वावलम्बी, आरोग्य संपन्न, उद्योगशील, प्रेमल। ईख का कोल्हू चल रहा है, चरखा चल रहा है, धुनिया धुन रहा है, तेल का कोल्हू चुर्र-चर्र बोल रहा है, कुँए पर मोटर चल रही है, चमार जूता बना रहा हैं और वंशी बजा रहा है—ऐसा गाँव बनने दो। अपनी गलती से हमने गाँवों को मरघट बनाया। आइये, फिर उनको गोकुल बनायें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१-हमारे जवानों के शौर्य ने शत्रु के मनसूबे धूल में मिला दिए।
२-हमारे यहाँ बने हथियारों के सामने अमरीकी हथियार कामयाब न हो सके।

३-हमें अपने को अन्नोत्पादन में भी आत्म निर्भर होना है।
४-अमरीका या अन्य देशों का मुँह ताकना धोखा दे सकता है।

देश का हर व्यक्ति राष्ट्र की इस सबसे बड़ी समस्या में अपना योग दे सकता है। जिला सहकारी बैङ्क में अपना धन आप जमा करें जहाँ वह पूर्ण सुरक्षित है, ब्याज दूसरे बैङ्कों से आपको ज्यादा मिलेगा और किसानों के अन्नोत्पादन के कार्य में आपके धन का उपयोग होगा।

जिला निवासियों के लिये हमारी शुभ कामनाओं के साथ हम आशा भी करते हैं कि आप अपने ही सहकारी बैंक को अपनाकर अपना तथा इस बैंक का और अपने राष्ट्र का सदैव हित करेंगे।

ब्याज की दरें

सेविंग खाता पर	४	प्रतिशत वार्षिक
कौल डिपौजिट पर	३।।।	,, ,,
६ माह की अमानत पर	५।।	,, ,,
१ साल की अमानत पर	६।	,, ,,
२ साल की अमानत पर	६।।	,, ,,
३ साल की अमानत पर	६।।।	,, ,,
४ साल की अमानत पर	७	,, ,,
५ साल की अमानत पर	७।	,, ,,
७ साल की अमानत पर	७।।	,, ,,

मथुरा जिला सहकारी बैंक लि०, मथुरा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Foundation, Chandigarh

अपनी सम्पूर्ण बचत आज ही

उत्तर प्रदेश कोअपरेटिव बैंक लिमिटेड

प्रधान कार्यालय लखनऊ में

जमा कर अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कीजिये

उक्त बैंक सहकारी आन्दोलन के अन्तर्गत सरकारी साझेदारी तथा बैंकिंग संस्थान अधिनियम के अन्तर्गत सरकार द्वारा निरीक्षित एक मात्र एवं विश्वसनीय बैंकिंग संस्था है

शाखाएँ — आगरा, अल्मोड़ा, बरेली, फैजाबाद, डी० ए० वी० कालेज कानपुर, गोंडा, पीलीभीत, कानपुर, रामपुर, सीतापुर, वाराणसी।

क्षेत्रीय कार्यालय — आगरा, गोरखपुर, कानपुर, बरेली।

हमारी विशेषताएँ

१—राज्य की समस्त कृषि योजनाओं के लिए जिला एवं केन्द्रीय सहकारी बैंकों के माध्यम से आर्थिक सुविधाएँ प्रदान करना।

२—प्रत्येक प्रकार की बैंकिंग सुविधायें प्रदान करना।

३—अल्प सामयिक एवं मियादी अमानतें आकर्षक दरों पर स्वीकार करना।

आप भी राष्ट्र निर्माण योजनाओं की पूर्ति, उसकी स्मृद्धि के निमित्त अपना धन लगाकर सहयोग प्रदान कर राष्ट्र निर्माण में हाथ बटाएँ।

अन्य जानकारी

क्षेत्रीय अधिकारी, शाखा प्रबन्धक या मुख्य कार्यालय से प्राप्त कीजिये

गत ५ वर्षों में बैंक की प्रगति के कुछ आंकड़े

	३०-६-६०	३०-६-६५
१—पूंजी	२५४·७६ लाख	५३८·७६ लाख
२—अमानतें	७४७·४६ लाख	२०६०·०८ लाख
३—सहकारी संस्थाओं को ऋण दिया गया	१३०५·९५ लाख	३३३६·२५ लाख
४—लाभ	१६·०५ लाख	३७·०२ लाख

गङ्गासिंह चूड़ामणि — आई० ए० एस० अध्यक्ष

मथुरा सिंह — उपाध्यक्ष

ए० आर० खान — सामान्य प्रबन्धक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसानों के लिए स्वर्ण अवसर

यानमार पावर टिलर

(पी० के० ए० २० एन० टी० ९५ के०)

(७–१०·५ अश्व शक्ति का)

प्रयोग कर

कृषि उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि का महत्वपूर्ण साधन

छोटे किसान के लिए ट्रैक्टर जो संसार प्रसिद्ध १०·५ बी० हा० पा० यानमार डीजल इञ्जिन एवं निम्न उपयन्त्रों से युक्त है :–

न्यूमैटिक रबर ह्वील्स, राटार टिलर स्टैण्डर्ड ट्रल किठ माउन्टेड डीजेल इञ्जिन यानमार माडेल एन० टी० ९५ के० आयरन ह्वील्स वाटर फिल्ड राइडिंग लापरेट्स सेडल तथा न्यूमैटिक रीयर ह्वील एक्स्टेंशन ऐटरी तथा कवर, स्वायल हीपिंग बोर्ड लाइट इक्विपमैन्ट डावनेमों के साथ दो साइड राइडर टीम स्पेशल रौटरी ब्लेड्स, ड्रम के साथ फोर्क राटार टाइन्स तथा दो स्टैग प्लाड।

किसानों के कृषि सम्बन्धी प्रत्येक कार्य जुताई, हेंगाई, पटेला पानी निकालना व छिड़काब आदि।

विशेष जानकारी के लिये–कृपया सम्पर्क स्थापित करें :–

उत्तर प्रदेश

कोआपरेटिव फैडरेशन लिमिटेड,

६ कैंपर रोड, लखनऊ।

(उत्तर प्रदेश के लिये एकमात्र वितरक)

फोन नं० : २४८५२, २५८६४, २३५६३, २७७६०, २८०३३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज संस्कृति परिषद्,

प्रधान कार्यालय, मथुरा।

१. ब्रज मण्डल के कुञ्ज-निकुंज, सर-सरोवर, घाट, तीर्थादि का पुनरुद्धार करने,

२. ब्रजभाषा साहित्य का अनुसन्धान, सम्वर्द्धन अभिरक्षण करने,

३. ब्रजभाषा के विद्वानों, मनीषियों, साहित्यकारों का सम्मान करने,

४. ब्रज संस्कृति के कलाकारों, संगीतज्ञों, चित्रकारों, गीतकारों को प्रश्रय देने,

५. ब्रजभाषा और संस्कृति का एक विशाल पुस्तकालय स्थापित करने तथा

६. कृषि के उन्नयन में योग देने

को

कृत संकल्प है।

चक्रेश्वर सिंह
प्रधान मन्त्री
ब्रज संस्कृति परिषद्, मथुरा।

नवाब सिंह चौहान
अध्यक्ष
ब्रज संस्कृति परिषद्, मथुरा।

बाबू वृन्दावनदास अध्यक्ष ब्रज साहित्य मण्डल, के लिए राष्ट्रीय प्रेस, शेक्सियर नगर, मथुरा में मुद्रित तथा प्रकाशित।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

भाद्रपद सं० २०२४ वि०

सम्पादक :
श्री वृन्दावन दास
बी० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक :
श्री किशन प्रसाद जैन
संयुक्त प्रधान मन्त्री

अखिल भरतीय ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा

वर्ष २१] वार्षिक मूल्य ४) [अङ्क २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुक्रमणिका

१. संपादकीय	:	श्री वृन्दावनदास	१
२. साधिका, चातकी	:	श्री रामभरोसे हयारण 'अभिराम'	४
३. जन्मान्तर (कविता)	:	साहित्याचार्य श्री श्यामसुन्दर 'बादल'	५
४. जन्मान्तर (कविता)	:	श्री उमाशंकर दीक्षित एम. ए.	७
५. हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल	:	श्री वृन्दावनदास	९
६. परख (कविता)	:	श्री भगवानदत्त चतुर्वेदी	१३
७. राष्ट्र-भाषा के दधीचि–'नवीनजी'		डा० लक्ष्मीनारायण जी दुबे	१४
८. स्व० श्री घासीराम व्यास की ब्रज-साहित्य को देन	:	श्री रामचरण हयारण मित्र	२०
९. जनपद कल्याणी योजना के नेता डा० वासुदेव शरण अग्रवाल	:	श्री श्रीराम शर्मा एम. ए.	२३
१०. हिन्दी कविता में गणेश भक्ति का स्वरूप	:	श्री उमाशङ्कर दीक्षित एम. ए.	२६
११. भारतीय इतिहास में यदुवंश	:	श्री वृन्दावनदास	३१
१२. ब्रजभाषा के मुसलमान कवि	:	श्री युगल किशोर चतुर्वेदी एम. ए.	३८
१३. ग्रन्थावलोकन	:	श्री राजेन्द्ररंजन एम. ए.	४३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

[अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य-मण्डल की मुख-पत्रिका]

वर्ष २१] मथुरा भाद्रपद सं० २०२४ [अङ्क २

संपादकीय—

कार्याधिक्य के कारण प्रेसाध्यक्ष अब की बार पत्रिका को कुछ विलम्ब से छाप कर दे सके अतः हम आपसे क्षमा याचना करते हैं। जहाँ तक सम्भव होगा हम पत्रिका को अनवरत रूप से समय पर ही पाठकों के हाथ में देने के लिये कृत संकल्प हैं।

राजभाषा कानून में संशोधन

राजभाषा कानून में संशोधन के विषय को लेकर हिन्दी संसार के वातावरण में कुछ उष्णता आगई है। इसे तो सभी मानते हैं कि अन्ततोगत्वा हिन्दी ही भारत की सम्पर्क भाषा है, इसी से राष्ट्रीय एकता स्थिर रह सकती है और यही वह भाषा है जिसको भारतीय संविधान से मान्यता प्राप्त हुई है। हिन्दी की सार्वभौम मान्यता के उपरान्त इसका विरोध भी है। कुछ विरोध तो निःसंदेह निहित स्वार्थों पर आधारित है और कुछ हमारे कुछ भाइयों का अँग्रेजी के प्रति लगाव के कारण है। अँग्रेजी को अपदस्थ करने के लिये एक योजना यह भी है कि विश्वविद्यालयीय स्तर पर एक शिक्षा का माध्यम अँग्रेजी के स्थान पर क्षेत्रीय भाषा हो। उपकुलपति सम्मेलन ने भी यह निश्चय कर दिया है कि देश के समस्त विश्वविद्यालयों में शिक्षा की माध्यम क्षेत्रीय भाषायें होंगी। इस योजना को कार्यान्वित करने के लिये प्रत्येक क्षेत्रीय भाषा के साहित्य को विश्वविद्यालय-स्तर के अध्ययन के लिये सक्षम बनाना होगा। केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों ने इसके लिये प्रचुर धनराशि व्यय करने के लिये भी अपनी स्वीकृति दे दी है।

हमारा निश्चित मत है कि देश के समस्त विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम वही भाषा होनी चाहिये जो देश की सम्पर्क भाषा है और यह भाषा हिन्दी ही हो सकती है और है। यदि हम इस विशाल देश के जनसमूह को भावात्मक एवं सांस्कृतिक एकता और राष्ट्रीयता के सूत्रों में बाँध कर संगठित करना चाहते हैं, विघटनात्मक प्रवृत्तियों पर विजय पाकर लोगों में देश प्रेम की भावना जाग्रत करना चाहते हैं तो हमें उनको एक सार्वभौम लोकप्रिय भाषा भी देनी होगी। विश्वविद्यालय-स्तर पर प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाना हिन्दी का सर्वाधिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अहित करना है। इससे प्रान्तीयता के जड़ें गहरी होंगी, राष्ट्रीयता के भावों में शिथिलता आवेगी और सार्वदेशिक सम्पर्कों में निरन्तर कमी आती चली जायगी। यदि विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषायें हो गईं और इस प्रकार उनका विकास और प्रचार अपने-अपने क्षेत्रों में बढ़ता रहा तो फिर भविष्य में उनके स्थान पर हिन्दी को प्रतिष्ठापित करने की कल्पना स्वप्नवत् हो जायगी। हम प्रादेशिक भाषाओं को पुष्ट और समृद्ध बनाने के पक्षपाती हैं, हम यह भी मानते हैं कि प्रादेशिक स्तर पर सांस्कृतिक अनुष्ठानों की पूर्ति के लिये उन भाषाओं की स्थिति गौरवमयी बनाई जानी चाहिये परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि इस स्थिति का निर्वाह अखिल भारतीय एकमात्र भाषा हिन्दी की हत्या करके किया जाय। यदि हमें समस्त भारतीय जनता को एक सूत्र में पिरोना है तो समूचे देश में विश्वविद्यालय स्तर पर अनिवार्यतः शिक्षा का माध्यम हिन्दी होना चाहिये, यह बात दूसरी है कि वह आज हो या बीस वर्ष बाद। हमारे मत से जो विश्वविद्यालय अभी से हिन्दी को माध्यम बना सकें वे तो ऐसा तुरन्त कर दें और दूसरे अपनी सुविधा देख कर भविष्य में जब ऐसा कदम उठा सकें उठालें। लक्ष्य सब विश्वविद्यालयों का एक होना चाहिये और वह यह कि शिक्षा का माध्यम हिन्दी को ही बनाना है। प्रादेशिक अथवा क्षेत्रीय भाषाओं का अध्ययन भी ऐच्छिक अथवा अनिवार्य विषयों के रूप में विश्वविद्यालय स्तर पर हो सकता है और होना चाहिये।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा

विश्ववन्द्य महात्मागाँधी द्वारा संस्थापित, पालित और पोषित इस संस्था ने राष्ट्र-भाषा हिन्दी की जो सेवा की है वह स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। उस महापुरुष के आदर्शों से अनुप्राणित उस संस्था के कार्यकलापों में घृणा नाम की किसी वस्तु की गंध तो सौ-सौ कोस नहीं प्रतीत होती है। इसने अपनी विशाल भुजाओं को सदैव प्रेममय आलिङ्गन के लिये फैलाया है। जनता जनार्दन और देश भारती की इसने निस्पृह एवं निःस्वार्थ सेवा की है। इसके कर्मठ कार्य-कर्ताओं ने कभी राजनीतिक पदों की स्पृहा नहीं की है। क्षेत्रीय भाषाओं के विकास, प्रचार, प्रसार में इन कार्य-कर्ताओं ने कभी कोई बाधा उपस्थित नहीं की वरन् उलटे उनमें सहायक ही हुए हैं। ऐसी समादृत, सेवाकार्यरत, राष्ट्रीय संस्था को मद्रास की हिन्दी विरोधी परिषद् द्वारा अपना काम बन्द करने की चेतावनी देने का विचार करना उसकी देशद्रोहिता का परिचायक है। समझ में नहीं आता कि दक्षिण के कुछ विद्यार्थी वर्ग को हिन्दी के प्रति इतनी घृणा क्यों है। हिन्दी में कमजोर होने के कारण परीक्षाओं में वे उतनी सफलता प्राप्त न कर सकेंगे जितनी कि हिन्दी जानने वालों को सम्भवतः प्राप्त हो जायगी यही धारणा उनको हिन्दी का विरोध करने के लिये बाध्य करती है। हमारे पास इस समस्या का हल है और वह यह कि प्रश्नों के उत्तरों पर अङ्क देते समय परीक्षक भाषा की पूर्णतया उपेक्षा कर भावों पर अङ्क दें। सरकार को आयोगों द्वारा इस प्रकार की घोषणा कर देनी चाहिये। परीक्षायें हिन्दी में ही ली जाँय परन्तु अनिश्चित काल तक जब तक कि अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के विद्यार्थी स्वयं यह न कहने लगें कि भाषा की त्रुटियों पर भी नम्बर काटे जाँय भाषा की त्रुटियों की पूर्णतया उपेक्षा कर भावों और विषय पर ही नम्बर दिये जाँय। इस पद्धति को अपनाने से देश के हिन्दी और अहिन्दी भाषी दोनों क्षेत्रों के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विद्यार्थी समान स्तर पर परीक्षाओं बैठने और उत्तीर्ण होने के अधिकारी होंगे। किसी भी एक क्षेत्र के विद्यार्थी की स्थिति दूसरे क्षेत्र के विद्यार्थी की स्थिति से अच्छी या बुरी न होगी। आशा है केन्द्रीय सरकार इस सुझाव पर ध्यान देगी।

हिन्दी सम्वर्द्धिनी योजना

जनपदीय आन्दोलन के जनक स्वर्गीय डा० वासुदेव शरण अग्रवाल की श्राद्धतिथि २७ जुलाई को हो चुकी है। हम इस अवसर पर उनका स्मरण कर उनको श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। वास्तव में हिन्दी को जनपदीय आन्दोलन के आधार पर समृद्ध बनाने की योजना सब से पहिले डा० वासुदेव शरण जी के मस्तिष्क में ही आई। चूँकि 'जनपदीय आन्दोलन' शब्दों का व्यापक अर्थ सामान्य लोगों की समझ में कठिनता से आता था हमने उसका सुगम, सरल, सुबोध पर्याय 'हिन्दी सम्वर्द्धिनी योजना' निश्चित किया है। ब्रजभारती परिवार की श्रद्धांजलि के रूप में हम विद्वद्वर श्री राम जी शर्मा लिखित स्वर्गीय डा० अग्रवाल पर एक लेख इस अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। शर्मा जी ने लेख में जनपद कल्याणी योजना पर प्रकाश डाला है।

हिन्दी भवनों का निर्माण

अपनी पत्रिका के विगत अङ्कों में हमने हिन्दी भवनों के निर्माण की आवश्यकता पर बल दिया था। अपने देश की भाषा, उसका साहित्य एवं संस्कृति के प्रचार प्रसार की दृष्टि से विदेशों में भी ऐसे भवनों का निर्माश वांछनीय है। प्रसन्नता का विषय है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने शीघ्र ही दिल्ली, कलकत्ता बम्बई, हैदराबाद आदि बड़े-बड़े नगरों में एक-एक हिन्दी भवन बनवाने का निश्चय किया है। हम तो पहिले ही इस योजना को कार्यान्वित करने का आग्रह कर चुके हैं। साहित्य सन्देश के यशस्वी सम्पादक श्री महेन्द्र जी ने अपनी पत्रिका के जून अङ्क में स्पष्ट ही लिख दिया है कि ब्रजसाहित्य मण्डल ने तो इस योजना के सुझाव का सूत्रपात पहिले ही कर दिया था। श्री महेन्द्र जी ने भी अपने संपादकीय में हिन्दी भवन निर्माण योजना को सराहनीय एवं उपादेय बताया है।

महाकविग्वाल पुण्य शताब्दी समारोह

समारोह सम्बन्धी परिपत्र सभी विद्वज्जनों की सेवा में भेजा जा चुका है। कुछ कारणों-वश समारोह को स्थगित करना पड़ा, परन्तु निकट भविष्य में ही समारोह धूम-धाम के साथ सम्पन्न होगा, निश्चित कार्यक्रम से शीघ्र ही सूचित किया जायगा ऐसी आशा है।

'नवीन' अध्ययन तथा शोधपीठ

विक्रमविश्वविद्यालय के सिंडीकेट ने अपनी दिनाङ्क २७-७-६७ की बैठक में उपरोक्त शोधपीठ स्थापित करने का सर्व सम्मत निर्णय ले लिया है। हमें हर्ष है कि विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने हमारी प्रार्थना स्वीकार करली। ध्यान रहे कि हम ब्रजभारती के विगत अङ्कों में इस प्रकार के शोधपीठ की स्थापना पर बल दे चुके थे। इस शोधपीठ के तत्वावधान में न केवल नवीन जी के साहित्य पर गवेषणात्मक अध्ययन होगा अपितु समस्त हिन्दी काव्य और आधुनिक हिन्दी साहित्य पर। हम विक्रम विश्वविद्यालय के निर्णय की सराहना करते हैं तथा अन्य विश्व-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विद्यालयों को भी विक्रम विश्वविद्यालय का अनुकरण करने की सलाह देते हैं। आशा है विश्वविद्यालय हमको सिंडीकेट के प्रतिवेदन की प्रति प्रदान करने की कृपा करेगा।

कवीन्द्र रवीन्द्र की आकांक्षा 'जन्मान्तर'

श्रद्धेय बनारसीदास जी चतुर्वेदी की प्रेरणा से हमने 'जन्मान्तर' के हिन्दी तथा ब्रजभाषा के पद्यानुवाद की एक प्रतियोगिता ब्रजभारती के विगत अङ्क में घोषित की थी। फलस्वरूप पाँच सुन्दर रचनायें प्राप्त हुई हैं। रचयिताओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) श्री अमृतलाल चतुर्वेदी आगरा, (२) श्री श्यामसुन्दर जी खत्री कलकत्ता, (३) श्री उमाशंकर जी दीक्षित मथुरा, (४) आचार्य श्री श्याम सुन्दर जी बादल राठ (हमीरपुर), (५) कविरत्न गोविन्द जी चतुर्वेदी मथुरा।

उपरोक्त पाँच सज्जनों में से प्रथम दो अर्थात् श्री अमृतलाल जी चतुर्वेदी और बाबू श्यामसुन्दर जी खत्री ने प्रतियोगिता में भाग लेने के लिये कवितायें नहीं भेजी थीं। उन्होंने स्पष्ट कर दिया था कि उनके द्वारा कविताओं के भेजे जाने का अर्थ यह न लगाया जाय कि वे प्रतियोगिता में भाग ले रहे हैं। अतः प्रतियोगिता के क्षेत्र में तीन सज्जन ही रह गये। शेष तीनों कविताओं में यह निर्णय करना कठिन है कि कौन-सी कविता नम्बर एक की है और कौन-सी नम्बर दो की। अतः ४५) की पुरस्कार निधि तीनों सज्जनों को मानपूर्वक समान रूप से वितरित कर दी गई है। जिन प्रथम दो सज्जनों ने प्रतियोगिता को दृष्टि में न रख कर कवितायें भेजी थीं उनकी कवितायें अत्यन्त उत्कृष्ट थीं।

पाठकों के मनोरंजनार्थ हम कविताओं को अविकल उद्धृत कर रहे हैं, यदि स्थानाभाव से पाँचों कवितायें न छाप सके तो शेष कविताओं को अगले अङ्क में प्रकाशित कर दिया जायगा।

—वृन्दावनदास

साधिका, चातकी

(रचयिता—श्री रामभरोसे हयारण 'अभिराम')

पउ-पिउ रटत न घटत सनेह नेकु
जो पै घन-घाती, घोर-पाहन दहत है
प्यास की न चिन्ता बरु दरस पिपासा धारि
चाहत चुलूक नाहीं बूँद ही चलत है
प्यार प्रण पालि तनु जीवन समर्प भली
अर्पित भई सी नेह-नद में बहत है
स्वाँति की अराधना में साधना अटूट साध
साधिका की साँची गति चातकी लहत है

*

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जन्मान्तर

[स्व० रवीन्द्रनाथ टैगौर की बंगला कविता का अनुवाद]

(रचयिता—साहित्याचार्य श्री श्यामसुन्दर बादल राठ 'हमीरपुर')

नई सभ्यता के प्रकाश को हाँ-हाँ मैं तज दूँगा रे !
नए बंग में मैं नव-युग का चालक नहीं बनूँगा रे !

क्या क्षति, यदि न विदेश की-
शैर कभी स्वीकार की ।
कभी नहीं दरकार की-
शासकीय उपहार की ।।

यदि आगामि-जन्म में व्रज का मैं ग्वाला बन पाऊँगा,
तो निज गृह में नई सभ्यता का मैं दीप बुझाऊँगा ।
जो नित वंशीवट के तट पर अपनी धेनु चराते हैं,
गुञ्जा का जो स्वयं पहिनते पुष्प-हार, पहिनाते हैं ।

वृन्दावन के कानन में—
वंशी सुनते श्याम की,
उस जीवन-अभिराम की-
चाह स्वयं अविराम की ।

कालिन्दी के काले शीतल, जल में जो कि विहरते हैं ।
वंशीवट के तट पर जिनकी गाएँ-बछड़े चरते हैं ।
प्रातः जग कर, जो कि जगा नित एक-दूसरे को लेते ।
जिनके घर दधि-मन्थन के स्वर श्रवणों में रस भर देते ।।

वहीं जन्म ले देखिये—
गाएँ धूलि उड़ाती हैं;
बधुएँ पय दुह लाती हैं;
प्रांगण स्वर्ग रचाती हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पड़ी तमाल मूल पर सावन के मेघों की छाया रे !
जहाँ जागरण का सन्देशा लेकर चलती काया रे !
कालिन्दी के आर-पार तक छाया जहाँ अँधेरा रे !
उसी अँधेरे में फेरा दे मानेगा मन मेरा रे !

जहाँ घाट पर गोपियाँ,
चढ़ीं नाव पर काँपतीं,
डरतीं सरि अवगाहती,
पार उतरना चाहतीं ।

पुच्छ पसार मयूर जहाँ पर कुञ्जों में रचते नर्तन ।
जहाँ तमाल मूल को घन की छाया से ढकता सावन ।
ग्वाल-बाल हम सभी वहाँ मिल मोर पंख बाँधे सिर पर,
किसी अशोकाराम जाएँगे कालिन्दी के तट सत्वर ।

मधु-ज्योत्स्ना में झूले को-
पुष्प-रज्जु से बाँध कर-
दृढ़ कदम्ब की डाल पर,
झूलेंगे हम रात भर ।

वंशीध्वनि वासन्ती मलयानिल में गूँजेगी नभ तक ।
कालिन्दी-तट हम सब ग्वाले रचें फाग-मेला मोहक ।
नहीं बन्धु, मैं नये बंग में नव-युग रे, क्यों लाऊँगा ?
छलना का क्यों बना पुजारी सरल देश पर छाऊँगा ।
दधि-माखन के ब्रज में कोई छाँह अशोक कदम्ब की–
पा पाऊँ फिर ग्वाल-बाल वन वहाँ अंक भी अम्ब की ।

किसी जन्म में तो कभी-
गोप-बाल बन जाऊँगा ।
नया - बंग अपनाऊँगा,
नव-युग वहाँ न लाऊँगा।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जन्मान्तर

मूल लेखक—कवीन्द्र रवीन्द्र

अनुवादक—श्री उमाशंकर दीक्षित एम. ए.

नव वंग के चालक की नहिं चाह, न चाहूँ जा सभ्यता को जि-उजाला।
काह भयौ जु गयौ न विलायत काह भयौ न भयौ नरपाला।
जोति बुझाऊँ जा सभ्यता की अरु त्याग दऊँ सब ठाट निराला।
केवल चाह बनी जन्मान्तर माँहि बनूँ ब्रज गाम कौ ग्वाला॥

जो जन वंसीवटे तल नित्य बजावहिं बेनु चरावहिं गैय्याँ।
जो जन गुञ्जा की माला गरे मँह पैन्हें पिन्हावहिं लेत बलैय्याँ।
जो जमुना तट सीतल कूल पै केलि करैं जो कदम्ब की छैय्याँ।
सुनें नित वंसी कौ सब्द, विन्दावन, माँहि सुनावैं सदा ही कन्हैय्यां॥

देखौ रे, सवेरौ भयौ, जागौ रे भैय्या अहा,
आपस में पुकारें कैसी प्रीति पुलकाई है।
घर-घर दही के चलावन की गूँज उठी
देखौ व्रज-अँगनायें दुहनी लै आई हैं।

देखौ जा पंथ में धेनु के खुरन ते ही
उड़ी है जो कैसी अहा गगन धूरि छाई है।
धन्य व्रजवासी ग्वाल नित्य जो जगावें जाय
है गयौ सवेरौ तुम जागौ रे भाई है।

सामन के महीना में कारे कजरारे घना
कारी तमालन की डारन पै छाये हैं।
कारी कलिन्दी के कूलन के आर पार
छायौ अन्धेरौ मन गोपिन के डराये हैं।

छायौ अंधेरौ ऐसौ घाट ते न उतरें पार
नाव हू ते जावन में जीय दहलाये हैं।
देखो कुञ्जवन में मोर सुन्दर बु नाचैं अहा,
तमालन पै छाये मेघ देखिकें लुभाये हैं॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धारि कें मयूर पुच्छ फागुन की रैन रम्य,
नील नद तीर कहूँ असोक वन पैठिंगे ।
फूलन की डोर कूँ कदम्बन की डारन पै
डारिकें मचल मचल पैग हू बढ़ाविंगे ।

दक्खिन की पौन माँहि वंसी की मनोहर गूँज
घेरि है सुआसमान ऐसी धुनि मेलिंगे ।
तब ही हम ग्वाल बाल जमुना के तीर जाय
करेंगे किलोल तहाँ मेला रचाविंगे ।

चाहूँ ना वंग कौ नवीन जुग चालक वन
अँधरे या देश की सुसभ्यता जगाऊँ ना ।
माखन औ छैना के गामन में जाय यार
कदम्ब औ असोक की सुछाँह कूँ भुलाऊँ ना ।

छाँडि रम्य भूमि ब्रज मण्डल की सलौना नीकि
जन्म जन्मान्तर में और कहूँ पाऊँ ना ।।
जौ पै जन्म पाऊँ ब्रज गाम के गुपाला कौ
तौ पै नव वंग युग-चालक कहाऊँ ना ।।

देशभक्त हौरेशस--

(संपादक—बा. वृन्दावनदास)

रोमन वीर और देशभक्त हौरेशस के चारु-चरित का वर्णन लॉर्ड मैकोले ने अंग्रेजी में किया है उसी काव्य का ब्रज-भाषानुवाद ब्रजकोकिल सत्यनारायण कविरत्न ने किया है। कविरत्न सत्यनारायण द्वारा रचित यह उद्दाम प्रेरणाप्रद गाथा ब्रज-भाषा के राष्ट्रीय वीर काव्य का प्रतीक है। सरल ब्रज-भाषा में रचा गया यह सुन्दर खंड काव्य है। मूल्य १) रु०

(ब्रज-साहित्य मण्डल, मथुरा से प्राप्य)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल

लेखक—श्री वृन्दावन दास

जिस काल को हिन्दी साहित्य के इतिहास में रीतिकाल कहते हैं उसकी समाप्ति के बाद आधुनिक काल का आरम्भ हुआ। एक प्रकार से युग के परिवर्तन ने एक काल की समाप्ति और दूसरे का उद्घाटन घोषित कर दिया। विलास प्रिय राजागण शीघ्र ही अंग्रेजों के हाथों से सत्ताच्युत हो गये। जब अंग्रेजों ने देश की राजनीति पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया तो रीतिकाल की नींव हिल गई और उसका अन्त हो गया। अंग्रेजी राज्य के साथ हिन्दी जगत में क्या परिवर्तन हुआ यह मनीषि साहित्यकार गुलाबराय जी के शब्दों में सुनिये।

"अंग्रेजी राज्य के साथ गद्य आया। हिन्दुओं ने अपने धर्म को बुद्धिवाद के आलोक में परिष्कृत करना आरम्भ कर दिया। लोगों को प्रतीत हुआ कि जीवन संग्राम कठिन है। बुद्धिवाद और प्रतिद्वन्दिता के समय में भावों के प्रकाशन के लिए पद्य उपयुक्त माध्यम नहीं हो सकता। पद्य में व्रज भाषा का साम्राज्य था किन्तु नवीन युग के आ जाने पर उसकी कोमल कान्त पदावली जीवन की संघर्षमय कठोर भूमि के लिये उपयुक्त न थी।"

बदलते हुए युग का एक प्रभाव यह भी हुआ कि पाश्चात्य विद्वानों ने इतिहास और पुरातत्व के शोध में, प्राचीन भारतीय साहित्य और धर्म के अध्ययन में तथा भारतीय भाषाओं के वैज्ञानिक विवेचन में बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने संस्कृत ग्रन्थों का अनुशीलन करके अनेक शोधपूर्ण तथ्य प्रस्तुत किये। पाश्चात्य विद्वानों की गवेषणा से हिन्दी साहित्य आगे चल कर बहुत प्रभावित हुआ।

इसी काल में प्रेस के आविर्भाव ने हिन्दी जगत में क्रान्ति उपस्थित कर दी। प्रेस ने साहित्य के प्रचार और उसकी अभिवृद्धि में अपना महान योगदान दिया। प्रेस के माध्यम से साहित्य की नई नई शाखाऐं खुलने लगीं और दृष्टि कोण में भी अनेक परिवर्तन होने लगे। एक प्रकार से एक महान् चेतना का उदय होने लगा। कहानी, उपन्यास, नाटक, समालोचना आदि लिखे जाने लगे। गद्य का क्रान्तिकारी विकास होने लगा।

अंग्रेजी साहित्य के सम्पर्क से भी हिन्दी में परिवर्तन आया। अंग्रेजी शिक्षा के परिणाम स्वरूप हिन्दी को भी एक नया मोड़ मिला। ईसाइयों ने अपने धर्म ग्रन्थों बाइबिल आदि का हिन्दी में अनुवाद कराया। उन्होंने अपने धर्म ग्रन्थों के हिन्दी में अनुवादित संस्करण लाखों की तादाद में भारत में बांटे। इसकी प्रति क्रिया यहाँ आर्य समाज, ब्रह्म समाज आदि द्वारा अनेक धर्म ग्रन्थों के प्रचार, वितरण आदि के रूप में हुई। ये सब साहित्य हिन्दी की प्रगति में साधक बना।

सन् १८५७ का राजद्रोह विफल होने के उपरान्त एक राजनीतिक चेतना का उदय हुआ। कांग्रेस, आर्य समाज आदि प्रगतिशील संस्थाओं ने आन्दोलन चलाये। इन आन्दोलनों को प्रगति प्रदान करने के लिए लेख, कविता, कहानी नाटक आदि प्रचुर संख्या में लिखे गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आधुनिक युग में साहित्य सृजन का आधार कल्पना न होकर जन-जीवन हुआ। राष्ट्रीयता की भावना और जनहित की प्रेरणा से खड़ी बोली में अपार गद्य और पद्य की रचना हुई।

ब्रजभाषा गद्य के स्थान पर खड़ी बोली का गद्य सुगमता से हो गया इसका एक कारण यह भी था कि प्राचीन काल में ब्रजभाषा गद्य की कोई निश्चित परम्परा न थी। लोग ब्रजभाषा गद्य लिखने में मनमानी करते थे। यद्यपि बिहारी सतसई, कवि प्रिया, राम चरितमानस आदि की अनेक टीकाऐं ब्रज भाषा गद्य में लिखी गईं लेकिन उनकी शैली एक दूसरे से भिन्न थी। खड़ी बोली गद्य रीतिकाल में भी लिखा गया था। गंग कवि का 'चन्द छन्द बरनन' और राम प्रसाद निरंजनि की योग वशिष्ठ खड़ी बोली गद्य के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। कुछ मुसलमान लेखकों ने जिनमें शाह मीरान बीजापुरी, शाह बुरहान खाँ और सैय्यद मुहम्मद के नाम उल्लेखनीय हैं खड़ी बोली गद्य में रचनाऐं की।

जब खड़ी बोली गद्य विकास को प्राप्त हो रहा था एक अघटित घटना और उपस्थित हो गई। ब्रिटिश सरकार मुसलमानों को खुश करने के लिए उर्दू को तरजीह देने लगी। राज भक्त लोग भी सरकार के भले बनने के लिए उर्दू का राग अलापने लगे। ऐसे लोगों में राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द का नाम विशेष उल्लेखनीय है। राजा साहब ने पहिले तो हिन्दी में कई पुस्तकें जैसे राजा भोज का सपना, वीरसिंह वृत्तान्त, आलसियों का कोड़ा आदि लिखीं, पीछे वे उर्दू के पक्षपाती हो गये। उन्होंने ऐसी भाषा का आविष्कार किया जिसमें हिन्दी होते हुए अरबी और फारसी शब्दों का बाहुल्य था। उन्होंने 'बनारस अखवार' नाम का एक पत्र भी निकाला जिसमें उपरोक्त नई भाषा का डट कर प्रयोग किया गया। इस काल में शकुन्तला नाटक के रचयिता राजा लक्ष्मण सिंह के नेतृत्व में शुद्ध हिन्दी का प्रचार भी चलता रहा।

ऐसे विषम युग में हिन्दी को आशा की एक किरण मिली। वह भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के उदय के रूप में थी। भारतेन्दु का जन्म १९०७ ई० में हुआ। भारतेन्दुजी आधुनिक हिन्दी के जनक थे। वे भक्ति और शृङ्गार रस तक ही अपने को सीमित न रखकर देश प्रेम और सामाजिक समस्याओं के समाधान के प्रति भी जागरूक थे। इन्होंने अपनी भाषा में न केवल मुहाविरों का प्रयोग किया वरन् सरल सुबोध संस्कृत शब्दों का समावेश भी किया। उन्होंने अनेक नाटकों की रचना की जिनका लक्ष्य देश भक्ति की भावनाओं को जाग्रत करना था। उनके मौलिक नाटकों के नाम इस प्रकार हैं:—वैदिकी शिक्षा शिक्षा ना भवति, चन्द्रावली, विषस्य विषमौषधम्, भारत दुर्दशा, नील देवी, अन्धेर नगरी, प्रेम जोगिनी, सती प्रताप, और दुर्लभ बन्धु आदि। इनके मुद्रा राक्षस, सत्य हरिश्चन्द्र और कर्पूर मंजरी आदि नाटक अनुवादित हैं। बाबू हरिश्चन्द्र ने निबन्ध भी प्रचुर मात्रा में लिखे। कवि वचन सुधा और हरिश्चन्द्र मैगजीन आदि पत्रिकाऐं भी उन्होंने निकालीं। उनके चारों ओर साहित्यकारों और कवियों की एक मण्डली थी जिसका उनको पूर्ण सौहार्द और सहयोग प्राप्त था। ये साहित्यकार विभिन्न प्रतिभाओं के धनी थे। इनमें कुछ नाटककार, कुछ उपन्यास लेखक, कुछ निबन्धकार, कुछ पत्र सम्पादक और कुछ कवि थे। सर्वश्री प्रताप नारायण मिश्र, लाला श्री निवासदास, बालकृष्ण भट्ट, बालमुकुन्द गुप्त, बद्री नारायण चौधरी, अम्बिका दत्त व्यास, राधाकृष्ण दास, देवकी नन्दन खत्री, राधाचरण गोस्वामी, किशोरीलाल गोस्वामी आदि प्रमुख साहित्यकार भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के समकालीन थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतेन्दु युग में हिन्दी में विशिष्ट परम्पराओं की स्थापना हुई। हिन्दी के प्रचार की दृष्टि से यह काल अत्यन्त महत्वपूर्ण था। इस युग में हिन्दी गद्य का सर्वतोमुखी विकास हुआ। भारतेन्दु की मृत्यु सं० १९४१ में हो गई।

भारतेन्दु के बाद हिन्दी संसार में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का उदय हुआ। द्विवेदी जी भी हिन्दी के एक युग निर्माता थे। तत्कालीन प्रचलित भाषा को देख कर द्विवेदी जी ने सर्व प्रथम यह अनुभव किया कि भाषा को व्याकरण जन्य शुद्धता की आवश्यकता है। वे प्रयाग से प्रकाशित मासिक पत्रिका सरस्वती के संपादक थे। उन्होंने अनेक नये लेखक बना दिये। वे बहुधा लेखकों के लेखों की काट छाँट किया करते थे और नये लेखक उनकी काट छाँट का मनन कर शुद्ध और परिमार्जित भाषा में लिखने का अभ्यास करते। इस प्रकार उनका व्यक्तित्व स्वयं एक महान् संस्था के रूप में उभर कर हिन्दी संसार के सामने आया। द्विवेदी जी ने विदेशी भाषाओं के अनेक शब्दों के सुन्दर हिन्दी पर्यायों की स्थापना की और इस प्रकार हिन्दी के भण्डार की वृद्धि करने का उनको यश मिला। उन्होंने हिन्दी को एक सरल और सुबोध शैली दी। वह भाषा जो संस्कृत मिश्रित शब्दों की भरमार से जन साधारण की पहुँच से दूर होती जा रही थी उसको सरल और सुबोध बनाने का श्रेय आचार्य द्विवेदी को ही है। आचार्य महावीर प्रसाद ने हिन्दी की अनेक समस्याओं का बड़ी दक्षता से समाधान कर उसको एक रूप दिया।

इस काल में कई इतिहास भी लिखे गये। उदाहरण के लिए एक इतिहास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा और एक डा० श्यामसुन्दर दास ने। कई महत्वपूर्ण संस्थाओं जैसे नागरी प्रचारिणी सभा और हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रकाशन किया। उत्कृष्ट कृतियों पर लेखकों को पुरस्कार के रूप में प्रोत्साहन दिया गया। राजनीतिक नेताओं ने भी हिन्दी की उन्नति के लिए प्रचार किया।

इस काल में कई महत्वपूर्ण संस्थाओं का निर्माण भी हुआ जैसे राष्ट्र भाषा प्रचार समिति वर्धा और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास। विश्वविद्यालयों में भी हिन्दी को एक विषय के रूप में स्थान मिला, इससे पूर्व उनमें हिन्दी को मान्यता प्राप्त नहीं थी। इस काल में अनेक विषयों जैसे इतिहास, राजनीति, समाज शास्त्र आदि पर उपयोगी एवं महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे गये।

द्विवेदी जी के बाद आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी नवीन शैली द्वारा हिन्दी गद्य को प्रौढ़ता प्रदान की। उनकी भाषा में एक भी शब्द व्यर्थ न होता था। वह पुनरावृत्ति दोष से सर्वथा रहित थी। पं० रामचन्द्र शुक्ल समालोचना शास्त्र के आचार्य थे।

उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द का हिन्दी और उर्दू पर समान अधिकार था। उन्होंने जन-साधारण के समझ में आने वाली सरल भाषा का प्रयोग किया। उनकी भाषा में कहावतों और मुहाविरों का भी बाहुल्य रहता था। प्रेमचन्द जी की शैली प्रवाहमयी थी। उनकी शैली का कई प्रसिद्ध कहानी-कारों ने अनुसरण किया, उनमें कौशिक, जैनेन्द्र और सुदर्शन के नाम उल्लेखनीय हैं। सर्वश्री इलाचन्द्र जोशी, भगवती चरण वर्मा और अज्ञेय ने कहानी लेखन की दिशा में कुछ नई पद्धति अपनाई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बहुत से विद्वान् सन् १९२० से हिन्दी का वर्तमान युग मानते हैं। यह ठीक भी है कारण इसका समारम्भ महात्मा गाँधी के असहयोग आन्दोलन से होता है। राष्ट्रीय भावना के उदय होने के कारण हिन्दी की पत्रकारिता के क्षेत्र में एक महान् क्रान्ति उपस्थित हो गई। अनेक दैनिक पत्रों का प्रकाशन आरम्भ हो गया। मासिक पत्रिकाऐं भी कई उच्च कोटि की निकलने लगीं। इनमें माधुरी, चाँद, कल्याण, विशाल भारत, हंस, विश्वमित्र, विश्वभारती, संगम आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इस युग में दैनिक पत्र भी बड़ी सजधज से निकले और अच्छा प्रचार पा गये। दैनिक पत्र 'आज' ने दैनिक पत्रों में वह स्थान प्राप्त किया जो मासिक पत्रिकाओं में सरस्वती ने प्राप्त किया था। अन्य दैनिक पत्रों में आर्यमित्र सैनिक, प्रताप, नवयुग, भारत, लोकमान्य, विश्वमित्र, नव भारत, हिन्दुस्तान, सन्मार्ग आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। पद्मश्री डाक्टर हरिशंकर शर्मा एवं पं० बनारसी दास चतुर्वेदी ने पत्रकारिता के क्षेत्र में हिन्दी की अपूर्व सेवा की।

नवीन युग में ब्रज भाषा काव्य ने भी प्रगति की। यह कहना सरासर सत्य से मुख मोड़ना है कि नवीन युग में ब्रज भाषा नितान्त उपेक्षित रही। आधुनिक ब्रज भाषा काव्य के सर्वश्रेष्ठ कवि बाबू जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' हैं। उन्होंने दो प्रकार की रचनाऐं की (१) प्रबन्ध काव्य (२) मुक्तक। प्रबन्ध काव्यों में हरिश्चन्द्र, उद्धवशतक और गङ्गावतरण प्रसिद्ध हैं। हिंडोला, साहित्य रत्नाकर शृङ्गार लहरी आदि मुक्तक काव्य हैं। बिहारी सतसई पर उन्होंने बिहारी रत्नाकर नाम से टीका की। रत्नाकर जी के बाद आधुनिक ब्रज भाषा कवियों में सत्य नारायण कविरत्न का नाम अत्यन्त प्रसिद्ध है। उनकी भाषा इतनी मधुर थी कि उनको ब्रज-कोकिल भी कहते हैं। इनकी कविताओं का संग्रह 'हृदय तरंग' के नाम से प्रसिद्ध है। इन्होंने 'उत्तर रामचरित' और 'मालती माधव' नामक नाटकों का ब्रज भाषा में अनुवाद भी किया।

इनके अतिरिक्त देवी प्रसाद 'पूर्ण', वियोगी हरि और दुलारे लाल भार्गव ने भी ब्रज भाषा में अनेक रचनाऐं कीं। श्री वियोगी हरि को तो उनकी 'वीर सतसई' पर मंगला प्रसाद पारितोषिक प्राप्त हुआ। श्री दुलारे लाल भार्गव को दुलारे दोहावली पर देव पुरस्कार मिला था। अन्य ब्रज-भाषा कवियों में नाथूराम शंकर शर्मा, लाला भगवानदीन, किशोरीदास बाजपेयी, गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही', राम कृष्णदास, हरदयाल सिंह और बचनेश जी के नाम उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक खड़ी बोली काव्य द्विवेदी युग की देन है। आचार्य द्विवेदी ने गद्य के साथ पद्य में भी खड़ी बोली का मार्ग प्रशस्त किया। द्विवेदी युग के हिन्दी काव्य की दो प्रवृत्तियाँ विशेष ध्यान देने योग्य हैं (१) हिन्दी साहित्य की रीति कालीन शैली का विरोध (२) विषय वस्तु की प्रधानता। श्री मैथिली शरण गुप्त द्विवेदी युग के सर्वश्रेष्ठ कवि समझे जाते हैं। गुप्त जी की कविता का व्यापक प्रचार हुआ। गुप्त जी ने अपनी रचनाओं में मानव जीवन के प्रति यथार्थ वादी दृष्टिकोण अपनाया। गुप्त जी हिन्दू संस्कृति के पोषक और राष्ट्रीयता के समर्थक थे। भारत भारती, जयद्रथ वध, पंचवटी, साकेत, यशोधरा, सिद्धराज, झंकार आदि गुप्त जी की प्रमुख रचनाऐं हैं। अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध ने विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया। वे भी द्विवेदी युग के श्रेष्ठ हिन्दी कवि थे। 'प्रिय प्रवास' और 'वैदेही बनवास' उनकी महान् कृतियाँ हैं। द्विवेदी युग के अन्य उत्कृष्ट एवं ख्यातनामा कवियों में लाला भगवानदीन, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, रामनरेश

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्रिपाठी, सुभद्राकुमारी चौहान, नाथूराम शंकर शर्मा, रामचरित उपाध्याय, श्याम नारायण पाण्डेय के नाम उल्लेखनीय हैं। नाथूराम शंकर शर्मा, बालकृष्ण शर्मा नवीन और माखनलाल चतुर्वेदी की राष्ट्रीय रचनाओं ने बड़ी ख्याति प्राप्त की। सियारामशरण गुप्त का काव्य भी बड़ी उच्च कोटि का है। उन्होंने भावात्मक और विचारात्मक कविताओं का सृजन किया।

द्विवेदी युग में एक प्रकार से वर्तमान हिन्दी के गद्य और पद्य दोनों का निर्माण प्रचुर मात्रा में हुआ। द्विवेदी युग ने हिन्दी का निर्माण, संस्कार और प्रचार सभी कुछ किया।

प्रस्तुत लेख हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल को वस्तुत: द्विवेदी युग तक ही सीमित करता है। इसमें साहित्य की अनेकों अन्य विधाऐं स्पर्श किये बिना ही रह गईं हैं। हिन्दी साहित्य के अत्यन्त अर्वाचीन काल का तो इसमें कोई वर्णन ही नहीं आया है। वस्तुत: हिन्दी साहित्य की अर्वाचीन प्रगति पर तो पृथक् रूप से एक स्वतन्त्र लेख वांछित है। हिन्दी साहित्य का द्विवेदी युग से अब तक का इतिहास अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वर्तमान युग में साहित्य की अनेक विधाऐं खूब विकसित हुईं हैं, बहुत सी नवीन मान्यताऐं स्थापित हुईं हैं, भाषा परिष्कृत और परिमार्जित हुई है, अनेक युगसृष्टा कवियों और साहित्यकारों ने साहित्य सृजन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। ब्रज भाषा के क्षेत्र में भी वर्तमान काल की अनेकों महत्वपूर्ण साहित्यिक और ऐतिहासिक उपलब्धियाँ हैं। हिन्दी साहित्य के अर्वाचीन काल की प्रगति को एक स्वतन्त्र लेख द्वारा चर्चित करना ठीक होगा।

परख

दोहा

(भगवान् दत्त चतुर्वेदी, मथुरा)

मूरख नें पथ में पर्‌यौ, लख्यौ मलिन नग गोल।
हत भागी जान्यों न वह, है यह रतन अमोल॥

कवित्त

मारग में धूर सनों रतन पर्‌यौ हो एक,
ताहि ज्ञानहीन दीन जानहू न पायौ है।
काच जानि पथ सों हटाय ढेर कूरे भरे,
घूरे पै उछारि फेंकि हिय हरसायौ है॥
वाही राह चलतें निगाह पारखी की परी,
भाग कों सराहि ताहि तुरत उठायौ है।
महुर हजार में मही पति कों सोंपि तानें,
हीरक कौ फेरि पूर्व गौरव बढ़ायौ है॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राष्ट्रभाषा के दधीचि--'नवीन जी'

(डा० लक्ष्मीनारायण दुबे एम. ए-सी. एच. डी. साहित्यरत्न
प्राध्यापक हिन्दी विभाग सागर विश्वविद्यालय सागर)

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' राष्ट्रभाषा हिन्दी के महान् रक्षकों एवं उन्नायकों में से रहे हैं। उन्होंने हिन्दी को राजभाषा के पद पर अभिषिक्त करने के लिए जो भगीरथ प्रयत्न किये, स्वार्थ व पद-लोलुपता को ठुकराया, राजनेताओं से मुठभेड़ ली और सफलता प्राप्त की है, वह हिन्दी भाषा के लिए एक अविस्मरणीय गाथा है। संविधान-परिषद् में हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार कराने में उनकी प्रबल व महत्वपूर्ण कार्य भूमिका रही है। इस रूप में वे सदा-सर्वदा हिन्दी के प्यारे व प्रतिष्ठित नेता तथा अभिभावक माने गये। राष्ट्रभाषा के अध्वर्यु 'नवीन' ने लिखा था—यदि आप मुझसे पूछना चाहें कि हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा बनाने का प्रयत्न किस दिन प्रारम्भ हुआ तो मैं इतिहास के पृष्ठों को साक्षी बनाकर कहूँगा कि वह था आज से (सन् १९३५ ई०) २९ वर्ष ३ मास पहले का सन् १९१६ के दिसम्बर मास के अन्तिम सप्ताह का कोई वह दिन, जिस दिन गान्धी जी के श्रीमुख से हिन्दी के लिये भारत की राष्ट्र भाषा की उपाधि विनिःसृत हुई।[1] गान्धीजी के अनुरोध के फलस्वरूप सन् १९२५ में कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन में हिन्दी सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ और वह पास हो गया। प्रस्ताव इस प्रकार था—"कांग्रेस की यह सभा प्रस्ताव पास करती है कि कांग्रेस, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और वर्किंग कमेटी की कार्यवाई आमतौर पर हिन्दुस्तानी में चलेगी। अगर कोई वक्ता हिन्दुस्तानी न जानता हो या दूसरी आवश्यकता पड़ने पर अँग्रेजी या प्रान्तीय भाषा इस्तेमाल की जा सकती है। प्रान्तीय कमेटियों की कार्यवाई आमतौर पर प्रान्तीय भाषाओं में चलेगी। हिन्दुस्तानी भी इस्तेमाल की जा सकती है।"[2]

हिन्दी के राष्ट्र भाषा प्रश्न पर, 'नवीन' जी का गान्धी व जवाहरलाल नेहरू से गहरा मतभेद हो गया था। महात्मा गान्धी 'हिन्दुस्तानी' को राष्ट्र भाषा बनाना चाहते थे जिसे 'नवीन' जी ने कभी भाषा के रूप में भी स्वीकार नहीं किया। हिन्दुस्तानी का भारत सरकार और हिन्दुस्तानी अकादमी ने जो स्वरूप निकाला, बनाया व निर्धारित किया था, वह हिन्दी व उर्दू दोनों का मिश्रण था।[3]

श्री चन्द्रबली पाण्डेय[4] ने लिखा था कि हिन्दुस्तानी नीति की भाषा हो सकती है, प्रतीति को कदापि नहीं, हिन्दुस्तानी नीति की भाषा बन सकती है, प्रीति की कदापि नहीं।[5] हिन्दुस्तानी

---

१. 'साहित्य समीक्षांजलि,' पृष्ठ १८४।
२. 'भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा,' पृष्ठ १४९ से उद्धृत।
३. श्री चन्द्रबली पाण्डेय—'हिन्दी की हिमायत क्यों ?' पृष्ठ ५९।
४. श्री चन्द्रबली पाण्डेय—'हिन्दी की हिमायत क्यों ?' पृष्ठ ६०।
५. वही, हिन्दुस्तानी की हिमायत क्यों, पृष्ठ १।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का रूप महात्मा गान्धी के शब्दों में ऐसा है जिसमें नागरी और उर्दू लिपि को स्थान दिया जाता है जो भाषा न फारसी-मय है न संस्कृतमयी है।[1]

राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन ने इस दिशा में सर्वोपरि नेतृत्व किया। सेठ गोविन्द दास, बालकृष्ण शर्मा आदि ने उनको इस क्षेत्र में पूर्ण सहयोग दिया। इस विषय में टण्डन जी व गान्धी जी में मतभेद हो गया था। टण्डन जी का इस विषय में मत था—"भाषा और लिपि दोनों ही के समन्वय का प्रश्न है, क्योंकि अनुभव से दिखाई पड़ रहा है कि साधारण कामों में तो हम एक भाषा चलाकर दो लिपि में उसे लिख लें, किन्तु गहरे और साहित्यिक कामों में एक भाषा और दो लिपि का सिद्धान्त चलेगा नहीं। भाषा का स्थायी समन्वय तभी होगा जब हम देश के लिए एक साधारण लिपि का विकास कर सकें। काम बहुत बड़ा अवश्य है, किन्तु राष्ट्रीयता की दृष्टि से स्पष्ट ही बहुत महत्व का है।'[2] गान्धी जी ने इस विचार को स्वीकार नहीं किया और अपने दिनांक २५-७-१९४५ के पत्र द्वारा हिन्दी साहित्य सम्मेलन से त्याग-पत्र दे दिया। इस पत्र में उन्होंने लिखा। "राष्ट्रभाषा को मेरी व्याख्या में हिन्दी और उर्दू लिपि और दोनों शैली का ज्ञान आता है।"[3] सेठ गोविन्ददास ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मेरठ अधिवेशन में सन् १९४८ में अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था—"हिन्दुस्तानी कोई भाषा है ही नहीं। उसका न तो कोई व्याकरण है न साहित्य। जिस भाषा का अस्तित्व ही नहीं, वह राष्ट्रभाषा कैसे बनाई जा सकती है?" इसी भाषण में उन्होंने हिन्दी के पक्ष का इतिहास निरूपण करते हुए कहा था कि "विदेशी राजभाषा अँग्रेजी को अपदस्थ करने के प्रश्न पर सब एक मत थे किन्तु दो लिपियों वाली कृत्रिम हिन्दुस्तानी को वह सिंहासन दिया जाय अथवा विश्व की एकमात्र वैज्ञानिक लिपि नागरी से मण्डिता, इस विशाल देश की स्वयं सिद्धा राष्ट्रभाषा हिन्दी को दिया जाय इस प्रश्न को लेकर दो विचार धाराओं के समर्थक दल बन गये। एक दल में राजनीति के कर्णधारों की शक्ति और दूसरे में करोड़ों जनता की हार्दिक भावनाओं का समवेत स्वर था।"[4]

'नवीन' जी ने भी हिन्दुस्तानी का डटकर विरोध किया। उन्होंने इस दिशा में लेखनी एवं वाणी, दोनों का ही सदुपयोग किया। उन्होंने लिखा था कि "भारत की आम भाषा को फारसी और अरबी का जामा पहिना देना असंगत और अव्यावहारिक ही नहीं, बल्कि अमाननीय भी है।.....वर्तमान हिन्दुस्तानी में हम अपने उच्चतम भाव और भावनाओं को व्यक्त ही नहीं कर सकते। दैनिक विचार और भावपूर्ण कल्पनाएँ, रूखी प्राण हीन और दार्शनिक प्रयोग में आने वाली भाषा द्वारा व्यक्त नहीं की जा सकती।"[5]

---

१. महात्मा गान्धी का श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन को लिखित (दिनांक २८-५-४५ का) पत्र, 'राजर्षि अभिनन्दन-ग्रन्थ,' पृष्ठ ९०।

२. वही, (दिनांक ११-७-४५) पृष्ठ ९२।

३. श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन का महात्मा गान्धी को दिनांक ११-७-४५ को लिखित पत्र, 'राषर्षि' अभिनन्दन ग्रन्थ,' पृष्ठ ९४।

४. 'सेठ अभिनन्दन ग्रन्थ' : पृष्ठ ६५।

५. 'आगामी कल,' हिन्दुस्तानी का प्रचार घातक है, मई, १९४४, पृष्ठ ३२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संयुक्त प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का पंचम अधिवेशन, प्रयाग में ३१ मार्च, १९४५ को डा० रामप्रसाद त्रिपाठी की अध्यक्षता में हुआ था जिसका उद्घाटन राजर्षि टण्डन ने किया था। इस अधिवेशन में डा० सम्पूर्णानन्द ने, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा सम्मेलन के वर्धा के निर्णयों के विरोध में एक प्रस्ताव रखा था जिसका समर्थन करते हुए 'नवीन' जी ने कहा था कि "यह कहना शायद अश्लील और मूर्खतापूर्ण जान पड़ेगा कि गान्धीजी हिन्दी का खतना कर रहे हैं, पर इतना तो निःसन्दिग्ध है कि उससे हिन्दी के हित की वृद्धि नहीं हो सकती। मैं बार-बार कह चुका हूँ कि संस्कृत और प्राकृत मिश्रित हिन्दी हमारे देश की राष्ट्रभाषा है। यदि हम हिन्दुस्तानी के रूप में कोई नयी भाषा चलाते हैं तो वह बंगला, मराठी, गुजराती, मुसलमानों पर एक नयी चीज लाद देना होगा। इससे बड़ी गड़बड़ी पैदा होगी।"[१]

काशी अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण में भी 'नवीन' जी ने अपनी सिंह-गर्जना में कहा था कि "मैं इस बात का घोर विरोधी हूँ कि हिन्दुस्तानी नामक किसी कपोल-कल्पित भाषा के सृजन के नाम पर हिन्दी का स्वरूप विकृत किया जाय। हिन्दुस्तानी नामक भाषा का हमारे जीवन में, हमारी संस्कृति में, हमारी जन-रुचि में, कोई स्थान नहीं है। हिन्दुस्तानी नामक कपोल-कल्पित भाषा एक ऐसा उपहासास्पद प्रयास है जो कि सांस्कृतिक सम्मेलन के नाम पर वास्तव में संस्कृति सांकर्य को प्राणोदित करता है। मैं समझता हूँ कि गान्धीजी हिन्दुस्तानी का उद्घोष करके देश को भ्रान्त दिशा की ओर ले जा रहे हैं।"[२] उनका यह स्पष्ट मत था कि "मेरे देश की ऐतिहासिक परिपाटी, संस्कृति, जनरुचि एवं जन-हित भावना का आदेश है कि वर्तमान आवश्यकता एवं वर्तमान विचारधारा को व्यक्त करने वाले अभिनव शब्द संस्कृत अथवा देशी भाषाओं से ही आयें।"[3]

'नवीन' जी के इस प्रस्ताव को. कि भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा राष्ट्र-लिपि देवनागरी हो, भारतीय संविधान परिषद् के काँग्रेस दल ने स्वीकृत कर लिया था।[४] डा० ज्ञानवती दरबार ने लिखा है कि "राष्ट्रभाषा सम्बन्धी प्रस्ताव को लेकर संविधान सभा में जो वाद-विवाद हुआ, उसे सुझाने में और हिन्दी के पक्ष का प्रतिपादन करने में 'नवीन' जी की सेवाएँ अविस्मरणीय रहेंगी।"[५]

अन्ततोगत्वा हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा व राज-भाषा का पुनीत व महान् पद प्राप्त हुआ। श्री बालकृष्ण शर्मा के अनुसार, एक राष्ट्रभाषा व राज-भाषा की हमारे देश को आवश्यकता थी। भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी भारत देश ने अन्तर्प्रान्तीय आदान-प्रदान के लिए एवं केन्द्रीय शासन संचालन के लिए एक राज-भाषा की आवश्यकता अनुभव की। देश भर को एक सूत्र में आबद्ध करने के लिए राज-भाषा चाहिये थी और सर्वाधिक समझी जाने वाली भाषा होने के कारण, देश

---

१. 'वीणा,' अप्रैल, १९४५, पृष्ठ २२२।
२. 'वीणा,' नवम्बर, १९४७, पृष्ठ १७–२२।
३. वही।
४. वही : पृष्ठ २१।
५. 'भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा,' पृष्ठ ३८०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ने हिन्दी को राज-भाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया ।[1] इसके द्वारा शासकीय एकता भी हो सकती है ।[2] हिन्दी के राष्ट्र-भाषा हो जाने पर उन्होंने ब्रज साहित्य मण्डल के सहारनपुर अधिवेशन में अहिन्दी भाषा-भाषियों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की थी ।[3] उनका स्पष्ट मत था कि हमारे मन में यह भाव नहीं उठता कि हम लोग हिन्दी भाषा को किन्हीं अन्य भारतीय भाषा-भाषियों पर बलात् आरोपित करें ।[4]

हिन्दी के राष्ट्र-भाषा और देवनागरी लिपि के राजकीय लिपि हो जाने के पश्चात् उन्होंने कुछ कर्त्तव्य, चेतावनियाँ व निर्देश भी दिये थे । वे समस्त भारत के विश्व-विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम हिन्दी चाहते थे । उनका मत था कि विश्व-विद्यालयों का शिक्षा माध्यम हिन्दी हो जाने के कारण प्रान्तीय भाषा-भाषियों के विचारों में बहुत ही स्वस्थ एवं कल्याणकारी परिवर्तन होगा । उनकी दृष्टि विस्तृत होगी, उनके विचार उदार होंगे । हिन्दी के द्वारा वे देश की व्यापक आत्मा के दर्शन कर सकेंगे ।[5] हिन्दी की एक सूत्रता के आविर्भाव के लिए वे देश के सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय की भाषा भी हिन्दी चाहते थे ।[6] उन्होंने चेतावनी दी थी कि हमें अपनी भाषा को सीमित एवं संकुचित रूप में नहीं रखना चाहिये ।[7] हमारे अभीष्ट कार्यों की ओर संकेत करते हुए उन्होंने सुझाया था कि शब्दों का दारिद्रय दूर करना है । शासन सम्बन्धी, विधान सम्बन्धी, न्यायालय सम्बन्धी शब्द कोशों के निर्माण की ओर ध्यान देना है । हमें शिक्षा सम्बन्धी पोथियों का निर्माण करना है ।[8]

अङ्कों के मामले में शर्मा जी का टण्डन जी से मतभेद हो गया था । टण्डन जी नागरी अङ्कों के पक्ष में थे जबकि शर्मा जी रोमन अङ्कों के । अङ्कों के सम्बन्ध में विधान-परिषद् ने यह निर्णय किया था कि भारत-राज्य संघ के राज्य-काज के लिए अङ्कों का जो रूप प्रयुक्त होगा, वह भारतीय अङ्कों का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप होगा । उसी धारा में नवमुद्रित विधान के सत्रहवें भाग की ३४३ वीं धारा ३ की उपधारा में विधान परिषद् ने यह सिद्धान्त भी स्वीकृत कर लिया है कि केन्द्रीय पार्लियामेण्ट किसी भी शासकीय कार्य के लिये अपने विधान द्वारा देवनागरी अङ्कों का प्रयोग चालू कर सकती है ।[9] 'नवीन' जी ने कहा था कि "इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि पन्द्रह वर्ष के उपरान्त यदि केन्द्रीय लोक सभा चाहे तो भारत-शासन के प्रत्येक विभाग में देवनागरी अङ्कों का प्रचलन आरम्भ कर सकती है । मुझे दुःख है कि अङ्कों को लेकर हम एक आन्दोलन खड़ा कर रहे

---

१. ब्रज-साहित्य मण्डल के सहारनपुर अधिवेशन के अध्यक्षीय पद से दिया गया भाषण, 'ब्रज-भारती,' स्मृति-अङ्क, पृष्ठ ६२ ।
२. 'साहित्य सन्देश,' दिसम्बर, १९५६, पृष्ठ २५० ।
३. 'ब्रजभारती,' स्मृति-अङ्क, पृष्ठ ५१ ।
४. 'साहित्य सन्देश,' दिसम्बर, १९५६, पृष्ठ २५० ।
५. 'ब्रजभारती,' स्मृति-अङ्क, पृष्ठ ६३ ।
६. वही : पृष्ठ ६४ ।
७. वही, पृष्ठ ६१ ।
८. वही : पृष्ठ ६१–६२ ।
९. 'ब्रजभारती,' स्मृति-अङ्क, पृष्ठ ५२ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं। इस प्रकार का व्यवहार हिन्दी की भावी प्रगति में बाधक बनेगा।"[१] अङ्कों के सम्बन्ध में 'नवीन' जी ने निवेदन किया था—"काशी नागरी प्रचारिणी सभा, सावरकर जी और विनोबा जी तथा काका कालेलकर सभी लिपि परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव कर रहे हैं। इस दिशा में प्रयत्न भी आरम्भ हो गए हैं। अब सीधा सा प्रश्न यह है कि जब हम लिपि में परिवर्तन करने की बात सोच सकते हैं तब क्या हम अङ्कों में परिवर्तन करने की बात का सुनना भी सहन न करेंगे? मेरा निवेदन है कि हम इस अङ्कों वाले विवाद को लेकर ऐसा कोई काम न करें, जिससे वही परिपाटी पूजा की भावना परिपुष्ट हो, यदि परिपाटी प्रेम बल पकड़ गया तो हम अपना स्वयं का नाश कर लेंगे।"[२] श्री अवनीन्द्र कुमार ने लिखा है कि 'नवीन' जी ने एक विचार सभा में कहा था कि "पिछले साठ साल से दक्षिण की भाषाएँ रोमन अङ्कों का व्यवहार कर रही हैं। हमें उनकी भावना का इस विषय में आदर करना चाहिये। यही कारण है कि 'नवीन' जी ने, टण्डन जी का नागरी अङ्कों के लिए कट्टर समर्थन होते हुए भी, रोमन अङ्क रखने का कभी विरोध नहीं किया।[3]

वे सभी भारतीय भाषाओं के लिये एक लिपि के पक्ष में थे। भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र-प्रसाद व आचार्य विनोबा भावे जी इसी मत के अनुयायी भी हैं। वे एक लिपि के रूप में देवनागरी को प्रतिष्ठित करना चाहते थे क्योंकि प्रायः बीस करोड़ के लगभग जनसंख्या देवनागरी लिपि के द्वारा अपना काम चलाने और शिक्षा ग्रहण करने की अभ्यस्त है।[४] बंग सम्मेलन में हिन्दी परिषद् में अपने अध्यक्षीय भाषण में शर्मा जी ने कहा था कि "यदि सभी भारतीय भाषाएँ एक ही लिपि में लिखी जा सकें तो सभी भाषाएँ हमारे लिये कुछ अधिक सुगम हो जायेंगी। एक लिपि का स्वप्न हमारे पूर्वजों ने देखा था। उन पूर्वजों में बंगाल, मद्रास और महाराष्ट्र प्रान्त के मनीषी थे और आज से अर्द्ध शताब्दी के पूर्व उन्होंने भारतीय भाषाओं के लिए लिपि के आन्दोलन का श्रीगणेश किया था। उन मनीषियों का नाम हम आज भी श्रद्धापूर्वक लेते हैं। स्वर्गीय श्री राजेन्द्र लाल मित्र और पुण्यश्लोक लोकमान्य बालगंगाधर तिलक वे महानुभाव थे जिन्होंने प्रान्तीय भावना से ऊपर उठकर इस बात को बलपूर्वक हमारे सम्मुख रक्खा कि इस देश में सभी भाषाएँ देवनागरा लिपि में लिखी जानी चाहिये।"[५]

हिन्दी के राज-भाषा बन जाने के पश्चात् भी, राष्ट्र-भाषा का यह केहरी और वीर सेनानी हमेशा दहाड़ता ही रहा और हिन्दी के प्रश्न पर हमेशा अग्रणी होकर जूझता रहा। ६ नवम्बर, सन् १९५४ को उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के बस्ती अधिवेशन के अध्यक्षीय पद से 'नवीन' जी ने इस बात पर जोर दिया था कि केन्द्रीय शासन द्वारा एक हिन्दी आयोग की स्थापना शीघ्र की जाय। जब तक इस प्रकार के आयोग की स्थापना होकर व्यवस्थित रूप से हिन्दी की उन्नति

---

१. 'ब्रजभारती,' स्मृति अङ्क, पृष्ठ ५२।
२. वही : पृष्ठ ६१।
३. साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान,' १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ १९।
४. 'साहित्य सन्देश,' दिसम्बर, १९५६, पृष्ठ २५०।
५. साहित्य सन्देश,' दिसम्बर, १९५६, पृष्ठ २५०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की योजना नहीं बनती तब तक वास्तव में राष्ट्रभाषा का उचित प्रसार सम्भव दिखाई नहीं पड़ता।"[१] केन्द्रीय शिक्षा-विभाग की राष्ट्र-भाषा के प्रति तथाकथित उपेक्षा की घोर भर्त्सना करते हुए उन्होंने कहा था—"जो लोग हिन्दी को विकृत, कुरूप, अश्लील और असभ्य बना रहे हैं, वे केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय के लाड़ले हैं। जो फारसी अरबी के शब्दों के माहिर हैं वे शिक्षा मन्त्रालय के प्यारे कोषकार हैं। जो पुरानी हिन्दी-प्रचारक संस्थाओं के विरोध में खड़े हो जाते हैं, वे शिक्षा-मन्त्रालय के अनुदान के हामी हैं। जो दो प्रकार की हिन्दी की बातें करते हैं, वे उसके चहेते हैं।"[२] केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त 'हिन्दी आयोग' के वे सदस्य बनाये गये और उन्होंने अपनी गरिमापूर्ण पूर्व परम्परा के अनुसार, हिन्दी का निःसंकोच समर्थन किया। हिन्दी भारती को 'नवीन' जैसे सपूतों पर ही गर्व है।

संस्कृतनिष्ठ हिन्दी के राष्ट्र-भाषा रूप के उन्नायक 'नवीन' जी ने अपने जीवन, विचार-धारा एवं साहित्य में संस्कृतनिष्ठता को, पूर्णतः उतार लिया था। वे विदेशी भाषाओं से वैज्ञानिक शब्द ग्रहण केने के विपक्ष में थे। इस दिशा में कवि ने विद्वद्वर डाक्टर रघुवीर का आभार माना था। 'नवीन' जी ने कहा था—"मेरा निश्चित मत है कि हमारी वैज्ञानिक शिल्प शास्त्री, वैश्व-कार्मिक, साहित्यिक, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक, राजनैतिक, वैधानिक आदि शब्दावलियाँ संस्कृत तथा एतद्देशीय भाषाओं की आत्मीयता उनके अन्तस् के आधार पर ही निर्मित होनी चाहिये।"[३] 'नवीन' जी उर्दू के विरोधी हो गये। उन्होंने इस दिशा में कहा था कि "उर्दू एक ऐसी भाषा है जो कृत्रिम है। हमारे जन-जीवन से उसका कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। वह ऐसी भावनाओं को लेकर जीवित हुई है जो हमेशा से ही अभारतीय रही है और इसीलिये उसका हमारे देश की संस्कृति से कोई मेल नहीं खाता है।"[४]

श्री 'दिनकर' ने लिखा है कि "संविधान-परिषद् के समय से हिन्दी-हिन्दुस्तानी विवाद का प्रभाव तो ऐसा गम्भीर हुआ कि 'नवीन' जी, चुन-चुनकर, अरबी-फारसी के शब्दों का बहिष्कार करने लगे। एक दिन तो बड़े प्यार से उन्होंने मुझे समझाया था, 'मित्र', कविता हमारे अन्तःपुर की भाषा है। इसमें तो अरबी-फारसी के शब्द मत रखो।"[५] कवि ने इस दिशा में अपनी ही भाषा का सर्वत्र एवं पर्याप्त परिष्कार ही नहीं किया, अपितु 'दिनकर' की 'नर्तकी' शीर्षक कविता का भी परिमार्जन कर डाला।[६]

---

१. 'ब्रजभारती,' सम्पादकीय, भाद्र-मार्ग शीर्ष, सं० २०११, पृष्ठ ७९।

२. वही।

३. उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, बस्ती अधिवेशन, सं० २०११ का कार्य विवरण, सभापति बालकृष्ण शर्मा का भाषण, पृष्ठ २३–२५।

४. 'युगारम्भ,' कार्तिक, सं० २०११, पृष्ठ १०–११।

५. 'वट पीपल,' पृष्ठ २९।

६. वही, पृष्ठ ३०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्व० श्री घासीराम व्यास की ब्रज साहित्य को देन।

(ले० साहित्य शिरोमणि रामचरण हयारण 'मित्र')

बुन्देल खण्ड को इतिहासवेत्ताओं ने वीर और कवि-प्रसूति भूमि की मान्यता देकर सराहना की है। कवीन्द्र केशवदास, देव, बिहारी, पद्माकर, मतिराम प्रभृति, ब्रजभाषा काव्य के शीर्षस्थ कवि, इसी बुन्देल-वसुन्धरा की अमूल्य देन है, और यह शृङ्खला उस प्राचीन काल से इस आधुनिक काल तक, अबाधगति से चली आ रही है।

स्व० श्री घासीराम व्यास उसी प्राचीन परम्परागत् साहित्य क्षेत्र में प्रस्तुत हुये हैं, और इनके काव्य की यह विशेषता रही है कि इन्होंने अपने देश को जब पराधीन देखा तब खड़ी बोली में काव्य का सृजन कर राष्ट्र के नौजवानों को स्वतंत्र होने का सन्देश दिया और जब गरीब किसानों को त्रस्त देखा तब बुन्देल खण्डी लोक रागिनी (सैर) द्वारा उनके निष्क्रिय जीवन में नवीन चेतना भरी। इसके अतिरिक्त ब्रज साहित्य द्वारा जन-मानस को जो उन्होंने जीवन का रस दिया, उसमें उनकी काव्य प्रतिभा का प्रतिबिम्ब झलकता है जो कि साहित्यिकों को पथ-प्रदर्शन का कार्य करता है।

"व्यास" जी का जन्म सुखनइ सरिता के तट पर बसी हुई मधुपुरी (मऊरानीपुर) नगरी में वि० स० १९६० अनन्त चतुर्दशी के दिन सनाढ्य कुल में हुआ था, और मृत्यु राष्ट्रीय आन्दोलन के समय झाँसी डि० जेल से वि० स० १९९९ बैसाख, शुक्ल प्रतिप्रदा को मुक्त होने के एक मास पश्चात्।

व्यास जी ने अपने इस ३९ वर्ष के लघु जीवन काल में ११ काव्य पुस्तकों की रचनाऐं कीं। १ वीर ज्योति, २ जवाहर ज्योति, ३ श्याम सन्देश, ४ अर्चना प्रकाशित हैं, और १ चक्रव्यूह, २ रुक्मिणी मंगल, ३ लव कुश, ४ दानवीर कर्ण, ५ भक्ति सन्देश, ६ बाल कृष्ण चरित्र, ७ ऋतु राजीव अप्रकाशित। इस सन्दर्भ में हम यहाँ उनके केवल ऋतु राजीव में से वर्षा वर्णन के कुछ ब्रजभाषा के छन्द प्रस्तुत करेंगे और कुछ अन्य भी।

साहित्य के आचार्यों ने शृंगार रस को ही सब रसों में श्रेष्ठ माना है, क्योंकि इस रस का संचार, संसार के प्रत्येक प्राणी में अन्य रसों की अपेक्षा अधिक दृष्टिगत होता है, और ब्रजभाषा काव्य में कवि की काव्य कुशलता का परिचय भी इसी रस की परिपक्वता से मिलता है।

अब आप "व्यास" जी के वर्षा वर्णन में लाटा-अनुप्रास और यमक का अपूर्व आनन्द लीजिये—

छूट कर छहर छटान छिटकाय छिन,
छन छनदा के छल छमक छला परैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

झिल्लीगन झौरन के मोरन के सोरन के,
दादुर दरोरन के गहब गला पर।
"ब्यास" कहै छाय छाय धुरवा धुकारें धाय,—
धाय कें धरा लों आय अति इठला परैं।
नान्हीं नान्हीं सुभग सुहानी वर बूँदन के,
झुक झुक, झूम झूम झमक झला परैं।

और अब आप वर्षा के रूपक में व्यग का चयन लीजिये—

शीतल सुगंध मंद पौन कौ न गौन होत,
झंझा की झकोर झक झोर सन सन की।
उज्जल उजास रवि शशि कौ प्रकाश छिगौ,
जुगनू जमात फिरै छाई मोद मन की।
"ब्यास" कहैं कोकिल कपोत शुक चक्रवाक,—
मौन भये, झनकत झाँई झींगुरन की।
धन्य घनश्याम जू तिहारे राज देखियतु —
बोल रही तूती बरसाती मेंढकन की।

इसके अनन्तर अब आप प्रोषित पतिका नायिका का चयन लीजिये जिसमें भावश्लेष और यमक की छटा दर्शनीय है—

दरसन लागेरी घटान के घनेरे झुंड,
धरसन लागे धाय धरसन लागेरी।
परसन लागे प्रेम दादुर दरेरैं देय,
हरसन लागे मेह हरसन लागेरी।
"ब्यास" कहैं सरसन लागे वन मोर प्रान,
करसन लागे मोर करसन लागेरी।
तरसन लागे हीय अबलों न आये पीय,
बरसन लागे मेह बरसन लागेरी।

अब आप एक लता पक्षी घनाक्षरी का चयन लीजिये जिसमें "ब्यास" जी ने भाव व्यंजना की श्रेष्ठता के साथ साथ जो रतिप्रिया नायिका का वर्णन किया, वह किस चतुरता के साथ किया हैं—

गेंदा, गोल गोटी, गुल तेरिया, गुलेरी, गुल-
दावदी, चमेली, गुलाबासन हिसाव कों।
कुमुद, कमंच, मचकुंद, कुंद, केति कीन,
करन, कदंब, केर, करत न ताव कों।
"ब्यास" कहैं मालती, निवारी, गुलनारिन कों।
बेला, कचनार, चारु सेवती सबाब कों।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चलत कुचाल चाल मालिन भली न यह,
काहे मधुमास भाहिं सींचत गुलाब कों।

अब एक छंद और रतिप्रिया का दृष्टिगत कीजिये जिसमें नायिका की अभिव्यक्ति विचार गम्य है और इस प्रकार की काव्य को काव्याचार्यों ने बूझ की संज्ञा दी है।

देख शुभ सरिस प्रभात श्री प्रभात कर,
परम प्रभात द्युति बदन विभोरे में।
"ब्यास" कहैं मंजन पुनीत मन रंजन कों,
अंजन लगायौ दृग कंजन सुकोरे में।
रुचि रुचि रुचिर शृङ्गार चारु नीकी भाँति,
सुखद सजाय हरसाय गात गोरे में।
अति अनुराग तें अटा पै कौन कारन तें,
बाल धर आई दूध कंचन कटोरे में।

अब आप एक अन्तिम छन्द चन्द्रमा पर और अवलोकन कीजिये जिसके उपमा उपमेय में ब्यास जी की काव्य कला प्रदर्शित होती है—

कोऊ कोउ राहु रद कौ कहै हैं दाग लागौ अहै,
कोऊ क्षिति छाँह कोऊ गरल निहारो है।
कोऊ कहैं अंक में निशंक तिल कारौ कोऊ,
गुरु तिय गमन कलंक निरधारौ है।
सहज मयंक में लखात श्याम ताई जौन,
'ब्यास' कहैं तौन यह भेद कौं विचारौ है।
मानों काहू कुटिल कटीली निज नैंनन की—
कजरारी कोरन करेजौ छेद डारौ है।

ब्यास जी ने जो ब्रजभाषा काव्य द्वारा अनूँठी सूक्तियाँ साहित्य जगत को प्रदान की हैं, उसके लिये यह प्रदेश उनका सदा सर्वदा ऋणी रहेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जनपद कल्याणी योजना के नेता डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल

(श्रीराम शर्मा, एम० ए० साहित्यरत्न रिसर्च स्कॉलर २५, कृष्णपुरी, अलीगढ़)

कई दशकों से जनपद कल्याणी योजना के प्रचार एवं प्रसार की ओर सतत् प्रयत्नशील रहने वाले, यदि उसमें कहीं कमी आई, उसे तुरन्त महान् बुद्धि कौशल से निवारण करने वाले एवं योजना का शुद्ध वैज्ञानिक स्वरूप निर्धारण करने वाले मनीषी से रहित इस जनपदीय जीवन एवं साहित्य का सिर रहित धड़ अब छटपटाता रहेगा। उसमें क्रिया शीलता, जीवन, बल और उसमें दोलन डॉ० अग्रवाल के साथ चले गये।

उनकी अपने साथियों को दी गई प्रेरणा ही इस जनपदीय कार्य को आगे चला रही थी। श्री देवेन्द्र सत्यार्थी, डॉ० सत्येन्द्र, श्री सिद्धेश्वर वर्मा, श्री बनारसीदास चतुर्वेदी और श्री कृष्णानन्द गुहा प्रभृति जनपदीय साहित्य के संग्राहकों, साधकों को थपथपी देना व उनके समक्ष जनपदीय कार्य का स्पष्ट चित्र उपस्थित करना उन्हीं का कार्य था।

डॉ० अग्रवाल का सादा व्यक्तित्व-खादी का धोती व कुर्त्ता सदैव पहनने वाले कृशकाय, गुरु द्रोणाचार्य की शरशैया सदृश तख्त बिछाये, चारों ओर पुस्तकों का ढेर लगाये, खादी के एक चदरा को लपेटे, तपश्चर्या में रत, नश्वर शरीर की बिना चिन्ता किये साहित्य साधना में लीन—ने डाक्टरों की राय, कि 'आप मानसिक कार्य न करें,' के होते हुए भी जीवन के अन्तिम क्षणों तक साहित्य साधना से मुख नहीं मोड़ा। ऐसे तपस्वी को शत्-शत् प्रणाम्।

जनपद कल्याणी योजना के प्रवर्तक, प्रचारक व प्रसारक डॉ० अग्रवाल में दूरदर्शिता का महान् श्रोत विद्यमान था। वे अपनी दूरदर्शिता से इतना कर लेते कि इस जनपदीय आन्दोलन में कब ? कहाँ ? और कैसी कमी आ सकती है, और तब उसका निवारण करने की युक्ति भी अपने साहित्यिक मित्रों को लिख देते। कितने सफल नेतृत्व के दर्शन हमें उनके पथ प्रदर्शन में मिले उसका मूल्यांकन आगे आने वाली शताब्दियाँ करेंगी। इसी दूरदर्शी नेतृत्व के कतिपय उदाहरण 'पृथ्वी पुत्र' में दिये गये पत्रों के माध्यम से दिये जाते हैं।

एक बार अपने आन्दोलन को खूब फलते-फूलते देखकर भी वे उसे अधिक वैज्ञानिक बनाने के लिए पूर्ण सजग थे। सन् १९४० में श्री बनारसीदास चतुर्वेदी जी को लिखे पत्र की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत हैं—"प्रादेशिक समस्याओं और बोलियों के लिये कार्य करने की बात अब बहुधा सुनने में आने लगी है। लोगों में उत्साह भी है, पर उसकी वैज्ञानिक पद्धति कुछ विचारशील लोगों को निर्धारित कर देनी चाहिये, जिससे सामान्य कार्य कर्त्ता तदनुसार कार्य में लग सकें।

यदि एक संगठित और व्यवस्थित गति से पाँच वर्ष तक कार्य होगा तो आशा है देश और जनता के वास्तविक जीवन के साथ हम गाढ़ा परिचय प्राप्त कर सकेंगे।"[1]

---

१. पृथ्वीपुत्र पृष्ठ १७२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सन् १९४३ ई० में एक बार जनपदीय आन्दोलन में ब्रज प्रदेश के पृथक्करण की कुछ भावना आई। उन्होंने तुरन्त इस अनावश्यक संकट को टालने के लिए श्री चतुर्वेदी जी को एक पत्र में लिखा—"गुप्त जी[1] आये और उनसे भी जनपद आन्दोलन के सम्बन्ध में बात चीत हुई। हमारी सम्मति में विरोध इस कार्य की प्रगति में बाधक होगा। इस आन्दोलन को शुद्ध सांस्कृतिक रखना अति आवश्यक है। पृथक प्रान्त निर्माण रूपी राजनीतिक पहलू अभी बिल्कुल न उठाया जाना चाहिये, अन्यथा आपका उद्देश्य खटाई में पड़ जायगा इस विषय का सांस्कृतिक पक्ष स्थायी महत्व का है। इस समय विवाद स्थगित करके उसी को पुष्ट करना चाहिए। बुद्धिमानी यह है कि हम जितनी भूमि को जोत सकें, उतने में ही हल चलावें।"[2]

यही नहीं वे अपनी और अपने सहयोगियों की उपलब्धियों पर प्रसन्न भी होते। इस प्रसन्नता को इसलिये लिखा कि उनके सहयोगी अपने मार्ग पर और उत्साह से बढ़ें। यह एक सच्चे आन्दोलन-कर्त्ता नेता का स्वरूप है—"श्री पण्डित अमरनाथ झा अपनी व्यवहार निपुणता के लिये विख्यात हैं; यह बड़ा लाभ है कि वे भी आपके जनपद–कार्य के साथ हैं। डॉ० सिद्धेश्वर जी का मूल पत्र अनुवाद के साथ 'मधुकर' में छापने योग्य है। वह हम सबके लिये उत्साह-प्रद प्रमाण पत्र है। उससे हमें ज्ञात होता है कि हमारा मार्ग ठीक है और बाहर के टकसाली विद्वान भी उसको आशीर्वाद देते हैं।"[3]

इसी पत्र में उन्होंने जनपदीय कार्य कर्त्ताओं को तप करने का उत्तम सुझाव भी दिया—"अनेक सम्पादकों को अपनी लेखनी घिसनी पड़ेगी, कितने ही लेखकों को मस्तिष्क की अधेड़ बुन इस काम में खर्च करनी पड़ेगी, अनेक भाषणों में इस सन्देश की व्याख्या करनी होगी—तब इस महानाद का सम्मिलित घोष सिन्धु और ब्रह्म पुत्र के बीच की अगणित प्रजाओं तक पहुँच पायेगा, और इन सबसे बढ़कर आवश्यकता होगी किसी तपस्वी-दधीचि के अपनी हड्डियों को इस काम में गलाने की।"[4]

यह कहना ही नहीं कि अपितु वास्तव में उन्होंने दधीचि की भाँति अपनी हड्डी तो नहीं, अपना शरीर अवश्य ही बलिदान कर दिया।

वे अपने साहित्यिक मित्रों को इस आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए कभी यूरोपीय विद्वानों का उदाहरण प्रस्तुत करते तो कभी कार्य की महत्ता पर कुछ-न-कुछ अवश्य कहते थे। श्री देवेन्द्र सत्यार्थी जी को उन्होंने अपने एक पत्र में लिखा—"अब तो समानशील और सदृश चिन्तन वाले मनुष्यों को मिलकर कुछ उद्योग करना ही चाहिए। आप भी हम लोगों के साथ इसी नाव पर हैं। साथ ही क्यों, नाव का गून अपनी कमर से बाँधकर उसको बहुत पहले ही खींचकर ले चलने वाले

---

१. एक बार डॉ० अग्रवाल चिर-गाँव गये वहाँ मैथिलीशरण गुप्त से मिले थे।

२. पृथ्वी-पुत्र पृष्ठ १७५–१७६।

३. वही पृष्ठ १८३।

४. पृथ्वी-पुत्र पृष्ठ १८३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धीर नाविक का रूप आपका ही है। मैं लिख चुका हूँ कि आप जैसे सौ सत्यार्थी हों तब कहीं जनपदों में व्याप्त सामग्री की शत सहस्री संहिता को कुछ-कुछ एकत्र कर सकेंगे।[५]

हमारे लिये उचित यह है कि यथा शक्ति मृदुता के साथ इस कार्य के आन्दोलन को बढ़ाते रहें और अपनी शक्ति को एक केन्द्र पर लगाकर योजना के अनुसार कुछ ठोस काम करके दिखावें।[६]

कहना नहीं होगा कि वास्तव में जीवन भर ठोस कार्य उन्होंने स्वयं भी करके दिखाया। वे उस ठोस कार्य के साथ जनपदीय आन्दोलन की रूप रेखा को खूब प्रचारित करते और अन्य साथियों से भी इसकी अधिक-से-अधिक चर्चा करने को कहते। यही नहीं उत्साह बढ़ाने एवं प्रेरणा देने के हेतु वे जनपदीय आन्दोलन के मूर्धन्य साहित्यकारों की प्रशंसा करने से भी नहीं चूकते थे।

उनकी एक प्रबल इच्छा थी कि टर्नर की नेपाली डिक्शनरी अथवा ग्रियर्सन की काश्मीरा डिक्शनरी जैसे महान् ग्रन्थों के समान हिन्दी की बोलियों में भी कार्य हो। ब्रज और अवधी बोलियों के अपार साहित्यिक धन के विषय में तो वे पूर्ण आश्वस्त थे। उनकी तपस्या एवं लगन के कारण इस इच्छा-बीज का अंकुरित और पल्लवित होकर फलना फूलना अब सम्भव हो गया था और होगा। विद्वान डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन' के 'कृषक जीवन की शब्दावली' (शोध प्रबन्ध) को अपने निर्देशन में लिखवाकर तो वे उस छटपटाहट से पूर्ण मुक्त हो गये थे और इतने तुष्ट भी हो गये थे क्योंकि उन्हें उनकी आशाओं एवं इच्छाओं से कहीं आगे जाने वाला, जनपदीय जीवन एवं साहित्य का मर्मज्ञ, पृथ्वी पुत्र प्राप्त हो गया था। इस पृथ्वी पुत्र के कार्य की प्रशंसा करते वे थकते न थे। कोई भी ऐसा विषय छिड़ने पर जो जनपदीय बोलियों से सम्बद्ध होता, वे इस पृथ्वी पुत्र की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते देखे गये थे।

उस साहित्यिक तपस्वी के लिए जो कहा जाय वह थोड़ा है। जनपदीय कार्य कर्त्ताओं के सच्चे नेता, सच्चे प्रशंसक, पथ प्रदर्शक, पुरातत्व पण्डित और न जाने क्या-क्या ? दिवंगत डॉ० अग्रवाल को दो शब्द श्रद्धांजलि रूप में सादर समर्पित !

---

१. पृथ्वी-पुत्र पृष्ठ २००।
२. वही पृष्ठ २०२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी कविता में गणेश-भक्ति का स्वरूप

(श्री उमाशंकर दीक्षित एम० ए० साहित्यरत्न)

हिन्दी कविता में राम एवं कृष्ण भक्ति को अधिक प्रतिष्ठा मिली क्योंकि राम एवं कृष्ण में ईश्वरीय रूप के साथ-साथ पूर्ण मानव स्वरूप विकसित हो सका। राम एवं कृष्ण की एक व्यापक जीवन गाथा है। उनका व्यक्तित्व सर्वतोमुखी है। उनका चरित्र मानव के समस्त रागात्मक भावों को आश्रय प्रदान करता है जिससे उनकी भक्ति विविधि रूपों में विकसित हुई। मनुष्य उनके रूपों में चाहे वे स्वामित्वमय हो या दास्य भावापन्न, वात्सल्य युक्त हो या कान्ता सम्मत, वीरतापूर्ण हो या मधुरिमामय, सभी में गहराई तक पहुँचकर उनमें रागात्मक सम्बन्ध स्थापित कर परम सुख की अनुभूति कर सकते हैं। इसके विपरीत गणेश, शिव, सूर्य, हनुमान आदि मानव रूप की अपेक्षा अलौकिक या देवी रूप का ही वोध कराते हैं क्योंकि ये देव भक्त के समस्त रागात्मक भाव को आश्रय नहीं दे सके। अतएव गणेश आदि की भक्ति का राम-कृष्ण की भक्ति के समान हिन्दी जगत में स्वतन्त्र विकास नहीं हो सका।

भारतीय संस्कृति जिन श्रुति शास्त्रों पर अवलम्बित है उनमें शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म द्विविध माना गया है। एक निर्गुण और दूसरा सगुण। सगुण साकार प्रभु के भी नित्य सर्वेश्वर और अवतार दो भाव रूप हैं। सृष्टि, स्थिति, प्रलय के लिये ब्रह्मा, विष्णु, महेश रूप से वे उपासित हैं। वे ही सूर्य और गणेश रूपों से भक्तों द्वारा सेवित हैं। पंचदेव उपासना में मूल सच्चिदानन्द तत्व के ही गणेश, शिव, शक्ति, सूर्य और विष्णु रूप माने गये हैं। प्रत्येक कार्य का श्रीगणेश, (प्रारम्भ) गणेश जी के स्मरण तथा पूजन से ही होता है। यहाँ तक कि पंचदेव के अन्य चारों देवों के पूजन के निर्विघ्न समाप्ति के लिये विघ्नेश्वर गणपति का पूजन होता है। शिव पुत्र होने पर भी शिव विवाह में गणेश पूजन शिव-पार्वती द्वारा सम्पन्न कराने का उल्लेख है। यह उनकी अन्नदिता का प्रतिपादन है। इस प्रकार पंचदेवोंपासना में गणेश मुख्य हैं। उनकी नैष्ठिक उपासना करने वाला भी एक सम्प्रदाय विशेष है जिसे गाणपत्य सम्प्रदाय या दर्शन की संज्ञा प्राप्त है। दक्षिण भारत में आज भी गणपति उपासना का विशेष महत्व है। वे मंगल मूर्ति, बुद्धि विधायक तथा विघ्न विनाशक रूप में पूज्य और अभिवन्दित हैं। उत्तर भारत में गणेश चतुर्थी (भाद्र-पद शुक्ला ४) तथा संकट चतुर्थी को विशेष रूप से गणपति पूजा की प्रथा प्रचलित है। दक्षिण भारत में तो गणेश पूजन के महान उत्सव होते हैं।

सिद्धि बुद्धि इनकी पत्नियाँ हैं। शिव पुराण में इनके विवाह की बड़ी ही मनोरंजन कथा है। वे शंकर के गणों के मुख्य अधिपति हैं। गणपति नित्य शुद्ध स्वरूप हैं परन्तु विभिन्न समयों में विभिन्न प्रकार से उनका प्राकट्य होता है सारांश में वे चेतनामयी माँ पार्वती के लीलामय पुत्र हैं। ब्रह्मवैवर्तपुराण के गणेश खण्ड में तो वे शकर के पुत्र होते हुए भी स्वयं विष्णु के रूप हैं। भगवान शंकर के द्वारा उनका मस्तक काटने तथा पुनः हाथी का मस्तक लगाने की पौराणिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कथायें लोक में प्रसिद्ध हैं। जिसके कारण वे गजानन कहलाये। अपने अग्रज कार्तिकेय के साथ युद्ध में उनका एक दाँत टूट गया था तबसे वे एकदन्त कहलाये। वे बुद्धि के अधिष्ठाता देवता हैं। पृथ्वी की परिक्रमा में अपने को असमर्थ पाकर राम नाम की महिमा से सभी देवों में प्रथम पूज्य हुये। उनकी पूजा से सभी कार्य निर्विघ्न सम्पन्न होते हैं। उनके श्री विग्रह का ध्यान, उनके मंगल-मय नाम का जप और उनकी आराधना मेधा शक्ति को बढ़ाने वाली तथा सर्व कल्याण प्रद है। हिन्दी साहित्य में गणेश का स्वरूप उपर्युक्त सभी बातों के आधार पर ही आधारित है।

हिन्दी साहित्य के आदि काल में भक्ति भावना परक ग्रन्थों का प्रायः अभाव रहा। दूसरे गणेशजी का स्वरूप शिव, शक्ति या हनुमान के समान तांत्रिकों के लिये भी आराध्य नहीं रहा इससे सिद्ध लोगों की प्राप्त रचनाओं में भी उन्हें कोई स्थान नहीं मिल सका। सामन्ती साहित्य में युद्ध वाद्यों की गर्जना और तलवारों की चका-चौंध के बीच भक्ति भावना को प्रश्रय मिलना सम्भव नहीं था।

भक्ति कालीन कविता में सगुण धारा में वन्दना तथा मंगला चरणों में गणेशजी के दर्शन स्पष्ट रूप से होते हैं। जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कि गणेश का राम एवं कृष्ण की भाँति रागात्मक सम्बन्ध मानव के साथ नहीं रहा। केवल ईश्वरीय या दैवी सम्बन्ध ही रहा। इससे हिन्दी काव्य में उनका वर्णन केवल विद्या बुद्धि प्रदाता तथा मंगल मोद प्रदाता और विघ्न विनाशक कहकर ही किया गया वह भी अधिकांश में मंगलाचरण में। उनकी जीवन गाथा या स्वतन्त्र यशो-गान में कवियों की रुचि अधिक नहीं लगी क्योंकि कवियों को उनके स्वरूप में लोक रंजनात्मक या लोकानुग्रहानुकूल विषय नहीं दीख पड़ा। लोक मंगलप्रद विघ्ननाशक नाम देकर प्रथम मंगला-चरण ही उन्हें अभीष्ट था क्योंकि गणेशजी प्रथम पूज्य एवं वंदनीय हैं। इसलिये अधिकतर कवियों ने अपनी रचना प्रारम्भ में मंगलाचरण के रूप में ही उन्हें स्मरण किया है।

गोस्वामी तुलसीदास ने अपने 'रामचरित मानस' का प्रारम्भ भी गणपति बन्दना से ही किया है। यथा:—

"जो सुमिरत सिधि होय गन नायक करिवर वदन।
करहु अनुग्रह सोय बुद्धि रासि सुभ गुन सदन॥"

रामचरित मानस के अध्ययन से तुलसी के समय गणेश भक्ति का प्रचार जन-साधारण में अच्छी प्रकार था यह परिलक्षित होता है। धनुष भंग के समय श्रीराम से धनुष टूटने की प्रार्थना करते हुये न केवल सीताजी यह कहती हैं कि:—

गननायक वरदायक देवा। आजु लगें कीन्हिउँ तुअ सेवा।
बार-बार विनती सुनि मोरी। करहु चाप गुरुता अति थोरी॥

अपितु पुर के सभी नरनारी अपने पुण्यों का स्मरण करते हुये गणेशजी से प्रार्थना करते दिखाये गये हैं:—

तौ सिव धनुष मृडाल की नाईं।
तोरहिं राम गनेस गुसाईं॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गोस्वामी तुलसीदास विनय पत्रिका में भी सर्वप्रथम गणेश की स्तुति करते हुये उनसे राम की भक्ति का वरदान माँगते हैं:—

गाइये गनपति जग वंदन।
शंकर सुवन भावनी नंदन ॥

सिद्ध सदन गज वदन विनायक। कृपा सिंधु सुन्दर सब लायक।
मोदक प्रिय मुद मंगल दाता। विद्या वारिधि बुद्धि विधाता।
माँगत तुलसिदास कर जोरे। बसहिं राम सिय मानस मोरे ॥

"विनय पत्रिका"

कृष्ण भक्त कवियों ने श्रीकृष्ण के अतिरिक्त अन्य किसी देवता की वन्दना नहीं की। यहाँ तक कि अपने गुरु की वन्दना भी एकाध कवि ने ही की है। इनमें अधिकांश पुष्टि मार्गीय अष्ट छाप के कवि तथा निम्बार्क सम्प्रदाय के कवि थे।

रीति काल में यद्यपि अनेक मुक्तक और खण्ड काव्य लिखे गये परन्तु स्वतन्त्र रूप से गणेश सम्बन्धी कोई ग्रन्थ नहीं रचा गया। फुटकर रूप में अनेक कवियों ने गणेश सम्बन्धी छन्दों का निर्माण अवश्य किया। इनमें से सभी कवियों के उद्धरण तो यहाँ देना असम्भव है। दो एक कवियों के उदाहरण ही नीचे देना पर्याप्त होगा। महाकवि आचार्य केशवदास का गणेश सम्बन्धी निम्न छन्द देखिये:—

बालक मृनालनि ज्यों तोरि डारै सब काल,
कठिन कराल त्यौं अकाल दीह दुख को।
विपति हरति हठि पद्मिनी के पात सम,
पंक ज्यौं पताल पेलि पठवै कलुख को ॥
दूरि कै कलंक अंक भवसीस-ससि सम,
राखत है केसौदास दास के वपुख को।
साँकरे की साँकरन सनमुख होत तोरै,
दसमुख मुख जोवै गजमुख-मुख को ॥

गणेश भगवान के दैवी गुणों के द्योतक हैं। वे सात्विक उपासना के पुनीत दृष्ट स्वरूप हैं। वे भक्तों के लिये पाप नाशक, मंगल करण शोक नसावन हैं। यही कारण है कि वीररस के कवि भी उन्हें इसी स्वरूप में नमन करते हैं। वीर रस के श्रेष्ठ कवि 'भूषण' उनके उग्र रूप को न देखकर केवल विघन गढ़ गंजन तथा भगत मन रंजन के रूप को ही स्वीकार करते हैं:—

अकथ अपार भव पंथ के चले को श्रम,
हरन करन विजना से वर दाइए।
इहि लोक परलोक सुफल करन; कोक,
नद-से चरन हिये आनिकै जुड़ाइए ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अलि-कुल-कलित कपोल ध्याइ ललित,
अनन्द रूप सरित में भूषन अन्हाइए।
पाप तरु-भंजन विघन-गढ़-गंजन,
भगत-मन-रंजन द्विरद मुख गाइए॥

गणेश भक्ति में कतिपय कवियों ने राम एवं कृष्ण भक्तों की भाँति प्रभाती आदि भी लिखी हैं। प्रातः विघ्नराज का ध्यान वैसे भी मङ्गलमूल है। सूर्यनाथ नामक एक कवि की प्रभाती देखिये:—

जागिये करुणा निधान गौरि के दुलारे।
प्रात काल भयौ जान, विप्र करत वेद गान॥
अरुणोदय भानु देखि मन्द भये तारे॥ जागिये०
अष्ट सिद्ध खड़ी द्वार देवतागण करत जुहार।
लोकपाल सवै मिलि आवें तेरे द्वारे॥ जागिये०
नारदादि करें गान शारदादि जस वखान।
बंदी गण हाथ जोरि खड़े तेरे द्वारे॥ जागिये०
सूर्य्यनाथ तेरौ दास तेरे चरनन की आस।
राखि सदा अपने पास वक्रतुंड बारे॥ जागिये०

इस प्रकार के पद व प्रभातियाँ आदि भी कतिपय दृष्टिगोचर होती हैं परन्तु इन कवियों को साहित्य शृङ्खला में स्थान न मिल सकने के कारण इन कविताओं का मूल्यांकन नहीं हो पाया।

गणेश जी की मोदक प्रियता का वर्णन भी पुराणों से प्राप्त होता है। भक्त लोग आज भी गणेशजी को मोदक का भोग लगाते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी भी विनय पत्रिका में "मोदक प्रिय मुद मंगल दाता" कहकर उनका स्तवन करते हैं। इस मोदक प्रियता को लेकर अनेक कवियों ने बहुत ही सुन्दर-सुन्दर भाव व्यक्त किये हैं। एक बार गणेश माँ पार्वती से लड्डू के लिये जिद करने लगे। तब माता ने उन्हें अपने गृह की गरीबी दशा का चित्रण करते हुए उनके मोदक माँगने पर कितनी झुंझलाहट निम्न पद में व्यक्त की है। भाव देखते ही बनता है:—

बाप विष चाखै भैय्या षट्मुख राखै देखि,
आसन में राखै वस वास जाकौ अचलै।
भूतन कौ छैय्या आस आप के रखैय्या,
और काली के नथैय्या हू के ध्यान ते न चलै॥
बैल बाघ वाहन बसन कौं गयन्द-खाल,
भाँग कौं धतूरे कौं पसार देतु अँचलै।
घर कौ हवालु यहै शंकर की बाल कहै,
लाज कैसे रहै पूत मोदक कौं मँचलै॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आधुनिक काल में भी इस प्रसंग को लेकर कवितायें की गई। मोदकप्रियता के एक विनोद भरे अभियोग को लेकर साकेत कार ने बहुत ही सुन्दर मंगलाचरण प्रस्तुत किया है:—

जपति कुमार अभियोग-गिरा गौरी प्रति,
स-गण गिरीश जिसे सुन मुसुकाते हैं।
देखो अम्ब, ये हेरम्ब मानस के तीर पर,
तुंदिल शरीर एक ऊधम मचाते हैं॥
गोद भरे मोदक धरे हैं स विनोद उन्हें,
सूँड़ से उठाके मुझे देने को दिखाते हैं।
देते नहीं कंदुक सा ऊपर उछालते हैं,
ऊपर ही झेलकर, खेलकर खाते हैं॥

"साकेत"

इस प्रकार उपरोक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि गणेश भक्ति की अधिकतर रचनायें मुक्तक शैली में हैं और उनमें अपनी-अपनी रुचि वैचित्र्य के कारण गणेश के व्यक्तित्व को विविध रूपों में चित्रित किया गया है। गणेश सम्बन्धी कविताओं में अधिकतर कवित्त घनाक्षरी, सवैया, पद, दोहा आदि का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है।

आधुनिक हिन्दी कविता में कविता के विषय परिवर्तित हो गये। धर्म और भक्ति कविता से अलग हो गये। पौराणिक घटनाओं और पात्रों को बुद्धिवादी युग की प्रवृत्ति के अनुसार रूपकों में ढाला जाने लगा। गणेश या गणपति को देवताओं के गणतन्त्र का अध्यक्ष मानकर कतिपय कल्पनायें की गईं। उनके सूँड़, उनके दाँत उनका तंदुल शरीर भी बुद्धि वैचित्र्य के अनुसार अनेक रूपक लेकर सामने आये! यहाँ तक कि उनका बाहन मूषक भी इन रूपकों से अलग नहीं रह सका। परन्तु अधिकतर इस प्रकार की परिकल्पनायें स्पष्ट रूप से गद्य में ही व्यक्त की गई हैं। आधुनिक युग में रीति कालीन विचार धाराओं के कुछ कवियों ने वर्षा ऋतु आदि वर्णन में गणेश जी को उपमेय बनाया है। उनकी सूँड़ को वर्षा की जलधार से दाँतों की विजली से उपमायें दी गई है। आज युग की प्रवृत्ति के अनुसार काव्य में गणेश भक्ति का प्राधान्य नहीं रहा। वह अब प्रतीकों के देव बन गये। परन्तु अधिकांश में आज भी उन्हें पौराणिक स्वरूप ही प्राप्त है। सामान्य जनता के विश्वासों में भी वे देव स्वरूप ही हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय इतिहास में यदुवंश

(श्री वृन्दावनदास)

भारतीय इतिहास में यदुवंश अपना बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस वंश का महत्व इसलिये भी अधिक है कि इसी वंश में श्रीकृष्ण का आविर्भाव हुआ था जिन्हें भगवान विष्णु का अवतार माना जाता हैं। यदुवंश की उत्पत्ति चन्द्रवंश के एक वंशकर राजा से हुई जिसका नाम यदु था।

आज से हजारों वर्ष पहिले वैवस्वत मनु ने सर्व प्रथम भारत में राजमंस्था स्थापित की। उनसे पूर्व किसी प्रकार की शासन व्यवस्था न थी। जिस प्रकार वैवस्वत मनु के अनेक पुत्रों में से इक्ष्वाकु नामी एक पुत्र से मानव अथवा सूर्यवंश की स्थापना हुई उसी प्रकार उनकी पुत्री इला के माध्यम से ऐल अथवा चन्द्रवंश की परम्परा चली। चन्द्रवंश में ययाति नाम का एक बड़ा प्रतापी और दिग्विजयी राजा हुआ है। पुराणों में उसके चक्रवर्ती सम्राट होने का उल्लेख है। ययाति के पाँच पुत्र थे—यदु, तुर्वसु, द्रुह्यु, अनु और पुरु। ययाति के सब से छोटे पुत्र पुरु को प्रतिष्ठान का राज्य मिला और उसके वंशज पौरव कहलाये। यदु का राज्य पश्चिम में केन वेतवा और चम्बल नदियों के प्रदेश में बना। यदु के वंशज यादव हुए।

पुराणों में यदु का वंश इस प्रकार चलता है। यदु के सहस्रजित्, क्रोष्टु, नल और नहुष नामक चार पुत्र हुए। सहस्रजित् के शतजित् और शतजित् के हैहय, हेहय और वेणुहय नामक तीन पुत्र हुए। हैहय वंशकर राजा था। उसने और उसके वंशजों ने यादवों की कीर्ति को बढ़ाया। उनसे पूर्व ऐक्ष्वाकव महाराज मान्धाता की विजयों ने यादवों को निर्बल बना दिया था। अनेक यादव वशीय राजा लोग मान्धाता से पराजित होकर उत्तर, पश्चिम और दक्षिण दिशाओं में बढ़े और उन्होंने वहाँ अपने स्वतन्त्र राज्य स्थापित किये। कुछ यादव राजे जो अपने ही प्रदेश में रहे उन्हें महाराज मान्धाता का करद सामन्त के रूप में अधीनस्थ होकर रहना पड़ा। हैहय वंशीय राजाओं ने अपनी खोई हुई कीर्ति को पुनः प्राप्त किया। उन्होंने उत्तरी भारत पर अनेक सफल सैन्य अभियान किये और काशी आदि प्रदेशों को अपने अधीन किया। उनके काल में अयोध्या की शक्ति कुछ निर्बल पड़ गई थी।

हैहय से यदुवंश का विस्तार इस प्रकार हुआ। हैहय का पुत्र धर्म, धर्म का धर्मनेत्र, धर्म नेत्र का कुन्ति, कुन्ति का सहजित् और सहजित् का पुत्र महिष्मान् हुआ। महिष्मान् बड़ा प्रतापी राजा हुआ है उसने माहिष्मती नाम की नगरी बसाई। महिष्मान् का पुत्र भद्रश्रेण्य हुआ जिसने पूर्व में आगे बढ़ कर काशी राज्य पर विजय प्राप्त की थी। भद्रश्रेण्य के दुर्दम, दुर्दम के धनक और धनक के चार पुत्र हुए जिनके नाम थे कृतवीर्य, कृताग्नि, कृतधर्म और कृतौजा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कृतवीर्य का पुत्र सहस्रार्जुन था जिसको कार्तवीर्य अर्जुन भी कहते हैं। यह बड़ा यशस्वी और प्रतापी था। पुराणों में इसके सम्बन्ध में अनेक किम्वदन्तियाँ प्रचलित हैं। इसने एक बार रावण को जो विजयोन्माद में माहिष्मती पर चढ़ आया था अपनी नगरी के दुर्ग में बन्दी बना कर रक्खा था। ऐसा प्रतीत होता है कि रावण श्रीराम के समय का एक व्यक्ति ही नहीं वरन् उस कुल के पूर्ववर्ती राक्षस राजाओं के वंश का नाम भी था। सहस्र र्जुन के सम्बन्ध में एक अनुश्रुति यह भी है कि उसका भृगुगोत्र के ब्राह्मणों से जो नर्मदातट पर रहते थे और हैहयों के राजपुरोहित थे कुछ वैमनस्य हो गया था। ब्राह्मण लोग अपने गुरू ऋषि ऋचीक और्व के साथ नर्मदातट छोड़ कर कान्य कुब्ज चले गये। वहाँ जाकर और्व मुनि ने कान्य कुब्ज के राजा गाधि की कन्या सत्यवती से अपना विवाह कर लिया। और्व मुनि का पौत्र परशुराम बड़ा वीर और प्रतापी था। वह अपने पितामह की अवज्ञा के कारण हैहयों से द्वेष रखता था। कार्तवीर्य अर्जुन का परशुराम के द्वारा ही बध हुआ। परशुराम की शक्ति से हैहयों की उन्नति रुक गई और वे कुछ समय के लिए दब से गये।

कार्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों में शूर, शूरसेन, वृषसेन, मधु और जयध्वज ये पाँच प्रधान थे। जयध्वज का पुत्र तालजंघ हुआ। तालजंघ के अनेक पुत्रों में वीतिहोत्र सब से बड़ा था और उनमें से एक का नाम भरत था जो बड़ा प्रतापी था। भरत के वृष, वृष के मधु और मधु के वृष्णि आदि अनेक पुत्र हुए। वृष्णि के कारण यह वंश वृष्णि वंश कहलाया। मधु के कारण इस वँश की संज्ञा मधु भी हुई। यदु के नाम पर इस वंश को यादव वंश तो पहिले ही कहा जाता था। इस वंश का यादव नाम अधिक व्यापक और सामान्य है। इस वंश-वृक्ष की अनेक शाखा प्रशाखाऐं प्रस्फुटित हुईं।

यदु की सहस्रजित् नामक पुत्र से जो वंश परम्परा चली उसमें वृष्णि नाम के राजा से यादवों की वृष्णि शाखा की उत्पत्ति हुई। यदु के दूसरे पुत्र क्रोष्टु से जो वंश चला उसमें सत्रहवीं पीढ़ी पर कैशिक नाम के राजा का चेदि नामक पुत्र हुआ जिससे कि चैद्य राजाओं की शृङ्खला का जन्म हुआ। यदु पुत्र क्रोष्टु की बारहवीं पीढ़ी पर ज्यामघ नाम का एक महापराक्रमी व श्रेष्ठ चरित्र वाला राजा हुआ। उसने शत्रु सेना द्वारा व्यक्त एक कन्या को अपनी पुत्र वधू के रूप में ग्रहण किया। उस कन्या का उसके पुत्र विदर्भ से २१ वीं पीढ़ी पर अंशु नामी राजा हुआ जिसका कि सत्वत नामी पुत्र हुआ। सत्वत से सात्वत वंश का क्रम चला।

सत्वत के भजन, भजमान, दिव्य, अन्धक, देवावृत्र, महाभोज और वृष्णि नामक पुत्र हुए। सात्वत वंश में ही अन्धक, अनमित्र, महाभोज, प्रसेन और सत्राजित् हुए। सत्राजित ने स्यमन्तक मणि प्राप्त की थी। अनमित्र के वंश में ही पृश्नि का जन्म हुआ और पृश्नि से श्वफल्क की उत्पत्ति हुई। श्वफल्क के गान्दिनी से अक्रूर का जन्म हुआ।

अन्धक के कुकुर, भजमान, शुचिकम्बल और बर्हिष नामी चार पुत्र हुए। कुकुर से आठवीं पीढ़ी पर पुनर्वसु से आहुक नाम का पुत्र हुआ। आहुक के देवक और उग्रसेन हुए। देवक के देववान् आदि चार पुत्र और देवकी आदि सात पुत्रियाँ थी। देवक की सातों कन्याऐं वसुदेव जी को व्याही थीं। उग्रसेन के कंस आदि ९ पुत्र हुए और ४ कन्याऐं हुईं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुकुर के भाई भजमान के आठवीं पीढ़ी पर शूरसेन हुए। उनके मारिषा नामी पत्नी से वसुदेव आदि दस पुत्र हुए। वसुदेव को आनकदुन्दुभी भी कहते हैं। वसुदेव के पाँच बहिनें थीं जिनके नाम थे, पृथा, श्रुतदेवा, श्रुतकीर्ति, श्रुत श्रवा और राजाधिदेवी।

पृथा को शूरसेन ने अपने मित्र कुन्ति को गोद दे दिया था। कुन्ति की दत्तक कन्या होने के कारण उसका नाम कुन्ती पड़ा और वह पाण्डु को ब्याही गई। उससे युधिष्ठिर भीम और अर्जुन उत्पन्न हुए। शूरसेन की एक कन्या श्रुतश्रवा को चेदिराज दमघोष ने विवाहा था जिससे शिशुपाल की उत्पत्ति हुई।

यादव वंशीय राजाओं के वंश क्रमानुगत वर्णन के अतिरिक्त इस वंश के इतिहास की कुछ उन घटनाओं का उल्लेख करना आवश्यक है जिनका सम्बन्ध इनके समसामयिक ऐक्ष्वाकव सूर्यवंशी राजाओं से है। परशुराम और महाराज रामचन्द्र समकालीन थे। इसी प्रकार सहस्रार्जुन और परशुराम के युद्ध का उल्लेख इस बात का परिचायक है कि हैहय वंशीय कार्तवीर्य अर्जुन और महाराज रामचन्द्र लगभग समसामयिक थे। सम्भव है एक दो पीढ़ी का अन्तर रहा हो। कार्तवीर्य अर्जुन का एक पुत्र मधु भी था जो सम्भवतः वही यदुवंशी मधु था जो मधुवन पर राज्य करता था। इसी मधु का पुत्र लवण था जिसके अत्याचारों से तत्कालीन जनता का बहुत उत्पीड़न हुआ था। श्री राम ने अपने भाई शत्रुघ्न को लवण से युद्ध करने और उसे राज्यच्युत करने भेजा था। लवण उस युद्ध में मारा गया। शत्रुघ्न ने १२ वर्ष मथुरा पर स्वयं राज्य करके अपने पुत्र शूरसेन को वहाँ का राजा बना दिया। कुछ इतिहासकारों का मत है कि उसी शूरसेन के नाम पर मथुरा प्रदेश का नाम शूरसेन प्रदेश पडा। लिंग पुराण के आधार पर यह सिद्ध होता है कि इस प्रदेश का नाम सहस्रार्जुन के पुत्र शूरसेन के नाम पर पड़ा। मधुवन का राजा मधु बड़ा धर्मात्मा था। उसको रामायण में असुर लिखा हैं परन्तु प्राचीन काल में राक्षसों की संस्कृति भी बड़ी समुन्नत थी, उनमें भी अनेक धर्मात्मा और सत्यपरायण लोग हुए हैं। प्रहलाद और बलि आदि शुभ्र चरित्र वाले व्यक्तियों की उत्पत्ति असुरवंश में हुई थी। मधु भले ही असुर संस्कृति का मानने वाला हो वह था यादव ही।

यादवों में पौराणिक अनुश्रुति के अनुसार सूर्यवंशी हर्यश्व का विवाह मधु की पुत्री मधुमती से हुआ था। अपने भाई से अनबन होने के कारण हर्यश्व को अयोध्या से निर्वासित होना पड़ा। कदाचित् अपनी पत्नी की सलाह से हर्यश्व अपने श्वसुर मधु की शरण में गया। मधु ने अपने राज्य के दो भाग करके मधुवन का निकटवर्ती प्रदेश तो अपने पुत्र लवण को दिया और हर्यश्व को आनर्त और सुराष्ट्र का शासक बना दिया। इस प्रकार हर्यश्व की सन्तति सूर्यवंश से बदल कर चन्द्रवंश की समझी जाने लगी। हर्यश्व का मधुमती से यदु नामक पुत्र हुआ। इस यदु को ययाति पुत्र यदु से भिन्न व्यक्ति समझना होगा क्योंकि ययाति पुत्र यदु तो इस यदु का कई पीढ़ियों के ऊपर पूर्वज था। हर्यश्व-पुत्र यदु के वंशजों के आगे चल कर अनेक कुल प्रसिद्ध हुए उनके नाम हैं भीम, कुकुर, भोज, अंधक, यादव दाशार्ह और वृष्णि। आनर्त प्रदेश पर जो यादवी शाखा राज्य कर रही थी उसके अन्तर्गत सत्वत-पुत्र भीम महाराज रामचन्द्र का समकालीन था। ऐसा प्रतीत होता है कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शत्रुघ्न पुत्र शूरसेन मथुरा प्रदेश पर अपना आधिपत्य अधिक काल तक स्थिर न रख सका और सात्वत भीम ने महाराज रामचन्द्र के बाद उसे शीघ्र ही अपदस्थ कर मथुरा पर पुनः यादवी शासन स्थापित कर दिया। जब अयोध्या में श्री राम के पुत्र कुश का राज्य था तब मथुरा में यादव वंशीय भीम का पुत्र अंधक राज्य करता था। मथुरा में अंधक वंशीय राजाओं का राज्य कई पीढ़ी तक चलता रहा। उग्रसेन और उसका पुत्र कंस अंधक वंशीय थे। भीम के एक पुत्र का नाम वृष्णि था। शूरसेन जो वसुदेव के पिता थे वृष्णि वंश में उत्पन्न हुए थे। उन्होंने अपने नाम पर शौरपुर (वर्तमान बटेश्वर) बसा कर अपना पृथक् राज्य स्थापित किया था। यह शूर अन्धक वंशीय उग्रसेन के समकालीन थे। इन्हीं के पुत्र का नाम वसुदेव था जिनको उग्रसेन के पुत्र कंस की बहिन देवकी व्याही थी। इन्हीं वसुदेव के श्रीकृष्ण और बलराम दो पुत्र हुए। बलराम अथवा बलभद्र जी तो वसुदेव की रोहिणी नामक स्त्री से और श्रीकृष्ण देवकी से उत्पन्न हुए।

श्री कृष्ण

श्री कृष्ण के कारण यदुवंश गौरवशाली हुआ। श्री कृष्ण के समय में अन्धक-वृष्णि संघ बना हुआ था। यह संघ अंधक और वृष्णि गोत्रों से उत्पन्न क्षत्रियों का था। उग्रसेन उनके राज प्रमुख थे और श्रीकृष्ण मुख्य। श्रीकृष्ण का जीवन चरित्र संक्षेप में इस प्रकार है।

देवकी की कोख से उत्पन्न होने के बाद नवजात शिशु कृष्ण को वसुदेव जी कंस के भय से गोकुल नन्दगोप के घर पहुँचा आये थे। नन्दगोप की पत्नी की कुक्षि से उत्पन्न बालिका को उसके घर से लाकर वसुदेव जी ने यह प्रकट कर दिया कि देवकी के गर्भ से कन्यारत्न उत्पन्न हुआ है। कंस ने उस अबोध बालिका की हत्या करदी। इधर श्री कृष्ण धीरे-धीरे बड़े होकर नन्दगोप के ग्राम में अनेक कुतूहल-वर्द्धक साहसिक कृत्य करने लगे। उन्होंने कई काम अदम्य साहस एवं शूरता के किये और अपने गोप बान्धवों को अनेक आपत्तियों से बचाया। उन्होंने जंगली बर्बर जाति के कुछ हिंसक दैत्यों जैसे धेनुकासुर, प्रलम्बासुर केशी आदि का बध किया। इन्द्र के स्थान पर गोवर्द्धन पूजा का विधान बनवाया। श्रीकृष्ण और उनके साथी गोपों को पर्वत का महत्व ज्ञात था अतः उन्होंने इन्द्र के स्थान पर पर्वत की उपासना उचित समझी। श्रीकृष्ण ने कालिय नाम के नागवंशी दैत्य का जो अपने अत्याचारों और हिंसक कृत्यों से स्थानीय जनता को त्रस्त किये हुए था मर्दन किया और उसे वह भू-भाग त्यागने को बाध्य किया। श्रीकृष्ण और बलराम के वीर कृत्यों का सम्वाद मथुराधिपति कंस के पास पहुँच गया था। उसने उन दोनों को किसी बहाने मथुरा बुलाकर मार डालना ही अपने हित में समझा। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने श्वफल्क के पुत्र अक्रूर को उन दोनों को मथुरा लिवा लाने के लिए कहा। अक्रूर नन्दगोप के पास पहुँचे। इधर नन्दगोप का सारा क्षेत्र उनकी स्त्री, प्रजाजन, गोपजन और गोपियाँ श्रीकृष्ण के वीरोचित कार्यों और उनके अनुपम सौन्दर्य से इतने प्रभावित और प्रेमासक्त थे कि अक्रूर की बात सुनकर उनको घोर मानसिक पीड़ा हुई। वे श्रीकृष्ण को अपना क्षेत्र छोड़ कर जाने की स्वीकृति देने के लिए कतई तैयार न थे। अक्रूर के प्रस्ताव से समस्त गोकुल में कुहराम मच गया। निदान श्रीकृष्ण ने अनेक भाँति से स्वजनों को समझा बुझा कर शान्त किया और अपने भाई बलराम को लेकर अक्रूर के साथ मथुरा चल दिये। कुछ अन्य गोप भी उनके साथ मथुरा आये दोनों भाइयों ने रात्रि को अक्रूर के घर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विश्राम किया और प्रातः कुतूहलवश अपने साथियों सहित नगर का भ्रमण करने निकल पड़े। नगर निवासी दोनों भाइयों के अद्भुत सौन्दर्य और शौर्य से अत्यन्त प्रभावित हुए और चारों ओर उनका सत्कार होने लगा। मार्ग में उनकी कुब्जा दासी से भेंट हुई जो कंस के चन्दन लेपन के लिए जाया करती थी। कंस के धोबी ने दोनों भाइयों और उनके साथी गोपों का तिरस्कार किया। परिणामतः गोपों ने धोबी के सारे कपड़े लूट लिये और अपने आप को उन राजकीय सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित किया। इसके उपरान्त वे कुब्जा के चन्दन से चर्चित होकर नगर का भ्रमण करने लगे।

कंस ने द्वार पर एक मदोन्मत्त हाथी खड़ा कर रक्खा था। उसकी योजना उस हाथी के द्वारा उन दोनों भाइयों का बध कराने की थी। परन्तु बात की बात में दोनों भाइयों ने उस हाथी के दाँत उखाड़ कर फेंक दिये जिससे भयङ्कर चीत्कार करके उस हाथी ने अपने प्राण छोड़ दिये। फिर कंस के दो मल्लों ने जिनके नाम मुष्टिक और चाणूर थे कृष्ण और बलराम को चुनौती दी लेकिन उनकी भी कुबलिया पीड़ हाथी की सी ही गति हुई। इस पर कंस उत्तेजित हो अपने सैनिकों को आज्ञा देने वाला ही था कि श्रीकृष्ण ने उसको मंच से गिरा कर भूमि पर डाल दिया और उस पर ऐसा मार्मिक प्रहार किया कि उसके प्राण पखेरू उड़ गये।

कंस के बध के बाद मथुरावासियों ने श्रीकृष्ण से राजकाज सम्हालने को कहा परन्तु श्रीकृष्ण ने कंस के स्वेच्छाचारी शासन का अन्त करके स्वयं राजा बनना स्वीकार न किया और अन्धक-वृष्णियों के संघीय राज्य की पुनः स्थापना कर दी। उन्होंने कंस के पिता उग्रसैन को ही राज प्रमुख नियुक्त किया।

कंस की दो पत्नियाँ थीं। वे दोनों मगधराज जरासंध की बेटियाँ थीं। कंस के निधन के बाद उसकी दोनों विधवा पत्नियों ने अपने पिता के घर जाकर अपनी विपत्ति का विवरण उसको सुनाया। स्वभावतः जरासन्ध इससे बहुत कुपित हुआ और वह कृष्ण को अपना घोर शत्रु समझने लगा। वह उस काल में भारत में चक्रवर्ती शासन स्थापित करने के स्वप्न देख रहा था। वह विजयोल्लास में उन्मत्त था; उसने कई प्रदेशों पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। अपने स्वप्न को साकार करने में उसे श्रीकृष्ण और उनका संघ बाधक प्रतीत हुआ। अपने जामाता के बध का बदला लेने तथा अपने साम्राज्यवाद के मार्ग से एक महान् कटक को दूर करने के अभिप्राय से उसने विशाल सेनाओं के साथ मथुरा पर कई बार आक्रमण किया परन्तु प्रत्येक बार उसे विफल होकर वापिस लौटना पड़ा। सत्रहवीं बार उसने कालयवन की सेनाओं सहित मथुरा पर आक्रमण करने की योजना बनाई। आने वाले इस महायुद्ध की सूचना जब अन्धक-वृष्णि संघ के लोगों को मिली तब संघ के कुछ नेताओं ने कहा कि जरासंध के आक्रमणों की समस्या श्रीकृष्ण से जरासंध की व्यक्तिगत शत्रुता के कारण है अर्थात् श्रीकृष्ण के कारण संघ को जरासंध से टक्कर लेनी पड़ रही है। श्री कृष्ण ने इस अपवाद पर बड़ा नीतिज्ञतापूर्ण कदम उठाया। उन्होंने सजातीयों को सम्बोधित करते हुए कहा कि जिन ज्ञातियों की वजह से जरासंध के आक्रमण होते हैं उन्हें मथुरा छोड़ देनी चाहिये। श्रीकृष्ण की यह राय बहुत लोगों को पसन्द आई और थोड़े से कुकुर महा-भोजियों के अतिरिक्त समस्त अन्धक-वृष्णि संघ के प्रमुख लोग श्रीकृष्ण के साथ मथुरा का परित्याग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करने को उद्यत हो गये। इस योजना को इतिहास में महाभिनिष्क्रमण कहते हैं। पुनर्वास के लिए द्वारिकापुरी उपयुक्त समझी गई। एक तो वह स्थान व्यापारिक दृष्टि से उपयुक्त था दूसरे दूर होने के कारण जरासंध की पहुँच के बाहर था। मथुरा से बहिर्गमन में श्रीकृष्ण और उनके साथियों का विशाल समूह जरासंध की सेनाओं से तो बच निकला परन्तु कालयवन तो उसी मार्ग की ओर से मथुरा पर बढ़ता आ रहा था, उससे मुठभेड़ अवश्यम्भावी थी। श्रीकृष्ण कालयवन की सेना से लड़ते जाते थे और द्वारिका की ओर बढ़ते जाते थे। मार्ग उन्होंने बड़ी नीतिज्ञता से कालयवन की मुचुकुन्द जी से मुठभेड़ करादी जिसके परिणाम स्वरूप कालयवन मारा गया और उसकी सेना तितर बितर हो गई। श्रीकृष्ण अपने साथियों सहित द्वारका पहुँच गये।

इधर जरासंध ने आक्रमण कर मथुरा पर अपना आधिपत्य स्थापित कर दिया। वहाँ जो कुकुर भोज वंशीय यादव थे उन्होंने जरासंध से सन्धि करली। श्रीकृष्ण के द्वारकापुरी पहुँचने पर वहाँ बड़ी उन्नति हुई। द्वारकापुरी के माध्यम से देश के व्यापार का बड़ा विस्तार हुआ और विदेशों से व्यावसायिक सम्पर्क बहुत बढ़ गये। इस कारण द्वारकापुरी धनधान्य से पूर्ण बड़ी वैभवशालिनी नगरी हो गई। श्रीकृष्ण के तत्वावधान में द्वारकापुरी में एक सुदृढ़ यादव गणराज्य की स्थापना हो गई जिसके वैभव और शक्ति सम्पन्नता की ख्याति सारे देश में फैल गई।

कुरुवंश (हस्तिनापुर)

श्रीकृष्ण के समय में हस्तिनापुर में कुरुवंश का राज्य था। हस्तिनापुर के राजा पाण्डु के अकाल काल कवलित हो जाने से वहाँ के राज-काज का भार उनके अन्धे बड़े भाई धृतराष्ट्र के कन्धों पर आ पड़ा। पाण्डु के पाँच पुत्र युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल सहदेव थे और धृतराष्ट्र के दुर्योधन, दुःशासन आदि अनेक पुत्र थे। धृतराष्ट्र के पुत्र अपने सामर्थ्यहीन पिता के राज्य में उद्दण्ड हो गये थे। वे पाण्डवों को फूटी आँख से भी न देख सकते थे। यद्यपि मृतराजा पाण्डु के ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण युधिष्ठिर हस्तिनापुर के राज्य के उत्तराधिकारी थे धृतराष्ट्र के पुत्र उनका यह अधिकार मानने को तैयार न थे। यद्यपि राज्य के वृद्धजन और सम्मान्य नेता जिनमें भीष्म, द्रोण आदि सम्मिलित थे चाहते थे कि पाण्डवों के साथ न्याय हो तथापि दुर्योधन की कुचालों और उसके साथियों की कुत्सित मन्त्रणाओं के आगे वे अपने आप को असहाय अवस्था में पाते थे। पाण्डवों को उनका न्यायपूर्वक भाग दिलाने में वे असमर्थ हुए। इस पर भी दुर्योधन ने अपने मामा शकुनि के माध्यम से द्यूत क्रीड़ा द्वारा पाण्डवों का सर्वस्व हरण कर लिया और बारह वर्ष तक बनवास में रहने को बाध्य किया। श्रीकृष्ण जिनके कि पाण्डवगण भूआ के लड़के थे ने भी धृतराष्ट्र और उनके राज्य के प्रधान महारथियों को बहुत समझाया बुझाया, उन्होंने इस कार्य के सम्पादन में दौत्य कर्म भी किया परन्तु दुर्योधन की हठधर्मी के आगे उनको भी सफलता न मिली।

श्रीकृष्ण का मिशन विफल होने के उपरान्त समस्या का हल युद्ध के अतिरिक्त और कुछ न था। यद्यपि यह मामला दो राजग्रहों का पारिवारिक झगड़ा था तथापि इसके फलस्वरूप ऐसी आग फैली कि उसकी चिंगारियों से देश का कोई कोना न बचा। समस्त देश के अनेक भू-भागों तथा सीमान्त के भी राजागण दोनों पक्षों में से किसी एक न एक की तरफ होकर युद्ध क्षेत्र में आ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डटे। श्रीकृष्ण पाण्डवों की ओर रहे। अंधकवृष्णि संघ के कुछ नेता कौरवों की ओर रहे। यद्यपि पाण्डवों की ओर तुलनात्मक दृष्टि से सैन्य बल कौरवों की अपेक्षा कम था तथापि श्रीकृष्ण का साथ होने के कारण उनका पक्ष प्रबल हो गया। इस गृहकलह के फलस्वरूप जो महायुद्ध हुआ वह अठारह दिन तक चलता रहा और उसका परिणाम बड़ा भयङ्कर हुआ। उस समय सामरिक ज्ञान एवं अस्त्र शस्त्रों की विद्या बहुत उन्नत अवस्था में थी। अनेकों नये आविष्कार हो चुके थे। सेनाऐं बड़े धुरन्धर युद्ध शास्त्रियों द्वारा संचालित थीं। युद्ध में अनेक राजागण अगणित सेनाओं सहित खेत रहे। भारत के अनेक महान् योद्धा और सेनापति इस युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए। कौरव हारे ही नहीं समूल नष्ट हो गए। पाण्डव जीते तो सही परन्तु उनके समस्त बन्धु बान्धव युद्ध में ही स्वर्ग सिधार गये। इस युद्ध में इतना विनाश हुआ कि एक तरह से सारी सभ्यता ही नष्ट हो गई। इस युद्ध के बाद भारत अवनति के गहरे गर्त में जा गिरा जिसमें से वह शताब्दियों तक भी बाहर निकलने में समर्थ न हुआ।

श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को गीता ज्ञान महाभारत युद्ध की महान् उपलब्धि है। गीता का सारांश यही है कि आत्मा अजर अमर है और मनुष्य को कर्म करना चाहिये। परमात्मा में सब कुछ निवेदन कर सत्कर्म में प्रवृत्त रहना चाहिये।

महाभारत के युद्ध का यादवों पर भी बुरा प्रभाव पड़ा। यादवगण कृतवर्मा के नेतृत्व में कौरवों की ओर से लड़े थे। महाभारत में अनेक यादव वीरश्रेष्ठ रण के मैदान में वीरगति को प्राप्त हुए। उनकी सेना भी बहुत कुछ नष्ट हो गई। अब यादवों में स्त्रियाँ और बच्चे अधिक और पुरुष कम रह गये। महाभारत के बाद का काल यादवों के ह्रास का समय है। जो कुछ यादव बचे प्रमादी हो गये। एक बार प्रभास क्षेत्र में जहाँ यादवगण आमोद-प्रमोद के लिए जाया करते थे वे मदिरा पीकर आपस में लड़ने लगे। लड़ते-लड़ते उनमें इतना भयङ्कर युद्ध हुआ कि सर्वनाश का दृश्य ही उपस्थित हो गया। इस भयानक नर-संहार को देखकर बलराम जी को इतना क्षोभ हुआ कि वे समुद्र यात्रा को चले गये और वहाँ से फिर न लौटे। श्रीकृष्ण दारुक सारथी सहित द्वारका वापिस आये और दारुक को सब वृत्तान्त कहकर अर्जुन को लिवा लाने के लिए भेजा। उनका अभिप्राय यह था कि जो कुछ स्त्री, बच्चे और वृद्ध बच्चे हैं उनको अर्जुन यहाँ आकर लिवा ले जाय। तदुपरान्त श्रीकृष्ण स्वयं देहोत्सर्ग क्षेत्र में जरा नाम व्याधि के तीर से परमधाम को पहुँचे। अर्जुन के द्वारका आने तक वसुदेव उग्रसेन आदि अनेक वृद्धजनों ने भी शरीर त्याग दिया। अर्जुन जब आया तो उसे महान् कोलाहल करते हुए स्त्रियाँ, बच्चे और कुछ वृद्ध जन ही मिले। वह उन सब को लेकर चला परन्तु मार्ग में ही आभीरों ने सब धन सम्पत्ति और कुछ स्त्रियों को भी लूट लिया। जैसे तैसे शेष स्त्रियों को वहाँ से लाकर अर्जुन ने उनको श्रीकण्ठ (पूर्वी पंजाब) प्रदेश में बसा दिया। श्रीकृष्ण के पौत्र बज्रनाभ को उसने अपने पौत्र परीक्षित के सुपुर्द किया। इसके बाद परीक्षित को राजसिंहासन पर बिठा कर पाण्डव गण हिमालय पर अपनी जीवन लीला समाप्त करने चले गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज-भाषा के मुसलमान कवि

ले०--युगल किशोर चतुर्वेदी

सूर, बिहारी, रहीम और रसखान तथा भूषण और पद्माकर आदि सहस्राधिक कुशल कवियों द्वारा सेवित और पोषित ब्रजभाषा यद्यपि आज सर्वथा नगण्य, निराश्रित और उपेक्षित सी प्रतीत हो रही है, परन्तु गत १५ वीं शताब्दी से लेकर १९ वीं शताब्दी तक का एक ऐसा युग रह चुका है, जब समूचे उत्तर भारत में ही नहीं, दक्षिण में केरल और बीजापुर तक ब्रज-भाषा का ही अखण्ड आधिपत्य स्थापित हो रहा था।

ब्रज-भूमि के प्रमुख केन्द्र स्थान मथुरा, वृन्दावन तथा गोकुल और गोवर्द्धन से निसृत ब्रज-भाषा की काव्य धारा कृष्ण भक्ति का संदेश लेकर पंजाब, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र तथा बंगाल तक निरंतर प्रवाहित होती रही थी, जिससे प्रभावित होकर उस समय इन सभी प्रदेशों में उस समय भक्ति, ज्ञान रीति-नीति तथा वीर और शृङ्गार सभी प्रकार की काव्य रचना एक मात्र ब्रज-भाषा के माध्यम से ही होने लगी थी।

सिक्खों के आदि गुरू महात्मा नानक देव जी की वाणी से लेकर अन्तिम गुरू गोविन्द सिंह जी एवं पंजाब के तत्कालीन अन्य कवियों ने भक्ति और ज्ञान तथा वीर रस पूरित जो भी पद रचना की थी, उस सब पर ब्रज-भाषा का प्रभाव पूर्ण रूपेण परिलक्षित होता है। राजस्थान में गिरिधर गोपाल के गुणों की गायिका मतवाली मीरा, जयपुर नरेश के दरबारी कवि बिहारी लाल, संत कवि दाऊ दयालु तथा कृष्णगढ़ नरेश नागरी दास ने अपनी अनुपम काव्य रचना के लिये ब्रज-भाषा ही को अपनाया था। इसी प्रकार गुजरात के नरसी मेहता तथा अन्यान्य प्रान्तों के उस युग के प्रतिनिधि कवियों के काव्य पर ब्रज-भाषा की स्पष्ट छाप पड़ी हुई प्रतीत होती है।

ब्रज-भाषा के इस व्यापक प्रचार-प्रसार और प्रचलन से भारतीय संस्कृति में पले हुए केवल आर्य मतावलम्बी ही प्रभावित हुए हों, सो बात नहीं, इसके मन-मुग्ध माधुर्य ने तत्कालीन विदेशी, विधर्मी और विभाषी सहृदय मुस्लिम मतावलम्बियों के ऊपर भी ऐसा चमत्कार करके दिखाया था कि उस विपरीत विधर्मी और विदेशी शासन काल में जब समूचे उत्तरी भारत में मुस्लिम साम्राज्य का सूर्य पूर्ण प्रचण्डता से चमक रहा था—जब शाही दरबार व अदालतों की राज-भाषा फारसी अथवा फारसी लिपि में लिखित उर्दू का ही सर्वत्र पठन, पाठन और प्रचार-प्रचलन व्याप्त हो रहा था, तब भी एक दो नहीं, सैकड़ों ही मुसलमान कवि कोविदों ने ब्रज-भाषा में रचना करके अपने को गौरवान्वित समझा था।

प्रस्तुत लेख में हम ब्रज-भाषा के केवल मुस्लिम कवियों का ही संक्षेप में विवरण देते हुए प्रेमी पाठकों को उनकी कतिपय भावपूर्ण कविताओं का रस-आस्वादन भी करा देंगे, विशेषतः यह प्रमाणित करने के लिये कि उस मध्य युग में वर्तमान काल की भाँति भाषा को धर्म और राजनीति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से सम्बद्ध न करके गोस्वामी तुलसीदास जी के इस सिद्धान्त के अनुसार कि—"का भाषा का संस्कृत प्रेम चाहिये साँच" इसके गुणावगुण के आधार पर ही उसको केवल काव्य और साहित्य के क्षेत्र तक सीमित रखना समीचीन समझा था। यही कारण है, जो उस समय मुस्लिम मतावलम्बियों द्वारा हिन्दी अथवा ब्रज-भाषा के माध्यम से साहित्य सृजन करने पर भी आज कल की भाँति न तो उनके "धर्म और संस्कृति" के नष्ट होने का नारा लगाया जाता था और न उन पर "हिन्दी को बल-पूर्वक थोपने" के नाम पर उनको भड़काया जाता था।

तत्कालीन सहृदय मुसलमान कवियों की यह गुण ग्राहकता अथवा उदारता ही मानी जायेगी, जिससे प्रेरित होकर उन्होंने अपनी "मादरे जबान" के मुकाबले इस देश की सबसे लोक प्रिय भाषा-ब्रज-भाषा को अपनी काव्य रचना के लिये अपनाया था, तथा उनमें से अनेक उसके माध्यम से भाव, भाषा तथा रस और अलंकार आदि की दृष्टि से इतनी उत्कृष्ट और उच्च कोटि की कविता करने में सफल हुए थे, कि उनको 'आचार्य पद' के योग्य माना गया था, इतना ही नहीं, आर्येतर धर्मावलम्बी होते हुए भी उन्होने अपनी रचनाओं में हिन्दुओं के भक्ति-भाव का इतना समावेश किया था, कि आधुनिक हिन्दी के जन्म-दाता भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र ने "इन मुसलमान हरिजनन पै कोटिन हिन्दू वारि हौं" कहकर उनकी अतीव सराहना की है।

मुसलमान कवियों ने इस देश की स्थानीय भाषा में कविता करना लगभग तभी आरम्भ कर दिया था, जब कि उनके आक्रमण इस देश पर होने लगे थे। इतना ही नहीं, यह भी एक संयोग की बात है, कि आज देव नागरी लिपि में लिखित जिस 'हिन्दी" को हमारे स्वतन्त्र देश की राज-भाषा होने का गौरव प्राप्त हुआ है, उसका यह नामकरण भी मुसलमान विद्वानों के द्वारा ही हुआ था। उस समय के मुसलमानों के साहित्य में ही 'हिन्दी' या 'हिन्दवी' शब्द उस भाषा के लिये प्रयुक्त हुआ था, जिसका उद्गम प्राचीन आर्य भाषाओं से हुआ था तथा जिसको अधिकांश उत्तरी भारत के लोग अपने विचारों के आदान-प्रदान में प्रयुक्त करते थे।

"मिश्र बन्धुओं" के मतानुसार मुसलमानों द्वारा हिन्दी में कविता करने के प्रमाण उनके आरम्भिक आक्रमण के समय से ही प्राप्त होते हैं, यहाँ तक कि १०८० में जिस समय महमूद गजनवी ने भारत पर चढ़ाई की थी, तब भी उसके साथ हिन्दी भाषा-विद् तथा हिन्दी कविताओं का भाव समझने वाले सभ्य मौजूद थे। कहते हैं, कि जिस समय महमूद गजनवी ने कालिंजर के किले पर आक्रमण किया था, तो वहाँ के राजा नन्द ने महमूद की प्रशंसा में एक छन्द लिखकर उस के पास भेजा था। सुलतान के हिन्दी जानने वाले सभासदों ने जब उस छन्द का अर्थ महमूद तथा उसके अरबी, फारसी के विद्वान साथियों को समझाया तो वे इतने प्रभावित हुए कि उसने कालिंजर के किले पर से अपना आक्रमण ही स्थगित नहीं कर दिया, अपितु उसको आस-पास के १४ किले पुरस्कार स्वरूप और प्रदान किये।

इसी प्रकार सन् ११५० के लगभग अन्हलपुर पट्टन के सोलंकी महाराज जयसिंह देव के समय में कुतुबअली नामक एक मस्जिद के इंमाम ने, जो हिन्दी के अच्छे कवि भी थे, एक कविता बद्ध आवेदन पत्र महाराज की सेवा में इस आशय का भेजा था कि कुछ लोगों ने उसकी मस्जिद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गिरादी है। उक्त कविता को पढ़कर सोलंकी नरेश ने अपराधी को दंड देने के साथ-साथ मस्जिद का फिर से निर्माण भी करा दिया था।

इस युग के एक ऐसे मुसलमान कवि, जिसने फारसी के परम विद्वान होते हुए भी हिन्दी भाषा में उत्कृष्ट साहित्य का सृजन करके अपने नाम को अमर किया है, वह अमीर खुसरो थे, जिनका कार्य काल १४ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में माना जाता है। आपका पूरा नाम अब्दुल हसन खुसरो था। आपकी रची पहेलियों मुकरी, दुमखुने आदि हिन्दी जगत में बहुत ही लोक प्रिय हुए हैं, परन्तु उनका सबसे अधिक अनूठा महत्वपूर्ण ग्रन्थ—खालक बारी—है, जिसको फारसी हिन्दी का सर्व प्रथम कोष कहा जा सकता है। लगभग इसी काल में मुल्ला दाऊद नामक एक मुस्लिम कवि ने "नूरक और चन्दा" नामक एक काव्य ग्रन्थ की रचना की थी।

खुसरो की भाँति कबीर और मलिक मुहम्मद जायसी भी इस काल के ही ऐसे प्रतिभाशाली कवि और हुए जिन्होंने मुसलमान होते हुए भी हिन्दी काव्य के इतिहास में अपनी अमर छाप अंकित की थी। कबीर के पद और साखियों का आज तक भी जितना प्रचार बना हुआ है, उतना तत्कालीन किसी अन्य कवि की कविता का नहीं माना जाता। इसी प्रकार 'जायसी' के 'पद्मावत' और "अखरावट" नामक दो काव्य ग्रन्थ भी तत्कालीन हिन्दी काव्य की उत्कृष्ट रचना समझी जाती है।

लगभग इसी समय के हिन्दी के दूसरे मुसलमान कवियों में कुतबन, मंझन, उसमान, नूर मुहम्मद आदि और प्रसिद्ध हुए हैं जिनके क्रमशः मृगावती', "मधु मालती" "चित्रावली" इन्द्रावती आदि ग्रन्थ हिन्दी काव्य के इतिहास में अपना विशेष स्थान रखते हैं।

यहाँ तक हमने उन मुसलमान कवियों तथा उनकी रचनाओं का ही उल्लेख किया है, जिन्होंने सामान्यतः हिन्दी भाषा के माध्यम से ही कविताऐं की थीं परन्तु ठेठ ब्रज-भाषा का जादू मुसलमान कवियों पर तब से चलना आरम्भ हुआ जब यहाँ अलह जी' नामक फारसी के एक विद्वान यात्री ने ब्रज की एक छोकरी के मुख से ब्रज-भाषा के माधुर्य और उसकी सरसता से युक्त इस एक ही वाक्य से "मायरी माम मग सांकरी पायन में काँकरी गडतु है," उस पर इतना मुग्ध हुआ कि अपने फारसी के अभिमान को भूल कर वह ब्रज-भाषा का पूर्ण प्रशसक बन गया।

अन्त में मुगल सम्राट अकबर के शासन काल में तो ब्रज-भाषा अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई थी. जिसके प्रभाव से उसके दरबार के सभासद ही नहीं. स्वयं सम्राट भी अछूते नहीं बचे, जिसका प्रमाण उसके द्वारा रचित इन सरस पदों से मिलता है:—

(१)

साहि अकब्बर बाल की बाँह,
अचित्त गही चलि भीतर भौने।
सुन्दरि द्वारहि डीठलगाइकै,
भागिवे को भ्रम पावति गौने।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चौंकति सी चहुँ ओर विलोकति,
संक सकोच रही मुख मौने।
यों छबि नैन छबीली के छाजत,
मानो विछोह परे मृग छौने॥

(२)

साहि अकब्बर एक समै चले,
कान्ह विनोद विलोचन बालहिं।
आहट ते अवला निरख्यो चलि,
चौंक चली करि आतुर चालहिं॥
त्यों बलि बेनी सुधारि धरी,
सुभई छवि यों ललना अरु लालहिं।
चम्पक चारु कमान चढावत,
काम ज्यों हाथ लिये अहि बालहिं॥

अकबर के अतिरिक्त उसके दरबार के अन्य हिन्दी कवियों में सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ तानसेन तथा रहीम सर्वोत्तम माने जाते हैं। तानसैन के बनाये तीन ग्रन्थ--(१) संगीत सार, (२) राग माला, (३) श्री गणेश स्तोत्र हैं।

सूरदास जी की प्रशंसा में रचित इनका यह दोहा प्रसिद्ध है:—

किधौं सूर को सरलग्यो, किधौं सूर की पीर।
किधौं सूर को पद लग्यो, तन, मन, धुनत शरीर॥

अब्दुल रहीम खान खाना उपनाम 'रहीम' अकबर के फूफा बैराम खाँ के पुत्र और शाही सेना के सेनापति थे। एक विशाल राज्य के विविध सैनिक तथा प्रशासनिक पदों पर रहते हुए भी आपने हिन्दी ब्रज-भाषा में प्रचुर मात्रा में कविता की थी। आपके द्वारा रचित ग्रन्थों में "रहीम सतसई", "बरवे नायका भेद", रास पंचाध्यायी और शृङ्गार सोरठा अत्यन्त प्रसिद्ध हैं।

आपके कतिपय दोहे इस प्रकार हैं:—

अमिय पियावत मान बिनु रहिमन हमन सुहाय।
प्रेम सहित मरिवो भलो, जों विष देय बुलाय॥
धूर धरत निज शीश पर कहु रहीम किहि काज।
जेहिं रज ऋषि पत्नी तरी, सो ढूंढत गजराज॥

रहीम के अन्य समकालीन मुसलमान कवियों में कादिर बक्स पिहानी भी ब्रज-भाषा के श्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। "गुन ना हिरानी गुन गाहक हिरानो है" के रूप में जो लोकोक्ति बहुप्रचलित है, वह इसी कवि के पद का एक अंश है 'पूरा पद इस' प्रकार है:—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुन की ना पूछै कोऊ, औगुन की बात पूछै,
कहा भयो दई कलि युग यों खरानौ है।
पोथी और पुरान ज्ञान, ठट्ठन में डार देत,
चुगला चवा इन को भान ठहरानौ है।

कादिर कहत यातें कछु कहिबे की नाहिं।
जगत की रीति देख चुप मन मानो है॥
खोलि देखो हियो सब भांतिन सो भाँति-भाँति।
गुन ना हिरानो गुन गाहक हिरानो है॥

इस युग के दूसरे सर्वश्रेष्ठ लोक प्रिय मुसलमान कवि रसखान हुए हैं। कट्टर पठान जाति के होते हुए भी यह महाशय ब्रज-भाषा के प्रेम में पग कर परम वैष्णव हो गये थे, यहाँ तक कि इनका उल्लेख "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता" में अष्ट छाप के प्रवर्तक गोस्वामी विट्ठल नाथ जी के शिष्य के रूप में किया गया है। इन्होंने १६७१ में "प्रेम-वाटिका" और "सुजान रसखान" नामक बड़े ही उत्तम ग्रन्थ बनाये हैं। इनकी कविता इतनी भक्ति-भाव पूर्ण, सरस और हृदय ग्राहिणी है कि आज उनका पठन-पाठन सूरदास और मीरा के पदों की भाँति ही किया जाता है। कतिपय लोकप्रिय पद इस प्रकार हैं:—

(१) या लकुटी और कामरिया पर राज तिहूँ पुर कौ तजिडारों।
आठहु सिद्धि नवो निधि को सुख नन्द की गाय चराय बिसारों॥
आँखिन सों रसखान कबै ब्रज के बन बाग तडाग निहारों।
कोंटिन हूँ कल धौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारों॥

(२) मानुस हों तो वही रसखान बसौ ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन,
जो पथु हों तो कहा बस मेरो, चरों नित नन्द की धेनु मंझारन।
पाहन हों तो वह गिरि को जो धरयो कर छत्र पुरन्दर धारन,
जो खग हों तो बसैरो करौं, वही कालिन्दी कूल कदम्ब की डारन॥

रहीम और रसखान आदि मुसलमान कवियों ने केवल ब्रज-भाषा के प्रति ही प्रेम प्रदर्शन नहीं किया, वे ब्रज-भूमि के भक्त तथा ब्रज राज भगवान कृष्ण के अनन्य आराधक भी रहे थे जैसा कि उनके इन पदों से प्रमाणित होता है:—

जो रहीम करनो हुतो ब्रज को यही हवाल।
काहे को नख पै धरयो, गोवर्द्धन गोपाल॥

यों रहीम मन आपनो कीन्हो चतुर चकोर।
निशि बासर लाग्यो रहे, कृष्ण चन्द्र की ओर॥

इस आशय के रसखान के पदों के नमूने ऊपर दिये जा चुके हैं।

[अपूर्ण]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्रन्थावलोकन

(श्री राजेन्द्र रंजन एम० ए०)

समालोचनार्थ
प्रत्येक पुस्तक पत्र-पत्रिकाओं की दो
प्रति आनी चाहिये

भ्रमण गीत,

रचयिता: श्री गोकुलचंद तैलङ्ग

प्रकाशक विद्या विभाग काँकरौली (राजस्थान) मूल्य एक रुपया पचास न. पै.

ब्रज काव्य में 'भ्रमण गीत' की रचना एक जीवन्त मौलिक एवं नव प्रयोग है, भ्रमण-काव्य का भी अपना एक वैशिष्ट्य रहता है, 'भ्रमण गीत' में कलकत्ता से रायपुर तक की कार यात्रा का सुन्दर वर्णन है। श्री गो० बिट्ठलनाथ जी महाराज (मथुरा—काँकरौली) के साथ कवि यात्रा कर रहे थे, मार्ग में भटक गये अतः घूमते घामते किस प्रकार काँकरौली लौटे इसका सरस स्वाभाविक चित्र भ्रमण गीत में है। ब्रजभाषा का सुष्ठु रूप तथा नंददास का वह प्यारा छंद, गीत को ऊपर उठा ले गया। गीत में ब्रजभाषा के सुन्दर व्यजक प्रयोग और अंग्रेजी शब्दों का ब्रजीकरण भी फबा।

रुकि रुकि झुकि झुकि मुरि मुरि अनगिन ब्रेक सँभारे।
रोक झोक की नोंक झोंक सों अँग अँग हारे।
पैंड़ पैंड़ 'काशन' मिले ऐंड ऐंड भई चाल।
ब्रेक ब्रेक होते बचे हाल भयी बेहाल।
कार सरकार की।

दूसरी ओर लोकोक्तियों को पद्यबद्ध कर कवि ने एक चमत्कार उत्पन्न कर दिया है। 'टाटा' आदि नगरों का भी रचपच के मनोहर चित्र खींचा है। पर्वतीय मार्ग पर 'कार भ्रमण' देखिये—

कबहुँ सिखर पै चढ़ीं गगन चुंबन कों आतुर
पेखन कों इहि कौतू हल बहु शृङ्ग चले जुट
गिरि पद सों ऊपर चढ़ी चोटी लों भरि ओज
ऐड़ी सों चोटी तलक बल लगाइ हिय चोज
मगन स्रम सीक रनि

उठीं गिरीं गिरि उठीं बढ़ीं रुकि झुकि पलपल में
प्रकट विकट संकट कटकनि सुकपुक थल थल में
हौनी होइ सो होइ है अब तौ इहि जिय जानि
सब अबाध गति सौ बढ़े लौह पुरुष मतिमान
प्रान साँ सनि धरे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संध्या वर्णन के दो छन्द और प्रस्तुत हैं—

घिरनि लग्यौ घन तिमिर सघन घन मसि निधि सौ धसि,
उमड़ि चल्यौ तम तोम व्योम सौ रोम रोम बसि,
भीतर बाहर एक सौ रह्यौ अँधेरौ छाय,
जनु संध्या सुंदरि सुमुख आँचर लियौ दुराय,
कनक बपु आपनों।

हिमकन मिस सों छल छलाइ आए तिहिं लोचन,
झलमलाइ रहे सजल जलद से भीने तनमन,
बन कानन आनन उम्यौ निखरि मुखर भई प्रीत,
उर मुगता निधि गई बिखरि सिखर समूह निरीत,
नीति रस की भली।

मन की मौज

रचयिता—पींजरे कौ पंछी

(श्री उमा बल्लभ चतुर्वेदी) प्रकाशक—पटना पब्लिशर्स पटना।

श्री उमावल्लभ जी ब्रजभाषा के प्रौढ़ कवि हैं, इनकी भाषा मुहावरे दार मधुर और शुद्ध परिष्कृत है, मन की मौज में स्वदेश प्रेम के गीत है। डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने भी इस कृति की प्रशंसा की है। कृति के ३ भाग हैं पहले में रेल दूत है दूसरे में कृषक कलाप और तीसरे में मीठे बोल।

रेल दूत लेखक ने पटना कैंप जेल में लिखा है, पास में ही रेलवे लाइन थी तो श्री 'पींजरे कौ पंछी' रेल से कुछ मन की बात कहते थे वही बात रेल दूत में साकार हो गई है। रेल दूत 'दोहा' छन्द में है। देखिये –देश गीत

श्री सोभा याकी अकथ, और और सब ओर।
जननि जानिजनु प्रकृति ही, खेलत याकी कोर।
भारत माँ के सीस कौ, मुकट हिमाचल जोय।
भयौ न ह्वै है पद-दलित चढ़ौ उड़ौ किन कोय।
हिम गिरि गंगा सिंधु कौ कबि गन गावैं गीत।
सैल सरित बन हिंद के निरखत उपजत प्रीत।
जाति चहूँ दिस रेल तू निज नयननि लखि हिंद।
बस बरनन याकौ जहाँ माँटी खाँय गुविंद॥

'मीठे बोल' में से एक पद प्रस्तुत है:—

भाव भरी अनुरागिन पाती
मेरी बात बतावति प्रेमिन तिन हूँ की मो पहँ पहुँचाती।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दूर बिदेस बिकट बंधन में व्यथित होत हिय व्याकुल।
देवदूत सी स्नेह सँदेसों दै हियरौ हुलसाती।
मैं तेरौ गुन गाऊँ तऊँ अरी दर्द दिलवारी।
दूर बसत द्वै हृदय मिलावत बिरहिन के मन भाती।

राधा

रचयिता : डा० किशोरी लाल गुप्त,

प्रकाशक अभिनव प्रकाशन १७८ बाजबहादुर आजमगढ़ मूल्य ५० पैसे।

'राधा' ब्रज-भाषा में लिखित एक अभिनव युक्त प्रबंध है। यद्यपि इस कृति का विषय क्षेत्र वही 'राधा कृष्ण' है 'तथापि नव्यं भवति काव्यं ग्रन्थन कौशलात्।

'राधा' की भाषा शुद्ध साहित्यिक ब्रजी है जिसमें लाक्षणिक एवं व्यंजनात्मक प्रयोगों की प्रचुरता है, राधा की सौंदर्यानुभूति, भाव धारा और विचार सरणि पर छायावाद का प्रभाव परिलक्षित होता है। ब्रज-भाषा 'राधा' में बड़े सुन्दर और मधुर रूप में प्रस्तुत हुई है:—

अधरान पै सोंनजुही सी लसै, नव आँखिन आँखि चुरावन लागी।
सकुची सिमटी झिझकी सी रहै, निज आँगिय आँग दुरावन लागी।
कर ऊँचे उँचै मधुमोद अँचै, दिन द्वैक ते भोरी भुरावन लागी।
अरमानि की वानिहि आनि गही, अँगुरी अँगुरी चटकावन लागी।

स्याम सतक

कवि दाऊ दयाल गुप्त,

प्रकाशक सस्ता साहित्य भवन, मथुरा। मूल्य ५० पैसे।

'स्याम सतक' में श्री गुप्त जी के सरल ब्रज-भाषा में रचे सौ पद 'संकलित' हैं आरंभ में स्तुति और विनय के बाद में कृष्ण कथा और कुछ युग चेतना संबंधी। भाव धारा नई है, अकृत्रिम है परंतु यह कृति ब्रज-भाषा के साहित्यिक रूप की अपेक्षा लोक रूप के अधिक निकट है। कुछ ग्राम्य प्रयोग भी परिलक्षित होते हैं।

राष्ट्र धर्म (रोटी विशेषांक)

संपादक श्री राम शंकर अग्निहोत्री,

भारतीय संस्कृति पुनरुत्थान समिति ललनऊ। मूल्य एक रुपया।

राष्ट्र धर्म विचारों के उच्च धरातल पर संपादित मासिक पत्र है, राष्ट्र धर्म का रोटी विशेषांक वास्तव में उपादेय हैं मानव के लिये आज आधार भूत समस्या रोटी की है उसके विषय में विभिन्न दृष्टि कोणों से संतुलित और विवेक पूर्ण परीक्षण और पर्यालोचन इस अंक में है। 'रोटी' पर जो चिन्तन राष्ट्र धर्म ने प्रस्तुत किया है वह अपने में गौरव शाली है तथा विचारों को हिला देने वाला है। डा० प्रभाकर माचवे का लेख 'साहित्य और रोटी' साहित्यकार की विवशता को साकार कर देता है "आज जो भारतीय भाषाओं में श्रेष्ठ जीवन को आमूल हिला देने वाला उदात्त संस्मरणीय स्वर, न सृजनात्मक, न आलोचनात्मक साहित्य में कहीं नहीं सुनाई देता, उसका मूल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कारण यह 'रोटी की मार' है। लगता है कि बुद्धि जीवी भी जैसे खरीद लिया गया है और वह किसी की बीन पर नाच रहा है। जो पैसे देगा, वह अपनी ही ढंग की नफीरी चाहेगा चाहे राजनैतिक दल हों चाहे विदेशी मतवाद। परिणाम यह है कि स्वतन्त्र चेता स्वाधीन चिन्तक, इन सब लाभ लोभ के आकर्षण-रपटन के ऊपर उठे हुए लेखक बहुत कम है।" पर यह भी सत्य है कि साहित्यकार भूखा कब तक लिखेगा, श्री माचवे जी के ये विचार आज के संक्रान्ति युगीन मानव के जटिल जीवन पर सही उतरते हैं।

श्री बनारसी दास चतुर्वेदी का भी दिशा कोण चिन्तनीय है। 'अनिवार्य भारतीय अर्थरचना का आधार 'रोटी सार, असार' सुख की दिशा लेख सचमुच महत्त्वपूर्ण हैं। 'सूरज लीलती हुई घाटियों' में असंतोष का उभार स्पष्ट है। श्री सोहन लाल द्विवेदी की 'नई फसल' खूब रुची।

इस प्रकार राष्ट्र धर्म की विशेषांक परम्परा गौरवशालिनी है, आशा है इसी प्रकार वह देश को राष्ट्र को जागरण का संदेश देगा उसे उठायेगा और विचारों को नई दिशा प्रदान करेगा।

वितस्ता (बसन्त अंक)

संपादक डा० रमेश कुमार शर्मा,

प्रकाशक हिन्दी परिषद् स्नातकोत्तर हिंदी विभाग जम्मू कश्मीर विश्व विद्यालय श्रीनगर।

प्रस्तुत अंक में भाव नाटिका, कविता, गद्य काव्य, गीत, लेख कहानी सभी कुछ सुन्दर रूप से संकलित किये गये हैं।

लद्दाखी प्रेम-गीत डोगरी प्रेम-गीत तथा कश्मीरी गजल, जनपदीय साहित्य की रोचक शृङ्खला प्रस्तुत करती हैं। 'कब तक' दृष्टिदान' तथा 'उस्ताद की सीख' अच्छी लगीं। अंक सुन्दर है संग्रहणीय है तथा रोचक है। अहिंदी प्रदेश से इस प्रकार की पत्रिका महान गौरव की बात है। वितस्ता शुद्ध सृजनात्मक साहित्य को प्रस्तुत करती है आलोचनात्मक और अनुसंधानात्मक दिशा की ओर भी उसकी उपलब्धि श्लाघ्य है।

अन्तर्मन

श्री देवी लाल सामर

प्रकाशक : भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर राजस्थान। मूल्य एक रुपया।

विरह के क्षण में स्वतः निःसृत भावों का तीव्र प्रवाह अन्तर्मन' में गद्य काव्य रूप में आकार पा गया है, 'अन्तर्मन' की प्रत्येक पंक्ति में विरह का तीव्र उच्छ्वास है जो हृदय को आन्दोलित कर देता है। श्री देवी लाल सामर की यह रचना स्व० श्री गोविन्द की स्मृति को अपनी करुणा में साकार कर देती है। यहाँ मैं श्री गोविन्द के विषय में भी दो शब्द उद्धृत कर देना उपयुक्त समझता हूँ श्री गोविन्द का जन्म एक साधारण मराठी परिवार में हुआ, जयपुर के विद्याभवन में उनका संपर्क श्री सामर जी से हुआ। गुरु शिष्य का यह सम्बन्ध आगे चलकर पिता-पुत्र रूप में परिणति पा गया। श्री गोविन्द एक प्रतिभा और लगन के व्यक्ति थे लोक कला मंडल में उनके कारण एक गति उत्पन्न हो गई थी। उन्हीं के दुखद अवसान पर जो अनुभूति श्री सामर जी को हुई उसी का आकार अन्तर्मन है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१-हमारे जवानों के शौर्य ने शत्रु के मनसूबे धूल में मिला दिए।
२-हमारे यहाँ बने हथियारों के सामने अमरीकी हथियार कामयाब न हो सके।

३-हमें अपने को अन्नोत्पादन में भी आत्म निर्भर होना है।
४-अमरीका या अन्य देशों का मुँह ताकना धोखा दे सकता है।

देश का हर व्यक्ति राष्ट्र की इस सबसे बड़ी समस्या में अपना योग दे सकता है। जिला सहकारी बैङ्क में अपना धन आप जमा करें जहाँ वह पूर्ण सुरक्षित है, ब्याज दूसरे बैङ्कों से आपको ज्यादा मिलेगा और किसानों के अन्नोत्पादन के कार्य में आपके धन का उपयोग होगा।

जिला निवासियों के लिये हमारी शुभ कामनाओं के साथ हम आशा भी करते हैं कि आप अपने ही सहकारी बैंक को अपनाकर अपना तथा इस बैंक का और अपने राष्ट्र का सदैव हित करेंगे।

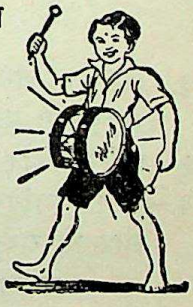

ब्याज की दरें

सेविंग खाता पर	४	प्रतिशत	वार्षिक
कौल डिपौजिट पर	३।।।	,,	,,
६ माह की अमानत पर	५।।	,,	,,
१ साल की अमानत पर	६।	,,	,,
२ साल की अमानत पर	६।।	,,	,,
३ साल की अमानत पर	६।।।	,,	,,
४ साल की अमानत पर	७	,,	,,
५ साल की अमानत पर	७।	,,	,,
७ साल की अमानत पर	७।।	,,	,,

मथुरा जिला सहकारी बैंक लि०, मथुरा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपनी सम्पूर्ण बचत आज ही

उत्तर प्रदेश कोअपरेटिव बैंक लिमिटेड

प्रधान कार्यालय लखनऊ में

जमा कर अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कीजिये

उक्त बैंक सहकारी आन्दोलन के अन्तर्गत सरकारी साझेदारी तथा बैंकिंग संस्थान अधिनियम के अन्तर्गत सरकार द्वारा निरीक्षित एक मात्र एवं विश्वसनीय बैंकिंग संस्था है

शाखाएँ – आगरा, अल्मोड़ा, बरेली, फैजाबाद, डी० ए० वी० कालेज कानपुर, गोंडा, पीलीभीत, कानपुर, रामपुर, सीतापुर, वाराणसी।

क्षेत्रीय कार्यालय—आगरा, गोरखपुर, कानपुर, बरेली।

हमारी विशेषताएँ

१—राज्य की समस्त कृषि योजनाओं के लिए जिला एवं केन्द्रीय सहकारी बैंकों के माध्यम से आर्थिक सुविधाएँ प्रदान करना।

२—प्रत्येक प्रकार की बैंकिंग सुविधायें प्रदान करना।

३—अल्प सामयिक एवं मियादी अमानतें आकर्षक दरों पर स्वीकार करना।

आप भी राष्ट्र निर्माण योजनाओं की पूर्ति, उसकी स्मृद्धि के निमित्त अपना धन लगाकर सहयोग प्रदान कर राष्ट्र निर्माण में हाथ बटाएँ।

अन्य जानकारी

क्षेत्रीय अधिकारी, शाखा प्रबन्धक या मुख्य कार्यालय से प्राप्त कीजिये

गत ५ वर्षों में बैंक की प्रगति के कुछ आंकड़े

	३०–६–६०	३०–६–६५
१—पूँजी	२५४·७६ लाख	५३८·७६ लाख
२—अमानतें	७४७·४६ लाख	२०६०·०८ लाख
३—सहकारी संस्थाओं को ऋण दिया गया	१३०५ ९५ लाख	३३३६·२५ लाख
४—लाभ	१६·०५ लाख	३७·०२ लाख

ए० पी० सिंह
आई० ए० एस०
अध्यक्ष

मथुरा सिंह
उपाध्यक्ष

धीर सिंह वर्मा
सामान्य प्रबन्धक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसानों के लिए स्वर्ण अवसर

यानमार पावर टिलर

(पी० के० ए० २० एन० टी० ९५ के०)

(७–१०·५ अश्व शक्ति का)

प्रयोग कर

कृषि उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि का महत्वपूर्ण साधन

छोटे किसान के लिए ट्रैक्टर जो संसार प्रसिद्ध १०·५ बी० हा० पा० यानमार डीजल इञ्जिन एवं निम्न उपयन्त्रों से युक्त है :–

न्यूमैटिक रबर ह्वील्स, राटार टिलर स्टैण्डर्ड ट्रल किठ माउन्टेड डीजेल इञ्जिन यानमार माडेल एन० टी० ९५ के० आयरन ह्वील्स वाटर फिल्ड राइडिंग लापरेट्स सेडल तथा न्यूमैटिक रीयर ह्वील एक्स्टेंशन ऐटरी तथा कवर, स्वायल हीपिंग बोर्ड लाइट इक्विपमैन्ट डावनेमों के साथ दी साइड राइडर टीम स्पेशल रौटरी ब्लेड्स, ड्रम के साथ, फोर्क राटार टाइन्स तथा दो स्टैग प्लाड।

किसानों के कृषि सम्बन्धी प्रत्येक कार्य जुताई, हेंगाई, पटेला पानी निकालना व छिड़काब आदि।

विशेष जानकारी के लिये–कृपया सम्पर्क स्थापित करें :–

उत्तर प्रदेश

कोआपरेटिव फैडरेशन लिमिटेड,

६ कैंपर रोड, लखनऊ।

(उत्तर प्रदेश के लिये एकमात्र वितरक)

फोन नं० : २४८५२, २५८६४, २३५६३, २७७६०, २८०३३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गाँधी जयन्ती के शुभ अवसर पर

हमारी हार्दिक बधाई

जिला सहकारी संघ लि०, मथुरा

आपकी सेवा में निरन्तर संलग्न कीमतों को
बढ़ने से रोकने और उचित मूल्य पर
आटा, चीनी, मैदा
सर्व साधारण को उपलब्ध कराता है।

राष्ट्रीय खाद्य समस्या को हल करने के लिए—

उपज बढ़ाने को रासायनिक खादों का किसानों को वितरण करता है साथ ही फसल की रक्षा को कीटाणु-नाशक औषधियाँ भी सुलभ कराता है।

आपकी सेवा के साथ ही
सङ्घ लगातार उन्नति कर रहा है।

रामहेत सिंह	मूलराज शर्मा	गोपाल प्रसाद एडवोकेट
अध्यक्ष	व्यवस्थापक	अवैतनिक मंत्री

जिला सहकारी संघ लि०, मथुरा।

बाबू वृन्दावनदास अध्यक्ष ब्रज साहित्य मण्डल, के लिए राष्ट्रीय प्रेस, डैम्पियर नगर, मथुरा में मुद्रित तथा प्रकाशित।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

मार्गशीर्ष सं० २०२४ वि०

सम्पादक :
श्री वृन्दावन दास
बी० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक :
श्री किशन प्रसाद जैन
संयुक्त प्रधान मन्त्री

अखिल भरतीय व्रज साहित्य मंडल, मथुरा

वर्ष २१] वार्षिक मूल्य ४) [अङ्क ३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

❋ अनुक्रमणिका ❋

क्र० सं०	लेख	लेखक	पृष्ठ सं०
१	संपादकीय	श्री वृन्दावनदास	१
२	भक्ति आन्दोलन की लोक-चेतना	डा० हरवन्शलाल शर्मा पी-एच० डी०, डी० लिट०	५
३	श्रद्धेय पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी के पत्र	श्री वृन्दावनदास	९
४	स्व० हृदेश कवीन्द्र माहौर और राष्ट्रीय कवि व्यास का ब्रजभाषाफाग साहित्य	श्री रामचरण हयारण 'मित्र'	१९
५	कवीन्द्र रवीन्द्र की आकांक्षा का ब्रजभाषानुवाद	श्री कविरत्न शास्त्री गोविन्द चतुर्वेदी	२२
६	हिन्दी जनपदीय परिषद्: एक आवश्यकता	श्री गणेश चौवे	२३
७	ब्रजभाषा के मुसलमान कवि (२)	श्री युगल किशोर चतुर्वेदी एम० ए०	२४
८	ग्रामीण बोलियाँ और हिन्दी की समृद्धि	डा० अम्बाप्रसाद सुमन एम० ए० डी० लिट०	३०
९	भारतीय इतिहास में भारशिव नागवंश	श्री वृन्दावनदास	३३
१०	आधुनिक हिन्दी-कविता में सूर	श्री अरविन्द मिश्र एम० ए०	३९
११	सामाजिक विषमता-विषयक लोक-गीत	श्री गौरीशङ्कर द्विवेदी 'शङ्कर'	४३
१२	अहोई आठें (लोक वार्ता)	श्री उमाशङ्कर दीक्षित एम० ए०	४५
१३	पत्र-पत्रिका समीक्षा	श्री वृन्दावनदास	४६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

[अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य-मण्डल की मुख-पत्रिका]

वर्ष २१] मथुरा मार्गशीर्ष सं० २०२४ [अङ्क ३

सम्पादकीय —

राजभाषा विधेयक लोकसभा में पास हो गया। उसकी देश में बड़ी गहन प्रतिक्रिया हुई। विधेयक को पास कर वास्तव में हिन्दी के प्रति अन्याय किया गया है। प्रबुद्ध वर्ग को चाहिए कि वह हिन्दी प्रचार-प्रसार के विषय में सरकार पर आश्रित न रह कर स्वयं चेष्टावान हो। भूतकाल में भी सरकार की ओर से हिन्दी को संरक्षण प्राप्त न था परन्तु वह खूब पनपी और फैली। इसका कारण वह जन-सहयोग है जो उसे प्राप्त होता था। हिन्दी देश की एक मात्र सम्पर्क भाषा है, उसे ८० प्रतिशत से अधिक देशवासी भली भाँति समझ लेते हैं। उसकी प्रगति का रथ अप्रतिहत रूप से आगे बढ़ेगा, उसकी गति को कोई शक्ति रोक नहीं सकती।

दक्षिण भारत में हिन्दी-द्रोह

दक्षिण भारत में हिन्दी के विरोध में चल रही आँधी को देख कर प्रत्येक भारतवासी का हृदय दुःख से शतधा विदीर्ण हो रहा है। राष्ट्रीय एकता के इस ध्वंस से प्रत्येक देश प्रेमी को एक गहरा आघात पहुँचा है। जो हिन्दी राजा जी, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू प्रभृति देशवन्द्य नेताओं द्वारा देश की एक मात्र सम्पर्क भाषा के रूप में मान्य हो चुकी है उसी मातृभाषा हिन्दी को हिन्दी-राक्षसी, हिन्दी दानवी की आकृतियों में अग्निसात् किया जा रहा है। कैसी विडम्बना है ? यही नहीं, लोगों में उन्माद इस दर्जे तक पहुँच गया कि वे राष्ट्रीय सम्पत्ति को ध्वस्त करके अपना आक्रोश प्रगट कर रहे हैं। आइये इसके कारणों पर विचार करें।

कुछ वर्ष पूर्व मद्रास राज्य को पहिले राजा जी ने और फिर श्री कामराज ने एक स्वस्थ और सुन्दर प्रशासन प्रदान किया था। बहुत-से ऐसे सुधार किये और सुविधाएँ दी गईं जिनके कारण जनता ने यह अनुभव किया कि उनके राज्य की स्थिति देश के अन्य राज्यों से कहीं अच्छी है। विरोधियों और निहित स्वार्थ वालों को यह सम्भव न था कि वे समाजवादी अथवा आर्थिक आधारों पर सत्तारूढ़ दल की भर्त्सना कर सकें। वे एक ऐसे अस्त्र की तलाश में थे जिसको चला कर वे सत्तारूढ़ दल को चुनावों में पराजित कर अपदस्थ कर सकें। वह अस्त्र उन्हें हिन्दी के विरोध के रूप में मिल गया और इसी के द्वारा उन्होंने मद्रास राज्य की भोली भाली जनता का शोषण किया। सत्तालोलुपों ने अपने स्वार्थ में अन्धे होकर राष्ट्रीय एकता के सम्भावित विनाश

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की कोई परवाह न की और अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए जनता की निम्न स्तरीय भावनाओं को उकसाया और उनके हृदयों को विद्वेष की अग्नि से प्रज्वलित कर दिया। धार्मिक और भाषायी आधारों पर यह आग उसी तरह लगाई गई जिस प्रकार कि इससे भी पहिले मुस्लिम लीग द्वारा लगाई गई थी और जिसके कारण भारत का विभाजन हो गया था। जनता को चाहिये कि वह देश के हित को दृष्टि में रख कर इन स्वार्थी सत्तालोलुप नेताओं को उनके असली स्वरूप में पहिचाने और देश को सर्वनाश के गर्त में गिरने से बचावे। वे नेता जो देश की एकता को ध्वस्त करके पार्थक्य की भावना फैलाते हैं इस देश की जनता के सबसे बड़े शत्रु हैं।

हिन्दी को यह समझना कि वह उत्तर-प्रदेश, राजस्थान, मध्य-प्रदेश अथवा बिहार की ही भाषा है एकदम गलत है। हिन्दी पूरे देश की भाषा है। वह प्रत्येक स्त्री, पुरुष, आबाल-वृद्ध सभी की भाषा है। भारत में तो केवल १४ भाषाऐं ही हैं परन्तु रूस में तो ७१ हैं और उन ७१ भाषाओं के होते हुए 'रूसी' भाषा समस्त देश की एक सम्पर्क भाषा है। हिन्दी का पक्ष समर्थन करने वालों को हिन्दी वाला कह कर पुकारा जाता है। हिन्दी वाले ये कब कहते हैं कि किसी भी अहिन्दी भाषी राज्य का काम-काज उसकी भाषा में न होकर हिन्दी में ही हो ? वे यह कब कहते है कि तमिल मद्रास राज्य की भाषा न रहे ? देश के समस्त प्रबुद्ध वर्ग ने मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है कि भारतीय संस्कृति एक जाज्वल्यमान रत्न के सदृश है जिसकी १४ भाषायें उसकी मुखरिमायें हैं। विश्व-विद्यालयों के उपकुलपतियों के सम्मेलन ने विश्व-विद्यालयीय स्तर पर शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषा को तय कर दिया है। प्रत्येक राज्य के राजकीय कार्य और सांस्कृतिक अनुष्ठान उसी राज्य की भाषा में होना निश्चित ही हैं। फिर हिन्दी के केन्द्र में रहने पर इतनी आपत्ति होना एक महती आश्चर्यजनक घटना है। अंग्रेजी भी तो सहभाषा के रूप में विधेयक द्वारा स्थिर करदी गई है। मद्रास राज्य का हिन्दी-विरोध इन स्थितियों में बुद्धिगम्य नहीं है।

हिन्दी और अंग्रेजी एक साथ सातवीं शताब्दी में विश्व में अवतरित हुईं। जब अंग्रेजी आज विश्वभर में मान्य है यह दुर्भाग्य ही है कि हिन्दी का उसके देश भारत में भी ठौर ठिकाना नहीं। हिन्दी सरल है, सुबोध है, उसमें वे सब गुण विद्यमान हैं जो अंग्रेजी में है। प्रत्येक भारतवासी का यह शुभ सङ्कल्प होना चाहिये कि हिन्दी न केवल प्रत्येक भारतवासी को ग्राह्य हो अपितु वह अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बने।

तमिलनाड में हिन्दी के प्रति दुर्भावना का नाश किस प्रकार हो इस पर ठोस काम होना चाहिये। वहाँ की जनता को आश्वस्त किया जाना चाहिये कि हिन्दी से उसके हितों पर किसी प्रकार कुठाराघात न होगा। भाषायी आधार पर तमिलनाड को जनसंख्या के अनुपात से केन्द्रीय सेवाओं में संरक्षण दिया जा सकता है। केन्द्रीय परीक्षाओं को हिन्दी अथवा तमिल किसी भी भाषा में दिये जाने की छूट दी जा सकती है। केन्द्रीय सरकार वहाँ की राज्य सरकार से पत्र-व्यवहार हिन्दी के साथ तमिल अनुवाद के द्वारा कर सकती है।

विश्वविद्यालयों के अधिकारियों का 'अकल-अजीरन' रोग

भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र लिखा है "चूरन खाते लाला लोग, जिनको अकल अजीरन रोग।" मालुम होता है यह महारोग अब विश्व विद्यालयों में भी घुस गया है। विश्वविद्यालयों में हिन्दी-शोध के सम्बन्ध में फैली कुव्यवस्था इसका पुष्ट प्रमाण है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वातन्त्र्योत्तर काल में भारत की चौदह भाषाओं में कुल मिलाकर जितने शोध-प्रबन्ध स्वीकृत हुए हैं उनसे बीस गुने अकेले हिन्दी में हुए हैं। लगभग ६०० शोध प्रबन्धों पर उपाधियाँ वितरित हो चुकी हैं और १५०० के करीब शोध-प्रबन्धों पर काम हो रहा है। यद्यपि विषयों की विभिन्नता और व्यापकता तो इस प्रचुर परिमाण में स्पष्ट ही है पुनरावृत्ति पिष्टपेषण और अनुकरणशीलता के लिए भी ऐसी स्थिति में द्वार खुल जाते हैं। विश्वविद्यालयों के अधिकारियों को इसके प्रति जागरूक रहने की आवश्यकता है। परन्तु देखने में आया यह है कि एक-एक शीर्षक के ऊपर कई-कई प्रबंध लिखे और स्वीकृत किये गये हैं। ऐसे अनेकों शीर्षक हैं जिनमें थोड़ी तब-दीली करके भिन्नता दिखाई गई है परंतु यथार्थ में वे एक ही हैं। विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों को उपाधि देने के विषय में होड़ सी लगी है। प्रत्येक विश्वविद्यालय यह समझ बैठा है कि जितनी अधिक उपाधियाँ वह देगा उतना ही बड़ा वह समझा जायगा।

डाक्टर विजयेन्द्र स्नातक ने एक स्थान पर लिखा है, "हिन्दी में जो छः सौ प्रबन्ध स्वीकृत हुए हैं उनमें चार सौ शुद्ध पिष्टपेषण की कला के निदर्शन हैं। यदि इन चार सौ शोध-प्रबन्धों का अनुसन्धानात्मक दृष्टि से पुनर्मूल्याङ्कन किया जाए तो विदित होगा कि इन प्रबन्धों के दो लाख पृष्ठों में से दो हजार ही नवीन हैं शेष सब पिष्टपेषण है पुनरावृत्ति और सङ्कलन मात्र है। यह कितनी हीन और दयनीय स्थिति है।" इस व्यापक अन्धेर को देख कर कुछ लोग अक्सर कहते सुने गये हैं कि आजकल विश्वविद्यालय से डाक्टरेट की उपाधि लेना सरल है एम० ए० पास करना कठिन।

एक ओर तो यह दशा है अब दूसरी ओर 'अकल-अजीरन' देखिये। स्वर्गीय डाक्टर वासुदेव शरण अग्रवाल पर शोध का इस आधार पर निषेध किया गया कि उनका सृजनात्मक साहित्य कोई नहीं है। वाह रे अक्ल की खूबी! उस युग–प्रवर्तक मनीषि की जिसने वैदि की विद्या का प्रकाश हिन्दी जगत में फैलाया हो, जिसने अपार जनपदीय भण्डार से हिन्दी के कलेवर की वृद्धि स्वयं की हो और दूसरों से कराई हो जिसने अनवरत रूप से उपनिषदों के नवनीत से हिन्दी के कलेवर की पुष्टि की हो कृतियाँ इस योग्य नहीं समझी गईं कि उनपर अनुसन्धान हो। डाक्टर अग्रवाल के अकेले पाणिनि के भाष्य पर ही अनेकों शोध प्रबन्धों का मसाला उपलब्ध हो सकता है। क्या कला और संस्कृति पर उनके द्वारा लिखे गये अनेक निबन्ध हिन्दी साहित्य की स्थायी निधि नहीं है? क्या उनके द्वारा की गई भारत के प्राचीन इतिहास और पुरातत्व सम्बन्धी अनेक गवेषणायें शोध के विषय प्रस्तुत नहीं करती हैं? क्या तथ्यों के आलोक में अहम्मन्यता का परित्याग कर हिन्दी साहित्य के विशाल हित में डाक्टर अग्रवाल पर शोध को अविलम्ब प्रोत्साहित किया जायगा?

ब्रज-प्रान्त का निर्माण

इन दिनों हरियाणा और वृहत्तर दिल्ली के कतिपय राजनीतिज्ञों ने ब्रजक्षेत्र के कुछ भागों को उनके प्रदेशों में सम्मिलित करने की आवाज़ उठाई थी। उनकी इस माँग के विरोधस्वरूप ब्रज-प्रदेश के निर्माण की माँग भी सस्वर हो गई। इन पंक्तियों के लेखक ने कई वक्तव्य एवं लेख समाचार पत्रों में प्रकाशित कराये। पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने भी कई विचारोद्दीपक लेख लिखे जो कि कई समाचार पत्रों में प्रकाशित हो चुके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं। चतुर्वेदी जी ने यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया है कि ब्रज-प्रान्त के निर्माण के पीछे हमारा ध्येय सत्तात्मक राजनीति न होकर ब्रज की साहित्यिक, सांस्कृतिक, समाजिक एवं औद्योगिक उन्नति है जो कि वांछनीय एवं अपेक्षित है।

हिन्दी सम्बर्द्धिनी योजना

हमारा विचार है कि अन्तर्जनपदीय आन्दोलन को अब गतिशील बनाया जाय। हिन्दी के भण्डार की श्रीवृद्धि तो करनी ही है। इस विचार को मूर्त्तरूप करने के लिए इस अङ्क में बन्धुवर श्री गणेश चौबे एवं डाक्टर अम्बाप्रसाद जी सुमन के दो विद्वत्तापूर्ण लेख अन्यत्र प्रकाशित हैं। हम इस विषय पर अन्य विद्वानों के विचार एवं लेख आमन्त्रित करते हैं। मण्डल द्वारा इस विषय में एक ठोस कार्य-क्रम भी प्रस्तुत किया जायगा।

गोष्ठियाँ एवं अभिनन्दन

स्वर्गीय पन्डित राधाचरण जी गोस्वामी पर डाक्टर केदारदत्त तत्राड़ी का शोध-प्रबन्ध एक गोष्ठी में चर्चा का विषय बना। पूज्य गोस्वामी जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर तत्राड़ी जी का प्रबन्ध एक अत्युत्तम प्रयास है। गोष्ठी पं. जवाहरलाल चतुर्वेदी की अध्यक्षता में हुई। पूज्य गोस्वामी जी को भाव भीनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित की गईं।

एक गोष्ठी भारती अनुसन्धान भवन के तत्वावधान में पद्मश्री डाक्टर हरिशङ्कर जी शर्मा की अध्यक्षता में हुई। ज्यो० राधेश्याम जी ने डाक्टर साहब का स्वागत किया। डाक्टर साहब निरुक्त-विज्ञान के महारथी हैं। उन्होंने धारा वाही रूप से अनेक शब्दों की व्युत्पत्ति पर प्रकाश डाला। श्रोतागण डाक्टर साहब के निरुक्त-ज्ञान से चकित एवं मन्त्रमुग्ध से हो गये। सुन्दर कविताओं का पाठ हुआ। डाक्टर साहिब ने कवियों को जनोपयोगी काव्य का सृजन करने की सलाह दी।

तारीख ३१ दिसम्बर को चतुर्वेद किशोर संघ द्वारा ब्रज-साहित्य के गौरव, मनीषि श्री जवाहरलाल जी चतुर्वेदी का अभिनन्दन किया गया। उत्सव की अध्यक्षता अमर उजाला संपादक बा० डोरीलाल अग्रवाल ने की। कई विद्वानों ने चतुर्वेदी जी की साहित्यिक सेवाओं की चर्चा की। चतुर्वेद किशोर सङ्घ ने अपनी पत्रिका माथुर हितैषी का एक अङ्क चतुर्वेदी जी को अभिनन्दनाङ्क के रूप में भेंट किया। समारोह के संयोजक श्री राजेन्द्र रंजन थे।

ब्रज साहित्य सम्मेलन

वृन्दावन नगरपालिका ने अपने शताब्दी समारोह के अवसर पर उपरोक्त सम्मेलन का आयोजन किया था। सम्मेलन की अध्यक्षता साहित्य महारथी डाक्टर हरवंशलाल जी शर्मा ने की। ब्रज-साहित्य के अनेक मर्मज्ञ विद्वानों ने सम्मेलन मे भाग लिया। सम्मेलन एक सफल आयोजन के रूप में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन विषयक सामग्री हम ब्रज-भारती के अगले अङ्क में प्रकाशित करेंगे।

—वृन्दावनदास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भक्ति आन्दोलन की लोक-चेतना

(डा० हरवंशलाल शर्मा, पी-एच० डी०, डी० लिट्,)

७ वीं ८ वीं शताब्दी के आस पास भक्ति आन्दोलन की लहर दक्षिण में उठी और १३ वीं १४ वीं शताब्दी तक उसने संपूर्ण देश को आत्मसात् कर लिया। यह आन्दोलन लोक-चेतना का ही आध्यात्मिक रूप था। इस आन्दोलन के फलस्वरूप भारतीय साहित्य में उदारता, मानवता तथा सर्वांगीणता का प्रवेश हुआ। डा० ग्रियर्सन वैसे विदेशी विद्वानों ने भी इस आन्दोलन को सब अन्दोलनों से व्यापक और विशद बताया है तथा लिखा है कि "बिजली की चमक के समान अचानक समस्त पुराने मतों के अन्धकार के ऊपर एक नई बात दिखाई दी, कोई हिन्दू यह नहीं जानता कि यह बात कहाँ से आई और कोई भी उसके प्रादुर्भाव का कारण निश्चित नहीं कर सकता।" वास्तव में ग्रियर्सन का यह कथन ठीक नहीं है क्योंकि इस आन्दोलन के पीछे शताब्दियों, सहस्राब्दियों तक की परम्पराएँ निहित हैं। लौकिक और अलौकिक साधनाओं का बड़ा सुन्दर समन्वय इस आन्दोलन से सम्भव हो सका। भागवतकार ने इस आन्दोलन की ओर संकेत करते हुए लिखा है :—

उत्पन्ना द्रविडे साऽहं वृद्धिं कर्णाटके गता।
क्वचित् क्वचिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता॥
तत्र घोरे कलैर्योगात् पाखण्डैः खंडिताङ्गका।
दुर्बला हं चिरंयाता पुत्राभ्यां सह मन्दताम्॥
वृन्दावनं पुनः प्राप्य नवीनेव सुरूपिणी।
जाता हं युवतीसम्यक् श्रेष्ठारूपा तु साम्प्रतम्॥

इसका जन्म द्रविड़ देश में हुआ, कर्नाटक और कहीं-कहीं महाराष्ट्र में पालन पोषण हुआ, गुजरात में यह आन्दोलन कुछ मन्द पड़ गया परन्तु फिर वृन्दावन (ब्रज प्रदेश) में आकर यह सुदृढ़ और व्यापक बना। कहना न होगा कि इस सम्पूर्ण आन्दोलन के मूल में लोक-चेतना का वह स्वरूप था जो शास्त्रीय बोझ से नीचे दब गया था। राजनीतिक एवं सामाजिक परिवर्तनों के कारण जो धारा दक्षिण में पहुँच गई थी वह फिर अवसर पाकर उत्तर भारत में पहुँची और अनुकूल वातावरण पाकर एक अत्यन्त विशाल और विस्तृत प्रवाह में परिणत हो गई :—

भक्ति द्राविड ऊपजी लाए रामानन्द। परगट करी कबीर ने सात दीप नौ खंड॥

दक्षिण में इस आन्दोलन के पुरस्कर्ता आलवार भक्त थे।

लोक-चेतना के दो प्रमुख तत्व हैं—प्रेम और शृङ्गार। भक्ति आन्दोलन में इन्हीं दो तत्वों को अभिव्यक्ति मिली है। ऐसा लगता है कि ये दोनों तत्व लोक मत के प्रधान तत्व बन चुके थे। बौद्धों की महायान तथा सहजयान शाखाओं में प्रेम तथा शृङ्गार का ही प्राधान्य है, दक्षिण के आलवार भक्तों के गीतों में भी प्रेम तथा शृङ्गार की ही ध्वनि गूँजती है, वैष्णव, सहजयान,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शाक्तमत तथा शैवमत में भी किसी न किसी रूप में इन दो तत्वों को अभिव्यक्ति मिली है। भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों में आज जो कला के नमूने प्राप्त होते हैं उनसे यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है कि प्रेम और शृङ्गार धार्मिक स्तर पर सामान्य जनता में स्वीकृत हो चुके थे। शायद इसीलिए भक्ति साहित्य में इन दोनों तत्वों का समावेश किया गया। सगुण भक्ति की अवतार भावना की प्रतिष्ठा में ये दोनों ही तत्व आधार स्तम्भ रहे हैं। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश का लोक-साहित्य प्रायः शृङ्गारमय था जिसमें स्वच्छन्द प्रेम की अभिव्यक्ति अतिशय जीवन्त रूप में हुई थी। 'गाथा सप्तशती' में अहीर और अहीरिनियों की प्रेम गाथाएँ, ग्राम वधूटियों की शृंगार चेष्टाएँ तथा प्रकृति चित्रण कितना सरस, सजीव तथा हृदयस्पर्शी है। अब्दुल रहमान के 'संदेश रासक' एवं हेमचन्द के 'प्राकृत व्याकरण' में यह शृंगार-भावना और भी उन्मुक्त रूप में अभिव्यक्त हुई है। विरक्ति प्रधान जैन धर्मग्रन्थों में भी हमें शृंगार और प्रेम की भावना का पुट बराबर मिलता है। राहुल जी ने ठीक ही लिखा हैं कि "हमारे मुनि कवि भी निर्वाण-कामिनी के आलिंगन का गीत गाने लगे थे।" नखशिख वर्णन भी जैन कवियों ने बड़ी मस्ती से किया है। ऐसा लगता है कि लोक मानस की सहज और स्वाभाविक धारा को मध्ययुगीन आचार्यों ने शास्त्रीय रूप दे दिया। उन आचार्यों से प्रेरणा पाकर भक्त कवियों ने लोक-साहित्य के आधार पर ऐसे साहित्य की सर्जना की जिसका संपूर्ण ढांचा तो लौकिक रहा केवल उसकी दिशा बदल गई। लौकिक प्रेम और शृंगार जड़ोन्मुख होता है इन भक्तों ने उस प्रेम को सत्, चित् आनन्दस्वरूप चिद् विग्रह की ओर मोड़ दिया। इस प्रकार इनके साहित्य में प्रेम और शृंगार के स्वच्छ और मार्जित रूप की अभिव्यक्ति हुई। लोक-साहित्य के सभी तत्वों का समावेश भक्ति-साहित्य में हुआ है। कथा-रूप, कथानक रूढ़ियां, काव्य रूप और रीति-रिवाज सभी का समावेश भक्ति साहित्य में मिलता है। लोक कथाओं के माध्यम से सम्पूर्ण भक्ति साहित्य को सरस हृदय ग्राही बनाने की चेष्टा की गई है। अवतारी पुरुष राम और कृष्ण की कथाओं में भी ऐसे प्रेम प्रसंग डाले गए हैं जो जनमानस को प्रभावित कर सकें। लोक कथाओं के अनेक अप्राकृत तथा अतिप्राकृततत्व भी अवतारों की कथाओं में आ गए हैं। प्रेमाख्यानक साहित्य की कथा में तो अधिकांश में लोक कथा ही है। जहाँ तक कथानक रूढ़ियों का प्रश्न है वे भी भक्ति साहित्य में ज्यों की त्यों आई है। लौकिक रस की गीति परम्परा को राम और कृष्ण के भक्तों ने भक्ति के पदों में बदल दिया। चर्चरी, फाग, हिंडोल, बसंत आदि लोक प्रचलित गानों पर इन भक्तों ने ऐसा गहरा रंग चढ़ाया कि वह आज भी फीका नहीं पड़ सका है। सांस्कृतिक और सामाजिक उत्सवों में जो लौकिक रस के पद प्रचलित थे वे सब राम और कृष्ण के नाम से जोड़ दिए गए।

इस प्रकार लोक चेतना उभर कर भक्ति आन्दोलन के रूप में परिणत हो गई। शास्त्रीय बन्धनों की कठोरता से लोक मानस तिलमिला उठा था। उत्तर भारत में तो विदेशी आक्रमणों के कारण इन बन्धनों का कम अवकाश था, दक्षिण में बड़ी संकीर्णता और निर्ममता से इन नियमों का पालन किया जा रहा था और इनके प्रमुख शिकार छोटी जाति के लोग थे। यही कारण है कि इस आन्दोलन के मूल प्रवर्तक छोटी जातियों के ही लोग थे जो जनता जनार्दन पर किसी की इजारेदारी को बर्दाश्त नहीं कर सकते थे-उनके इष्ट राम हों या कृष्ण दरिद्रनारायण थे। यह लहर धीरे-धीरे सारे देश में फैली और प्रत्येक क्षेत्रीय भाषा में इस आन्दोलन के फलस्वरूप जिस साहित्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का निर्माण हुआ वह भक्ति साहित्य कहलाता है। मुसलमान सूफी फकीरों ने भी इस आन्दोलन में योगदान किया और लोक प्रचलित प्रेमाख्यानों के माध्यम से प्रेम की पीर का संदेश दिया। आचार्य लोगों ने इसी आन्दोलन के कारण भारतीय भक्ति पद्धति को नई दिशा दी और संपूर्ण लोक जीवन को उसमें समाहित कर लिया। प्रेमाख्यानकारों ने तो उन लोक तत्वों को यथासाध्य लौकिक धरातल पर ही स्वीकार किया था, सगुण भक्तों ने उन्हें पूर्णतया अलौकिकता के रंग में रग दिया। लोक में प्रचलित अनेक विश्वासों और रूढ़ियों को अवतारों की कथाओं से सम्बद्ध कर दिया गया। लोक-प्रचलित स्वप्नों तथा शकुनों तक का भक्ति साहित्य में वर्णन मिलता है। चित्रकूट में सीताजी का स्वप्न "सकल मलिन मन दीन दुखारी, देखी सासु आन अनुहारी" राजा दशरथ की मृत्यु की सूचना से सत्य होता है। इसी प्रकार "वाम भाग चारा चखु खाय, काग दाहिने खेत सुहाय, सफल मनोरथ समझहु भाय" आदि अनेक शकुनों का विचार 'राम चरित मानस' में है। वरदान, अभिशाप तथा आकाशवाणी भी लोक मानस की प्रचलित परम्पराएँ थीं।"

सगुण भक्तों ने काव्य रूप तो लगभग सभी लोक परम्परा से लिए हैं, जैसे अठपहरा (अष्टयाम) मंगल, विरहुली, सोहर, नहछू, बसंत, हिंडोला, बारहमासा, चांचर, होरी, फाग, कहरा, बेलि, नचारी, रास, रासक, रसिया आदि। छन्दों का भी लगभग वही हाल है। दोहा, चौपाई तक विशुद्ध लौकिक छन्द हैं। 'प्राकृत पेंगलम्' में तो दोहा, आभीर या अहीर कहलाता है। इसी प्रकार चौपाई और बरवै भी विशुद्ध लोक-परम्परा के छन्द हैं। जहाँ तक गेय पदों का प्रश्न है, उनकी भी पृष्ठभूमि लौकिक ही हैं। इसीलिए मध्ययुग का सम्पूर्ण देशी भाषा का साहित्य एक प्रकार से लोक साहित्य ही कहा जा सकता है—यदि इस साहित्य से ब्रह्मपरक संकेतों को हटा दिया जाय तो वह विशुद्ध लोक चेतना का प्रतीक होगा। भक्त कवियों ने अनेक गीतों के प्रयोग किए हैं ध्रुपद शैली का तो प्राधान्य है ही साथ ही भैरव और ठुमरी, झूलना आदि भी अनेक प्रकार के लोक गीतों का प्रयोग हुआ है। भक्ति साहित्य में मुहावरों और कहावतें भी लोक-मानस की हैं। संतों, सूफियों और सगुण भक्तों ने खुलकर लोक प्रचलित कहावतों और मुहावरों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया है। सूरदास जी के ही कुछ मुहावरे देखिये :—

१—कबहुक फूलि सभा में बैठ्यौ, मूंछनि ताव दिखायौ।
२—मुरली स्यामहि मूंड चढ़ाई।
३—अंगुरी गहत रह्यौ जिहि पहुँचौ।
४—ऊधौ जो जिय जानि कै देत जरे पर लौन॥
५—चाम के दाम चलावत तुम तौ कुबिजा के अधिकारी।

इसी प्रकार अनेक लोक प्रचलित कहावतों तथा पहेलियों का प्रयोग भक्ति साहित्य में मिलता है।

कुछ कहावतों के नमूने देखिए :—

१—बांझ कि जान प्रसव कै पीरा। (तुलसी)
२—घर आयौ नाग न पूजहिं बामी पूजन जाहि॥
३—जोवन रूप दिवस दस ही कौ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

४—धान कौ गांव पयार तैं जानौ ।

५—का की भूख गई मन लाडू ।

६—कहा कहत मासी के आगें जानत नानी नानन ।

भक्ति साहित्य में लोक जीवन के रीति-रिवाजों का समावेश बहुत अधिक मात्रा में हुआ है। इन रीति-रिवाजों की कई श्रेणियाँ हैं—जैसे—१—संस्कारों से सम्बद्ध । २—पर्व व्रत, उत्सव आदि । ३—विशिष्ट जातियों के रीति-रिवाज । इस प्रकार सम्पूर्ण मध्ययुगीन संस्कृति का चित्रण भक्ति साहित्य में हुआ है ।

भक्ति साहित्य के माध्यम से भारतीय जीवन की वास्तविकता का उद्घाटन हुआ है । भगवान् राम और कृष्ण के सभी उत्सवों में उनकी जन्म-भूमि की प्रथाओं और परम्पराओं का समावेश हुआ है । एक-दो उदाहरणों से यह बात और भी स्पष्ट हो जावेगी—

होलिकोत्सव—

होरी खेलत ब्रज खोरिनि में, ब्रजबाला बनि-बनि बनवारी ।
ढप की धुनि सुनि विकल भई सब, कोउ न रहत घर घूंघटवारी ।।
जाहि अबीर देख आँखिनि में, ताही कौं छिरकत पिचकारी ।
सौधैं तेल अबीर अरगजा, तैसी जरद केसरि चटकारी ।।

स्त्री-शृंगार—

बनी ब्रजनारि सोभा भारि ।
पगनि जेहरि, लाल लहंगा, अंग, पचरंग सारि ।
किंकिनी कटि, कनित कंकन, कर चुरी झनकार ।।

जादू टोना तथा जंत्र-मंत्र—

टोना-टामनि, जंत्र-मंत्र करि ध्यावौ-देव दुआरौ री ।
सासु-ननद, घर-घर लिए डोलति, याकौ रोग विचारौ री ।।

शकुन-अपशकुन—

बांए काग, दाहिने खर-स्वर, व्याकुल घर फिरि आई ।।

तथा

भुज फरकत अंगिया तरकति, कोउ मीठी बात सुनावै ।
स्याम सुन्दर कौ आगम जानिय, वै निश्चय घर आवै ।
इमि सगुननि कौ यहै भरौसौ, नैननि दरस दिखावै ।।

इस प्रकार भक्ति आन्दोलन का मध्ययुगीन संस्कृति और साहित्य की रक्षा और श्रीवृद्धि में अनुपम योगदान है । केवल हिन्दी भाषा में नहीं—देश की सभी भाषाओं का साहित्य भक्ति आन्दोलन से अनुप्राणित हुआ और सारा देश भावात्मक तथा रागात्मक एकता के सूत्र में आन्दोलन के कारण बड़े सहज भाव से बंध गया ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्रद्धेय पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी के पत्र

(श्री वृन्दावनदास)

पं. बनारसीदास जी चतुर्वेदी को मैं बचपन से जानता हूँ। लगभग ४० वर्ष हुए एक बार जब मैं आगरा कालेज में विद्यार्थी था उनका किसी छात्रावास में भाषण हुआ था। उस समय सर्व प्रथम मैंने उनके दर्शन किये और भाषण भी सुना। उनकी विद्वता और निरभिमानता से तो मैं उसी समय से प्रभावित हूँ। उसके बाद यदा कदा वे मथुरा भी आया करते थे। तब यद्यपि मुझे कभी-कभी उनके दर्शन हो जाया करते थे उनसे व्यक्तिगत परिचय न हुआ था।

यों तो मैं हिन्दी में चालीस वर्षों से लिखता रहा हूँ परन्तु चतुर्वेदी जी से व्यक्तिगत परिचय तो मुझे सन् १९६३ से ही हुआ है। सन् १९६३ में मैं अखिल भारतीय ब्रजसाहित्यमण्डल का कार्यवाहक अध्यक्ष निर्वाचित हुआ था और सन् १९६४ से ब्रजभारती-सम्पादक के रूप में हिन्दी की सेवा करता रहा हूँ। कदाचित् ब्रज-साहित्यमण्डल से सम्बन्धित एक हिन्दी सेवी होने के नाते चतुर्वेदी जी ने मुझे अपने निकटस्थ और घनिष्ट साहित्यिक परिचय तथा कृपा के लिये उपयुक्त समझा। उसी समय से चतुर्वेदी जी जिस आत्मीयता और घनिष्टता से मेरे ऊपर कृपा करते रहे हैं उसका मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

चतुर्वेदी जी इस देश के उन महान व्यक्तियों में से एक हैं जो पत्र-व्यवहार द्वारा अपने मित्रों, परिचितों और सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को सतत प्रेरणा प्रदान करते रहते हैं, तथा क्या करणीय है इस दिशा की ओर सदैव इङ्गित करते रहते हैं। मैं चतुर्वेदी जी के उन आत्मीय परिचितों में से एक हूँ जिसको कभी कभी तो प्रतिदिन एक पत्र प्राप्त होता रहता है और जिसकी कार्य-पूर्ति करना वह अपना अहोभाग्य समझता है।

चतुर्वेदी जी के पत्रों से उनका महान व्यक्तित्व अनायास ही परिलक्षित होता है। ये पत्र उनकी शालीनता, विद्वत्ता, विनम्रता और सदाशयता को स्पष्ट रूप से प्रतिविम्बित करते हैं। भाई रामचरण जी हयारण मित्र ने ब्रजभारती के ज्येष्ठ अङ्क में चतुर्वेदी जी के पत्रों के विषय में अपने संस्मरण लिखे थे। स्वयं चतुर्वेदी जी ने स्वर्गवासी डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्रों पर सम्मेलन पत्रिका में एक विद्वत्तापूर्ण संस्मरणात्मक लेख लिखा है। मुझे भी ऐसा लगा कि जब मैं स्वयं चतुर्वेदी जी के पत्रों के रूप में एक स्थायी साहित्यिक निधि का स्वामी हूँ तो क्यों न उनके पत्रों के सम्बन्ध में एक गवेषणापूर्ण एवं विचारोद्दीपक निबन्ध लिख डालूँ।

पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी ब्रज-साहित्यमण्डल के संस्थापकों में से हैं। ब्रजसाहित्यमंडल की स्थापना सन् १९४० ई० में हुई थी। वह दिन दूर नहीं है जब मण्डल का एक विस्तृत इतिवृत्त जनता के सम्मुख आवेगा जिसमें उसके दीर्घ जीवन की एक उज्वल झाँकी प्रस्तुत होगी। उस झाँकी में निस्संदेह चतुर्वेदी जी का स्थान अत्यन्त उच्च होगा।

ब्रजसाहित्यमण्डल में कुछ वर्षों तक गतिरोध रहा। इधर जब से मैंने उसका कार्य भार सम्हाला और ब्रजभारती को पुनः चालू किया तब तो चतुर्वेदी जी के हर्ष का ठिकाना न रहा। उनका ब्रजसाहित्यमण्डल का 'पुनरुद्धार' शीर्षक एक लेख अनेक समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उस लेख की एक प्रति उन्होंने मेरे पास भी भेजी तथा ब्रजसाहित्यमण्डल की स्थापना से सम्बन्धित समस्त उस पत्र-व्यवहार की प्रतिलिपियाँ भी भेजी जो उनके तथा स्थानीय साहित्य सेवियों के मध्य हुआ था। तद्विषयक अन्य पत्रों के अतिरिक्त कुछ महत्वपूर्ण पत्रों को ही यहाँ उद्धृत किया जाता है।

फीरोजाबाद
९-११-६५

प्रियवर, वन्दे !

ब्रजभारती का भाद्रपद अङ्क मिला। कृतज्ञ हूँ। आपका लेख मैंने ध्यानपूर्वक पढ़ लिया। यह जानकर सन्तोष हुआ कि श्री मीतलजी प्रभृति का सहयोग आपको प्राप्त होगया है।

मेरे विचारों का जो उल्लेख आपने किया हैं तदर्थ मैं आपका कृतज्ञ हूँ।

ब्रजसाहित्यमण्डल की स्थापना किस प्रकार हुई और उस समय किन-किन से पत्र-व्यवहार हुआ उसका लेखा जोखा आपके प्रधान कार्यालय पर रहना ही चाहिये। मेरे पास इस विषय का कुछ मसाला सुरक्षित हैं—क्योंकि मण्डल की स्थापना का विचार मैंने ही विशाल भारत द्वारा प्रस्तुत किया था और तदर्थ पत्र-व्यवहार भी किया था.....।

मण्डल में जो फूट फैल गई थी उसे दूर करने में आप समर्थ हों, यही कामना है।

विनीत
बनारसीदास

प्रियवर, ता: २-३-६६

हमें ब्रजमण्डल के साधन सम्पन्न निवासियों से, कवियों तथा लेखकों से, प्रेस के मालिकों से और पत्रकारों से अपने कार्य में सहायता लेनी चाहिये। यह मैं जानता हूँ कि शायद दस फीसदी व्यक्ति भी सहायता न देंगे, फिर भी प्रयत्न तो करना ही है। मसलन क्या यह असम्भव है कि कोई प्रेसाध्यक्ष सत्यनारायण कविरत्न का देशभक्त होरेशस पुन: छाप दे। उसमें दो सौ रुपये का भी व्यय न होगा। ब्रजभाषा की परीक्षाएँ यदि कभी चालू हों तो पाठ्य-पुस्तकें स्वयं मण्डल को ही छापनी चाहिये। जो भी महानुभाव असन्तुष्ट बैठे हों उनसे अनुनय विनय करके उन्हें पुन: मण्डल में लाना है। ..... ब्रज के वर्तमान कवियों के नाम तथा पते आप अपने यहाँ रखिये।

विनीत
बनारसीदास

इस पत्र में चतुर्वेदी जी ने मण्डल के लिए अनेक श्रोतों से सहायता की कल्पना की है तथा एतदर्थ सुझाव भी प्रस्तुत किया है परन्तु वास्तविक स्थिति से पूर्णतया भिज्ञ होते हुए अपना सन्देह भी प्रगट कर दिया है। कविरत्न सत्यनारायण रचित देशभक्त होरेशस के प्रकाशन के लिए उनके मन में कितनी व्याकुलता है ? मण्डल के पुनर्निर्माण के लिए उनके सुझाव कितने हृदयग्राही एवं आदर्शमयी भावना से प्रेरित हैं ? इस सम्बन्ध में ता: १९-३-६६ को पुन: एक पत्र प्राप्त हुआ।

प्रिय श्री वृन्दावनदास जी, वन्दे।

ब्रजभारती के तृतीय अङ्क के लिए आपका कृतज्ञ हूँ। आपने मुझे जिन शब्दों में याद किया है तदर्थ धन्यवाद।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कल के सैनिक में पढ़ा कि ब्रज प्रदेश के लिए मथुरा में आन्दोलन शुरू हो गया है। मेरा ख्याल है कि पहिले हमें साहित्यिक तथा सांस्कृतिक आधार तैयार कर लेना चाहिये। केवल राजनैतिक विभाजन से काम नहीं चलेगा। अधिकार-लिप्सा, पदलोलुपता, राजनैतिक तिकड़म, गुटबन्दी, उपसाम्प्रदायिकता या जातिवाद की बीमारियाँ हमारे जीवनरूपी शरीर में बुरी तरह घर कर गई हैं और वे अच्छे से अच्छे यज्ञों का विनाश कर सकती हैं। कुछ मन्त्रियों, उपमन्त्रियों और सचिवों के बढ़ जाने से ब्रजमण्डल का उद्धार कदापि न होगा। क्या हमारे राजनैतिक नेताओं में ब्रजभूमि के प्रति उसके साहित्य तथा संस्कृति के प्रति सच्ची लगन है? यदि साहित्यिक तथा सांस्कृतिक आधार शिला दृढ़तापूर्वक रक्खी जा सके तो यह आन्दोलन कल्याणकारी बन सकता है। आपकी क्या राय है? विस्तार से फिर लिखूँगा।

विनीत

बनारसीदास

चतुर्वेदी जी ब्रजप्रान्त-निर्माण के समर्थक हैं परन्तु उनका यह समर्थन ब्रजप्रान्त के साहित्यिक और सांस्कृतिक उन्नयन के हेतु ही है। यह तो स्पष्ट है कि ब्रजसाहित्य और संस्कृति के प्रति वर्तमान राज्यस्तर पर जो उपेक्षा और उदासीनता है उसीसे खिन्न और उद्विग्न होकर लोग ब्रजप्रदेश के निर्माण की आवाज उठाते हैं। इस सम्बन्ध में चतुर्वेदी जी का दृष्टिकोण उनके पत्रों से पूर्णतया विदित हो जाता है। कुछ और पत्र भी उद्धृत करना उपयुक्त होगा।

फीरोजाबाद ५।७।६७

प्रिय श्री वृन्दावनदास जी, वन्दे।

एक विचारोत्तेजक सरक्यूलर लैटर भिन्न-भिन्न व्यक्तियों को भेजने की जरूरत है—ब्रजप्रान्त निर्माण के विषय में—जिससे प्रेरित होकर वे लोग अपनी सम्मति उस बारे में लिख भेजें।

प्रान्त बने या न बने पर चर्चा चलाने से कुछ जागृति तो आवेगी ही। वस्तुतः मेरी रुचि जितनी साहित्यिक तथा सांस्कृतिक जागरण में है उतनी राजनैतिक पुनर्गठन में नहीं।

एक दूसरा लेख साहित्य जगत की एक आवश्यकता—छुट भइयों को प्रोत्साहन इस विषय पर भी लिखना चाहता हूँ। सन् १९२८ से यानी विशालभारत के प्रारम्भ से ही इस दिशा में काम करता रहा हूँ और आज हिन्दी जगत में जो चोटी के लेखक या कवि हैं उनमें कुछ 'विशालभारत' के काफी ऋणी हैं।

भाई अमृतलाल जी की कविता 'सरस्वती' को भेज दी है। भाई श्री नारायण जी ने माँगी थी।

विनीत

बनारसीदास

उपरोक्त पत्र में ब्रजप्रान्त-निर्माण के विषय के अतिरिक्त एक और विषय की चर्चा चतुर्वेदी जी ने की है और वह है उपेक्षित साहित्यिक बन्धुओं को प्रोत्साहन देने की। कहना न होगा यह विषय चतुर्वेदीजी को अत्यन्त प्रिय है। वास्तव में इसको और शहीदों के श्राद्ध को तो उन्होंने अपने जीवन का ध्येय ही बना रक्खा है। इन दोनों क्षेत्रों में चतुर्वेदी जी ने जो महान् कार्य किया है वह अविस्मरणीय है और समाज उनका चिर ऋणी रहेगा। चतुर्वेदी जी से जिस काल में मेरा कोई परिचय न था और वे कलकत्ते में 'विशाल भारत' के सम्पादक थे मैंने एक दो लेख उन्हें 'विशाल भारत' में प्रकाशनार्थ भेजे। उन्होंने न केवल उन्हें छापा वरन् उनपर पुरस्कार स्वरूप

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ रुपया भी मनीआर्डर से भेजा। कहना न होगा कि 'विशाल भारत' के सौजन्य से अनेकों व्यक्ति साहित्यिक क्षेत्र में बढ़े और इसका श्रेय उस पत्र और उसके यशस्वी सम्पादक श्री चतुर्वेदी जी को है। अब हम ब्रज प्रदेश के निर्माण सम्बन्धी विषय पर चतुर्वेदी जी के कुछ और पत्र भी यहाँ देना चाहते हैं।

प्रिय श्री वृन्दावनदासजी, बन्दे।

जब तक कि दो चार व्यक्ति भी ऐसे न हों जो ब्रजमण्डल के लिए जी जान से प्रयत्न करने को उद्यत हो जावें तब तक ब्रज प्रान्त की चर्चा उठाना सर्वथा निरर्थक होगा। एक अँग्रेजी कविता है If you give all and life retain I say that all your gift is in vain. वस्तुस्थिति यह है कि ब्रजभूमि में ऐसे बलिदानी आत्मोत्सर्ग करने वाले लोगों का अभाव है। फिर भी हमें निराश नहीं होना है। जो कुछ अपनी सीमित शक्ति के अनुसार कर सकें करते रहना चाहिये। भविष्य में कोई न कोई त्यागी युवक उत्पन्न होंगे।

२१ ता: को मथुरा रेडियो ने बुलाया हैं। मैं यात्रा कर नहीं पाता। करना चाहता भी नहीं। 'शहीदों का श्राद्ध' बस एक ही काम ले रक्खा है। उसी के लिए शेष दिन अर्पित हैं।

बनारसीदास
फीरोजाबाद ३०-६-६७

प्रिय श्री वृन्दावनदास जी

ब्रजभारती का ६४ पृष्ठ का एक विशेषाङ्क ब्रजप्रान्त निर्माण के विषय में निकालिये, जिसमें पक्ष तथा विपक्ष दोनों के लेख रहें। 'मधुकर' का मैंने बुन्देलखण्ड प्रान्त निर्माण अङ्क निकाला था, उससे आन्दोलन में पर्याप्त सहायता मिली।

ब्रजभारती के प्रकाशन में काफी व्यय होता होगा। उसका प्रबन्ध आप किस प्रकार करते हैं?

डा० सत्येन्द्र प्रान्त निर्माण के पक्षपाती हैं। मेरी चिट्ठियाँ मिली होंगी, बम्बई से आपके पत्र मिले थे।

बनारसीदास

चतुर्वेदी जी ने ब्रजप्रान्त के निर्माण पर और भी अपने अनेकों पत्रों में चर्चा की है, विस्तारभय से उन सब पत्रों को उद्धृत करना सम्भव नहीं है। सारांश यह कि ब्रजप्रान्त के निर्माण से चतुर्वेदी जी का आशय ब्रज की सर्वाङ्गीण उन्नति से है, उसके साहित्यिक और सांस्कृतिक पुनरुत्थान से है। वे इस आन्दोलन के द्वारा इस जनपद में एक चेतना, एक जाग्रति पैदा करना चाहते हैं जो कि स्तुत्य है।

ग्रन्थालोचना

चतुर्वेदी जी इस बात के पक्षपाती हैं कि अच्छी पुस्तकों की विधिवत् विस्तृत आलोचना होनी चाहिये। उन्होंने अपनी पुस्तक 'साहित्य सौरभ' एक बार मुझे ज्ञान मण्डल काशी से भिजवाई थी और मुझे उसकी आलोचना करने को लिखा था। मैंने उस पुस्तक पर अपनी तीन पृष्ठ की आलोचना ब्रजभारती में छाप दी थी। बा० श्यामसुन्दर जी खत्री कलकत्ते वालों को तो वह बहुत ही पसन्द आई तथा चतुर्वेदी जी ने भी मुझे लिखा था, "आपकी सहृदयतापूर्ण आलोचना के लिये बहुत बहुत कृतज्ञ हूँ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चतुर्वेदी जी ने मुझे एक बार पत्र लिख कर डाक्टर सत्येन्द्र द्वारा लिखित "ब्रजभाषा-साहित्य का इतिहास नामक ग्रन्थ की आलोचना करने का भी आदेश दिया था। उन्होंने लिखा था, "चूँकि सत्येन्द्र जी अपने प्रतिष्ठित कार्यकर्त्ता हैं उनकी पुस्तक की विधिवत् विस्तृत आलोचना होनी ही चाहिये।"

इसी प्रकार एक अन्य महत्वपूर्ण ग्रन्थ श्री प्रभुदयाल मीतल रचित 'ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास' की आलोचना करने की बात भी उन्होंने मुझसे कही थी। इस प्रसंग में उन्होंने श्री मीतल जी को भी लिखा कि अपनी पुस्तक की खूबियाँ किसी से लिखवा भेजें। उन्होंने इस चीज को एक प्रकार का प्रोपेगैण्डा समझा और यही उनको लिख दिया। इस पर चतुर्वेदी जी ने जो पत्र मीतल जी को लिखा उसे हम उद्धृत करते हैं।

प्रिय भाई मीतल जी, वन्दे !

आप प्रोपेगैण्डा या प्रचार से इतना डरते क्यों हैं ? यदि कोई जानकार व्यक्ति आपकी पुस्तक की खूबियाँ संप्रमाण लिख भेजे और मैं देखभाल कर उसका उपयोग कर लूँ तो इसमें अनैतिकता तो कोई है नहीं।

आपको शायद पता न हो, चर्चिल के पास छः सहायक नौकर थे जो सम्पूर्ण सन्दर्भगत मसाला तैयार कर देते थे। तभी वे इतने महान ग्रन्थ लिख सके।

७५ वीं वर्ष में मुझे केवल एक आँख पर जोर डालकर लिखना पड़ता है। जब कोई सहायक नहीं, क्या किसी दूसरे से इस प्रकार की सहायता माँगने में कोई अनौचित्य है ? इसके विषय में ज्यों की त्यों उस लेख की बातें उद्धृत नहीं कर दूँगा, अपनी अक्ल से भी काम लूँगा।

स्वर्गीय पन्डित जवाहरलाल जी ने आचार्य नरेन्द्रदेव जी से अपनी पुस्तक (शायद Discovery of India) में मदद ली थी। बेईमानी से या असत्य का आश्रय लेकर किया हुआ प्रचार-कार्य निन्दनीय है, पर सर्वथा सद्भाव से और ईमानदारी से किये हुए प्रचार कार्य में कोई दोष हरगिज नहीं।

अगर आपका ग्रन्थ साधारण कोटि का होता तो मैं उसकी चर्चा हरगिज न करता—चाहे कितने भी प्रलोभन क्यों न दिये जाते—पर वह एक असाधारण कृति है और मेरे उद्देश्य की पूर्ति में सहायक भी। इसलिये दूसरों से मदद लेकर (यही पढ़ने लिखने की मदद) मैं उस पर लिखना चाहता हूँ, मैं ब्रजभूमि से पूरे ५१ वर्ष (१९१३ से १९६४ तक) दूर ही रहा, इसके सिवाय मुझे ब्रजभाषा या ब्रजभूमि के अध्ययन करने का मौका ही नहीं मिला। उसका शास्त्रीय ज्ञान मुझे है ही नहीं। उन सज्जनों के आप मुझे नाम तथा पते बतलादें, जो आपके ग्रन्थ के बारे में कुछ अधिकार पूर्वक लिख सकते हैं। इससे अधिक आपकी कोई जिम्मेदारी नहीं।

आपके ग्रन्थ में यदि कोई त्रुटियाँ मुझे दीख पड़ीं तो उन्हें भी निस्संकोच प्रगट कर दूँगा, आप निश्चिन्त रहें।

विनीत

बनारसीदास चतुर्वेदी

पुनश्चः :—

आप मेरे जिजमान है, सो मथुरा पहुँचने पर बढ़िया पेड़े लेने का मुझे जन्मसिद्ध अधिकार है। उससे अधिक कुछ नहीं चाहता। नवीन जी की वह कविता मैं प्रायः गुनगुनाया करता हूँ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अरे ! सतत अर्पण ही अर्पण, यह जीवन का क्रम है।
और ग्रहण में मृत्यु निहित है, प्रतिफल केवल भ्रम है ।।"

वास्तव में हम चतुर्वेदी से पूर्णतया सहमत हैं कि अच्छी पुस्तकों की समालोचना होनी ही चाहिये। आलोचना द्वारा पुस्तक को अपेक्षित प्रचार प्राप्त होता है जिससे उस उद्देश्य की पूर्ति अनायास ही हो जाती है जिससे प्रेरित होकर पुस्तक लिखी गई थी। मीतल जी के ग्रन्थ ने ब्रजक्षेत्र के इतिहास-साहित्य की दिशा में एक बहुत बड़ी कमी की पूर्ति की है। मुझे उनके महत्वपूर्ण ग्रन्थ के इतिहास-खण्ड को अवलोकन करने का अवसर मिला है। उन्होंने ब्रज के मिस से समस्त भारतीय इतिहास को ही बड़ी ओजपूर्ण और प्रवाहमयी भाषा में लिख डाला है। उन्होंने इस इतिहास में इतनी नवीन मनोरञ्जक सामग्री का समावेश कर दिया है कि ग्रन्थ को पढ़ने के लिए हाथ में लेने के बाद छोड़ने को जी नहीं चाहता। मीतल जी के इतिहास में हमें बहुत-सी बातें नई इसलिये मालुम होती हैं चूँकि वे अन्य इतिहास ग्रन्थों में सहसा उपलब्ध नहीं हैं, परन्तु, इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि वे घटना क्रम कल्पना के आधार पर लिखे गये हैं, मीतल जी ने अपने द्वारा प्रस्तुत किये हुए तथ्यों को आधार और साक्ष्य समन्वित किया है। मीतल जी का ग्रन्थ उनके कई दशकों के श्रम और खोज का सुफल है। उन्होंने अपने इस ग्रन्थ के द्वारा ब्रजक्षेत्र की जनता का जो उपकार किया है उससे वह सदा के लिए उनकी ऋणी रहेगी।

डा० सत्येन्द्र का ग्रन्थ तो मैंने अभी देखा नहीं है लेकिन मैं शीघ्र उसे भी देखूँगा। मेरी इच्छा है कि मैं उपरोक्त दोनों ही महत्वपूर्ण ग्रन्थों की विस्तृत नहीं तो संक्षिप्त आलोचना शीघ्र ही ब्रजभारती के पृष्ठों में अङ्कित करूँ।

चतुर्वेदी जी का मतभेदों के प्रति उदारभाव

मैंने "हिन्दी-भवन निर्माण योजना" शीर्षक के अन्तर्गत ब्रजभारती के संपादकीय लेख में अपने विचार प्रकट किये थे। आदरणीय चतुर्वेदी जी ने उस पर एक समीक्षात्मक लेख अमरउजाला में लिखा। उन दोनों लेखों को यहाँ विस्तारभय से देना सम्भव नहीं है, इसकी आवश्यकता भी नहीं है। इस प्रसंग में एक विशेष उल्लेखनीय बात ही प्रस्तुत करना अभीष्ट है। बात यह थी कि मेरे लेख का सामान्यतया समर्थन करते हुए चतुर्वेदी जी ने कुछ ऐसे तथ्य भी प्रस्तुत किये थे जिनसे मेरी प्रस्तावित योजना की उपादेयता में उनका सन्देह स्पष्ट प्रतीत होता था। मैंने उनके तथ्यों का विनम्र भाषा में खण्डन करते हुये प्रत्युत्तर स्वरूप एक लेख अमर उजाला में प्रकाशित कराया। लेख को अमर-उजाला में भेजने के पूर्व मुझे संकोच तो हुआ कि ऐसे हितैषी और गुरुतुल्य कृपालु मित्र की बात काटना ठीक नहीं परन्तु चतुर्वेदी जी की निष्कलङ्क उदारता का ध्यान करके उसे भेज ही दिया। तदुपरान्त चतुर्वेदी जी ने जो पत्र लिखा उससे उनकी सहिष्णुता और शालीनता का बोध होता है। वह पत्र इस प्रकार है :

फिरोजाबाद १९-२-६७

प्रिय भाई वृन्दावनदास जी, वन्दे !

आज के अमरउजाला में आपका सुन्दर लेख पढ़ा। "वादे वादे जायते तत्वबोधः" इस नीति के अनुसार हम लोगों के वाद-विवाद से कुछ लाभ ही होगा। मेरे हृदय में मतभेदों के लिए पूर्ण सम्मान है और सदैव रहेगा। हम दोनों ब्रज के भक्त हैं, ब्रजभाषा के भी—यह अटूट सम्बन्ध

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। बहुत सम्भव है कि अगले रविवार को मैं भाई हरिशङ्कर जी के साथ वृन्दावन की यात्रा करूँ। भाई हरिशङ्कर जी के आग्रह से मैं श्रद्धेय प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी के दर्शन करने वहाँ जाना चाहता हूँ। उसी समय आपकी सेवा में भी उपस्थित होने का विचार है। श्री मीतल जी के भी दर्शन करने हैं। अमर उजाला में एक लेख ब्रजप्रान्त के निर्माण के विषय में भेजा है। कृपया उस पर अपने विचार प्रगट कीजियेगा।

बनारसीदास

चतुर्वेदी जी की गुणग्राहिणी-प्रतिभा और आत्मीयता

इन दुर्लभ गुणों के प्रतीक कुछ ऐसे पत्र भी उद्धृत करने योग्य हैं।

प्रिय भाई वृन्दावनदास जी, वन्दे !

आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई और यह ख्याल आया कि हम लोगों को बहुत पहिले ही मिल लेना चाहिये था। अब तो ७५ वें वर्ष में मेरे पास समय ही कम रह गया है। फिर भी जो कुछ वर्ष, महीने, दिन या क्षण बचे हैं उनका भरपूर सदुपयोग कर लेना चाहता हूँ।

अमर उजाला के ५ ता० के अङ्क में मेरा लेख छप गया है कृपया उसे पढ़ कर संक्षेप में लिखिये भी। चर्चा चलने से कुछ लाभ ही होगा। संस्थाओं में तो मेरा विश्वास रहा नहीं। समानशील और परस्परपूरक व्यक्तियों को मिल कर काम करना चाहिये। भाई श्रीराम शर्मा का निधन वस्तुतः एक महान दुर्घटना है। उन पर एक लेख सैनिक में भेजा है। यदि ब्रह्मचारी प्रभुदत्त जी ब्रजभूमि के लिये कुछ कर सकें तो बड़ी बात हो।

विनीत
बनारसीदास
३०-५-६७

प्रिय श्री वृन्दावनदास जी !

आप खूब पधारे पर समय कम ही दिया। आपका कुछ आतिथ्य भी न कर सका। क्षमा प्रार्थी हूँ। आपसे बहुत देर बाद परिचय हुआ, नहीं तो हम लोग मिलकर बहुत सा काम कर लेते, अब तो समय का पूरा-पूरा सदुपयोग कर लेना है।

विनीत
बनारसीदास
फिरोजाबाद २१-९-६३

प्रियवर, जय जमुना मैया की

ब्रजभारती मुझे बराबर मिल रही है और उसके लिये मैं आपका कृतज्ञ हूँ। क्या ही अच्छा हो यदि आप इस पत्रिका में ब्रज के अन्य केन्द्रों की साहित्यिक प्रवृत्ति पर भी कुछ प्रकाश डाला करें। पत्रिका को अधिकाधिक शास्त्रीय बनादेने से उसकी उपयोगिता कुछ कम हो जायगी। ब्रज-जनपद की बहुमुखीन उन्नति ही हमारा लक्ष्य होना चाहिये। क्या पृथिवी-पुत्र (स्व. अग्रवाल कृत) आपके पास है अग्रवाल जी इस विषय के आचार्य थे। कल ही उनके १०० पत्र टाइप हो के दिल्ली से मथुरा आये हैं १८३ पृष्ठों में। ८०) से ऊपर टाइपिङ्ग में ही खर्च हो गया। खैर, यह तो श्राद्धकर्म है और हमें

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो करना ही था। स्व० अग्रवाल जी ने ब्रज के लिए बहुत कार्य किया था। ब्रज-भारती में उनके बारे में विस्तार से लिखा जाना चाहिये। उनका वृहदाकार चित्र तो मण्डल में होना ही चाहिये।

बनारसीदास

फिरोजाबाद, २४-३-६७

प्रियवर, वन्दे !

मथुरा से ६ मील दूर रमणरेती के एक टीले पर रसखान की समाधि है, यह बात मैंने ४-३-६६ के नवभारत टाइम्स में पढ़ी थी। उसका जीर्णोद्धार हुआ ?

आप उस तीर्थस्थल की यात्रा कीजिये। क्या रसखान की कविताओं का संग्रह छपा है ?

बनारसीदास चतुर्वेदी

फीरोजाबाद, ५-६-६७

प्रिय श्री वृन्दावन दास जी, वन्दे।

आपके दोनों कृपा-पत्र मिले। डाक्टर श्री चन्द्रभान जी रावत वाली मीटिंग में आपने जो कुछ कहा उससे मैं अक्षरशः सहमत हूँ। ब्रजसाहित्य-मण्डल के पुर्ननिमाण के लिये इस प्रकार की गोष्ठियाँ नितान्त आवश्यक हैं। हमें ब्रज की सर्वाङ्गीण उन्नति करनी है। आप डाक्टर वासुदेवशरण अग्रवाल की पुस्तक पृथिवीपुत्र को बार-बार पढ़िये। उसकी आलोचना भी करिये। वह हमारी बाइबिल है। निस्सन्देह हम अपनी पूरी शक्ति से राष्ट्रभाषा के लिए काम करेंगे परन्तु इससे हमारे मातृभाषा-प्रेम में कोई कमी न आनी चाहिये। आप लगन से काम करते रहें, परिणाम की चिन्ता न करें। "कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" यह बात किसी ब्रजवासी ने ही कही थी।

बनारसीदास

फिरोजाबाद, ११-५-६७

प्रियवर, कृपा-पत्र मिला।

पन्डित गणेश चौबे पोस्ट आफिस बँगरी वाया पिपरा कोठी जिला चम्पारन का शुभ नाम ब्रज-भारती की फ्री लिस्ट में लिखिए। अन्तर्जनपदीय परिषद के संगठन में वे बहुत सहायक होंगे। भोजपुरी तथा मैथिली की उन्नति के विषय में उनसे समाचार मिल सकते हैं।

मि० चेर्निशोव प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान को हिन्दी में ब्रजभाषा की वर्तमान स्थिति पर एक ६५ पैसे का लाइट एअरमेल पत्र भेजिये। मेरा जिक्र कर दीजिये। वे मुझसे पूछते थे कि ब्रज-प्रान्त क्यों नहीं बन सकता ? चेर्निशोव हिन्दी के विद्वान् हैं।

हिन्दी प्रचारक पिशाच मोचन काशी ने डा० बी० ए० बरान्निकोव की पुस्तक "भाषा और साहित्य" आपको भेजी या नहीं ? उसकी भी विस्तृत आलोचना कीजिए।

"नवीन ब्रज का निर्माण" पर आन्दोलन चलना चाहिये। प्रान्त जब बनेगा तब बनेगा हमें ब्रज की साहित्यिक तथा सांस्कृतिक उन्नति तो करनी ही चाहिये।

आप नवयुवकों को इस विषय में रुचि लेने के लिये प्रेरित कीजिये। स्वामी केशवानन्द जी वृन्दावन पधारे थे। आप शायद उनसे नहीं मिले।

विनीत

बनारसीदास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी सम्वर्द्धिनी योजना

चतुर्वेदी जी का ब्रज-भारती के माध्यम से चलाई हुई हमारी इस योजना को आशीर्वाद प्राप्त है। उनकी कृपा से हम कितने ही ऐसे सज्जनों से सम्पर्क स्थापित कर चुके हैं जो इस विषय के ज्ञाता हैं तथा इसमें रुचि रखते हैं। लगभग तीस चालीस वर्ष पहिले डाक्टर वासुदेवशरण जी अग्रवास ने इस योजना को जनपदीय आन्दोलन के नाम से पन्डित बनारसीदास जी के माध्यम से ही चलाया था। उन्होंने चतुर्वेदी जी को इस विषय पर लगभग १०० ऐतिहासिक पत्र लिखे थे जिनमें से कुछ डा० अग्रवाल रचित पुस्तक पृथिवीपुत्र में निकल चुके हैं और कुछ को स्वयं चतुर्वेदी जी ने लेख बद्ध करके सम्मेलन पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित कराया है। इस विषय में चतुर्वेदी जी का हमारे पास आया हुआ पत्र इस प्रकार है।

४—१०—६६

प्रिय श्री वृन्दावनदास जी, जय जमुना मैया की।

आपका कृपा-पत्र मिला। उसके लिये बहुत-बहुत कृतज्ञ हूँ। आपने जनपदीय आन्दोलन को हिन्दी सम्वर्धिनी योजना के नाम से आगे बढ़ाने का जो शुभ संकल्प किया है उसके लिये मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूँ। 'मधुकर' के कुछ पुराने अङ्क अभी प्राप्य हैं। उन्हें तलाश करके भिजवा दूँगा। जनपद अङ्क तो अब बिल्कुल अप्राप्य हो गया है। रूस के एक विद्वान ने भी उसकी माँग की थी।

विनीत
बनारसीदास

देशभक्त होरेशस

स्वर्गवासी सत्यनारायण कविरत्न कृत देशभक्त होरेशस की बाबत चतुर्वेदी जी के एक पत्र में जिक्र आ चुका है। उनका फिर एक पत्र इस सम्बन्ध में आया जो इस प्रकार था।

२५—९—६६

प्रियवर, प्रणाम !

सत्यनारायण कविरत्न कृत देशभक्त होरेशस टाइप किये हुए २८ पृष्ठों में आया है। टाइप दूर-दूर है। क्या ब्रज-भारती के दो अङ्कों में उसे छापा जा सकता है? वह पुस्तिका अब अप्राप्य हो गई है। सत्यनारायण विषयक सारा सामान कोई प्रयाग के सम्मेलन की सत्यनारायण कुटीर से उठा ले गया। अब एक महिला उन पर शोध कर रही है। आगरा विश्वविद्यालय से उन्हें अनुमति भी मिल गई है।

आप अपनी सुविधानुसार जैसा भी मुनासिब समझें करें। यदि लम्बी चीजों से ब्रज-भारती के पाठकों का मन ऊब जाने की आशङ्का हो तो न छापें। वैसे कविरत्न की कीर्तिरक्षा के लिए जो कुछ हम कर सकते हैं हमें करना ही चाहिये।

विनीत
बनारसीदास

प्राचीन कवियों की कीर्तिरक्षा, उपेक्षितों और छुटभइयों की यत्किंचित् सेवा और शहीदों का श्राद्ध ये तीनों विषय ही ऐसे हैं जिनके ऊपर चिन्तन करने, लिखने पढ़ने और चेष्टा करने में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ही आजकल चतुर्वेदी जी का सारा समय व्यतीत हो जाता है। वे ७५ वें वर्ष में भी इस सम्बन्ध में इतना परिश्रम कर रहे हैं कि अच्छे से अच्छे कर्मठ नवयुवक को भी वह प्रेरणा का विषय हो सकता है। हम ने चतुर्वेदी जी की इच्छानुसार देशभक्त होरेशस को पुस्तक के रूप में मुद्रित कर प्रकाशित कर दिया है।

चतुर्वेदी जी साहित्यक क्षेत्र में भी विकेन्द्रीकरण के पक्षपाती हैं। इस सम्बन्ध में निम्न-लिखित पत्र महत्वपूर्ण है।

फिरोजाबाद ९-७-६७

प्रिय श्री वृन्दावनदास जी, वन्दे।

वेद का एक मन्त्र है—"केवलाघौ भवति केवलादी" यानी जो अकेला खाता है वह पाप खाता है। मैंने चतुर्वेदी होते हुए वेद नहीं पढ़े, पर अगर वेद के इस मन्त्र का ही जीवन में उपयोग कर सकूँ तो उन महान् ग्रन्थों को पढ़ने की आवश्यकता भी नहीं।

इस समय जो ईर्ष्या हिन्दी जगत में फैली हुई है उसका एक कारण यह भी हो सकता है कि हमारे चोटी के लेखक तथा कवि आत्मकेन्द्रित हो गये हैं—मिल बाँट कर खाने की नीति में उनका यकीन नहीं रहा। उनकी आलोचना करने की जरूरत नहीं, स्वयं हम लोग अपने को ठीक मार्ग पर रक्खें, बस इतना ही पर्याप्त है। ब्रज-प्रान्त बने या न बने पर ब्रज जनपद तो बना ही रहेगा और उसकी सर्वाङ्गीण उन्नति के लिये हम सबको मिल कर काम करना है। पारस्परिक ईर्ष्या विद्वेष से ब्रजसाहित्य-मण्डल की जो दशा हुई उससे हमें सबक लेना है।

विनीत
बनारसीदास

मेरे पास और भी चतुर्वेदी जी के अनेक पत्र ऐसे हैं जो उद्धृत करने योग्य हैं और जिनसे अनेक महत्वपूर्ण विषय प्रतिपादित होते हैं, परन्तु इस समय तो मैंने कुछ बानगी ही लिखी है।

चतुर्वेदी जी ने मुझे अनेकों पत्रों में उन विद्वानों के नाम व पते लिखकर भेजे जिनसे मुझे मण्डल और हिन्दी के हित में सम्पर्क स्थापित करना उन्होंने अभीष्ट समझा। मैंने उनकी प्रेरणा से अनेकों ऐसे विद्वानों से पत्र व्यवहार किया जो बड़े सहृदय व्यक्ति थे और हिन्दी सेवा के प्रति जिनकी लगन सराहनीय थी, कुछ लोग तो इनमें चतुर्वेदी जी के अनन्य भक्त और कट्टर समर्थक थे और उन्होंने अपने पत्रों में चतुर्वेदी जी की सहृदयता, मनस्विता और सदाशयता की मुक्तकंठ से प्रशंसा की थी। पंडित पद्मसिंह शर्मा ने ठीक ही कहा था कि चतुर्वेदी जी की दीनबन्धुता और पर दुःखकातरता जगत्प्रसिद्ध है।

चतुर्वेदी जी के प्रस्तावों को कार्यान्वित करने में मुझे अपूर्व आनन्द का अनुभव होता है। मेरी यह निश्चित धारणा है कि वे प्रस्ताव हिन्दी के पक्ष के प्रति असीम हित की दृष्टि से ही किये जाते हैं और मेरे लिये तो उनका परिपालन ऐहिक और पारलौकिक दोनों दृष्टियों से कल्याणकारी है। कार्याधिक्य तथा अन्य परिस्थितियों वश विलम्ब हो जाना स्वाभाविक है परन्तु इच्छा मेरी यह अवश्य रहती है कि चतुर्वेदी जी जिस काम के लिए कहें उसे मैं पूरा करने की चेष्टा करूँ।

चतुर्वेदी जी का पत्र-साहित्य अगाध है। यह अभी और बढ़ेगा। इस सागर में अनगिनत बहुमूल्य मोती हैं। यदि वे किसी पारखी द्वारा सङ्कलित और संग्रहीत हो गये तो निस्संदेह वे साहित्य की एक अमूल्य निधि के रूप में माने जायगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्व० हृदेश कवीन्द्र माहौर और राष्ट्रीय कवि-व्यास का ब्रजभाषा फाग साहित्य

(साहित्य शिरोमणि रामचरण हयारण 'मित्र')

आज के कुछ साहत्यिक ब्रजभाषा के रीति कालीन साहत्यि पर यह आरोप लगाकर निन्दा करते हैं कि इस साहित्य में विलासिता का वाहुल्य है, परन्तु उनका यह आरोप निराधार है, क्योंकि विलासिता का जन्म मानव-मन की प्रायः दुर्बलता से ही होता है जो कि साहित्य की आलोचना करने से विलग नहीं होता। रीति कालीन ब्रजभाषा साहित्य द्वारा जो कवियों ने काव्य का निर्माण किया उससे षट् ऋतुओं का वर्णन हुआ, मानवीय व्यौहारिक रीति और उसके लक्षणों का वर्णन हुआ जिसके द्वारा आज तक सांसारिक जन-जीवन सुचारू रूप से चलता आ रहा है। यही कार्य कवि अपनी कल्पनाओं द्वारा अनादि काल से करता हुआ दृष्टिगत् होता है।

यह प्रश्न विचारणीय है कि ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, वसंत आदि ऋतुओं के व्यतीत होने पर उनके सौन्दर्य का यदि कवि अपनी वाणी द्वारा सृजन नहीं करते तो मानव को उन ऋतुओं का आनन्द और सौन्दर्य का मनोरम दृश्य का अनुभव करने के लिए पूर्ण एक वर्ष तक चिन्तन करना पड़ता। इसी दृष्टिकोण को लेकर जन हिताय कवि अपनी मधुर कल्पनाओं द्वारा कविता को जन्म देकर जन जीवन को सुखी बनाने का सतत् प्रयत्न करता आ रहा है।

इन्हीं भावनाओं से प्रेरित हो हम सर्व प्रथम स्व० श्री हीरालाल जी 'हृदेश' के ब्रजभाषा के फाग साहित्य के छन्द प्रस्तुत कर रहे हैं। 'हृदेश' जी झांसी के स्व० महाराज गङ्गाधर राव के दरबारी कवि थे और यह सन् १८५७ में अंग्रेजों से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए थे।

'हृदेश' जी रचित ब्रजभाषा का एक रीति कालीन 'विश्व वसकरन' ग्रन्थ उपलब्ध है। इसकी रचना उन्होंने वि० सम्वत् १९०४ में की थी और अपने इस ग्रन्थ की प्रशस्ति में उन्होंने अन्त में यह दोहा लिखा है।

विश्ववस करन ग्रन्थ कों जो बांचे चितलाय।
कहै नायिका भेद कों अद्भुत कवित बनाय॥

यह ग्रन्थ नायिका भेद का अनूठा ग्रन्थ है, जो अप्रकाशित है और इसी ग्रन्थ में से हम यहाँ दो छन्द फाग के प्रस्तुत कर रहे हैं।

गोरी बाल जाल में बिसाल कड़ीं होरी काज, एकन तें एक दीप दीप्त अगरीं सी हैं।
भनत हृदेश घायो नंद के लला को गोल, पाछैं ताकि चौंक भा मरीचें डगरीं सी हैं॥
दाव दीनी दरस गुपाल पिचकारी भर, आव दीनी अद्भुत प्रमोद पगरीं सी हैं।
रङ्गबुंद सरस प्रभा से मुख कंद पर, इन्द्र वधू चंद्र पर वृन्द बगरीं सीं हैं॥

इस छन्द में 'हृदेश' जी ने भाव पूर्ण अपनी कल्पना द्वारा जो उपमालंकार का मनोरम दृश्य साहित्य प्रेमियों के समुपस्थित किया है वह प्रशंसनीय है। द्वितीय छन्द का और आनन्द लीजियेगा। कृष्ण ने राधिका के मुख चन्द्र का सुख लूटने के लिए मुख-मण्डन से घूंघट हटाकर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुलाल की मूठ मारी है, उससे ऐसे भासित हो रहा है जैसे लाल—नभ से चन्द्रमा का प्रकाश फूट पड़ा हो—

फाग मदमाती लगी लाग नद नंदन सौं, बचन विलास मुख झरत सुधा सौं हैं।
केसर कौं रङ्ग सङ्ग झरत सुगंधन सौं, परसत अङ्ग पर दरसत खासौं हैं॥
झांखें टार घूंघट 'हृदेश' सुख लूट मूठ, छूटत विसाल लाल सरस हुलासौ है।
गरद गुलाल भाल परत न भासौ सांसौं, जल घर लाल तैं प्रकाशौ चन्द्रमासौ है॥

इसी सन्दर्भ में अब आप कवीन्द्र स्व० नाथूराम माहौर के फाग साहित्य का आनन्द लीजिये। माहौर जी का जन्म सन् १८८४ गंगा दशहरा को झांसी में वैश्य कुल में हुआ था। उन्होंने ब्रजभाषा, बुन्देलखण्डी और खड़ी बोली में कई काव्य ग्रन्थों की रचना करके मां सरस्वती का भण्डार भरकर साहित्य जगत् की सेवा की है।

माहौर जी नायिका भेद के उच्चकोटि के कवियों में थे। इसका उदाहरण उनकी इस 'अज्ञातयौवना' के वर्णन से प्रत्यक्ष परखा जा सकता है—

फागुन मास न लागौ अरी, रितुराज ने नैंक न साज सजौंरी।
कोऊ कहूं हमहूं न लखौं, इत झोरी गुलाल लियें रङ्ग रोरी॥
नंद कौ लाल न आयौ अबै, सखि हालकहौं तौहिं सौंह है मोरी।
घांघरी पै रङ्ग मेलिगौ कौन घौं, होरी जरैं बिन खेलिगौ होरी॥

कितनी लज्जा की बात माहौर जी ने अपनी कविता में मर्यादा के साथ कही। यही उत्तम कवि के लक्षण हैं, शृंगार–रस के वर्णन में ऐसी सफलता कम ही कवियों को प्राप्त होती है। यह कहना अति उक्ति नहीं होगी कि माहौर जी नायिका भेद के पन्डित थे। अब उनके द्वितीय छन्द में अतिशयोक्ति का आनन्द लीजिये। देखिये फाग में गुलाल की घला-घल से जो घूंघर उड़ी है उसमें राधिका हिरा गई है—

ब्रज सुखदानी फाग खेलैं ब्रजरानो संग, प्रेम रस सानी रङ्ग झिर सरसानी हैं।
मंडित गुलाल की घटासी घहरानी दिव्य, बिद्युति अवीर छटासी दरसानी हैं॥
'नाथूराम' हेरलो छिपानों आसमान भानु, दशहूं दिशान फाग भीर भहरानी है।
प्रबल प्रधूम धुन्ध अधर धरातैं धूम, धूंधर उडानी तामें राधिका हिरानी है॥

अब आप राष्ट्रीय कवि स्व० घासीराम व्यास के ब्रजभाषा फाग साहित्य का अति उल्लसित मन से चयन प्राप्त कीजिये। व्यास जी राष्ट्रीय और ब्रज साहित्य की धरोहर थे। इनका जन्म वि० सम्वत् १९६० अनन्त चतुर्दशी को मऊरानीपुर 'झांसी' में सनाढ्य कुल में हुआ था। इन्होंने कई काव्य ग्रन्थों को जन्म दिया, व्यास जी की कवितायें भावपूर्ण मौलिक होती रहीं हैं जो कि इस जनपद में सुनने को समय-समय पर प्राप्त होती रहती हैं। व्यास जी के ब्रजभाषा साहित्य की अप्रकाशित पुस्तक 'रंग-तरंग' में से यहाँ केवल दो छन्द उद्धृत कर रहे हैं। देखिये एक—गोपिका अपनी लज्जा की रक्षा हेतु फाग खेलते समय कृष्ण से स्नेह पूर्ण व्यंग बचन कह रही है—

रोकत 'व्यास' खरी दुफरी पथ, ठाड़ी करी मौय द्वैक घरी की।
मेलत आंखिन लाल गुलाल, उड़ेलत झारी सुरङ्ग भरी की॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सास कौं दैहों जबाब कहा, जौ पै आव खराब हुये चुनरी की।
लाल कहा बिगरेगी भला, तुम्हरी कबरी कमरी दमरी की॥

और जब फाग में गोपिका का गुपाल पर प्रभाव जम जाता है तब गोपाल गोपिका से पराजय स्वीकार कर लेते हैं—

कहत गुपाल गुलाल अब मलौ न गालन माहिं॥
गोरी तुम जीती सुहम हारे होरी माहिं॥

ऐसे सुन बैन सब गोरी भई प्रेम मग्न, लागी गीत गावन पुनीत ब्रज खोरी में।
'व्यास' कहैं मीड़तीं गुपाल गाल घाल घाल, कुंकुम गुलाल लाल भर-भर झोरी में॥
मेलती सुरङ्ग रङ्ग रङ्ग रेलती अनङ्ग अङ्ग, खेलतीं उमङ्ग सङ्ग फाग वर जोरी में।
परम निहाल हाल दै दै कर ताल कहैं, हारे श्याम हारे श्याम हारे आज होरी में॥

यह हैं बुन्देलखण्ड के त्रिमूर्ति काव्य मनीषियों के ब्रजभाषा में फाग साहित्य के भावपूर्ण मधुर छन्द जिनके काव्यामृत से साहित्य प्रेमियों को सदैव आनन्द का अनुभव प्राप्त होता रहेगा।

कवीन्द्र रवीन्द्र आकांक्षा का ब्रजभाषानुवाद

(कविरत्न शास्त्री गोविन्द चतुर्वेदी)

(१)

त्यागों हों सु सभ्यता कौ प्रवल प्रकास पुञ्ज,
चाहौं ना नवल वङ्ग नवजुग लाऊँ मैं।
का भयौ विलात गौ न राजनु खिलात पाई,
पाऊँ पर जन्म जौ तौ ग्वारिया सुहाऊँ मैं॥
धाऊँ ब्रज वसुधा तौ सदन सुकीय ही की,
भव्य सभ्यता कौ नव्य दीपक बुझाऊँ मैं।
वंसी वट तट जे चरैया नित गैयन के,
उन गल गुञ्ज माल पहिरों पिराऊ मैं॥

(२)

विन्दावन गोबिन्द की वाँसुरी सुनत हैं जो,
कूदत कलिंदी स्याम सीरे नीर जेई हैं।
वंसीवट तट नित केवल चरामें धेनु,
भोर भयौ भैया जगौ वदत घनेई हैं॥
सोर दधि मंथन कौ घर-घर प्रात,
धेनु खुर रेंनु गैल उड़त वनेई हैं।
ब्रज अँगना में ब्रज अँगना दुहतगाइ,
गाइ रसियानु ब्रज वसिया सनेई हैं॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी अन्तर्जनपदीय परिषद : एक आवश्यकता

(श्री गणेश चौबे, ग्राम पिपरी, मार्ग पिपराकोठी जि० चम्पारन)

स्वर्गीय डाक्टर वासुदेव शरण अग्रवाल का यह प्रबल विश्वास था कि भारतीय-राष्ट्र के समग्र रूप के दर्शन के लिए उसके जनपदों की बिखरी हुई साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सामग्रियों का विधिवत् सङ्कलन एवं सर्वाङ्गीण अध्ययन होना चाहिये। अपने इस विचार को कार्यरूप देने के लिए सन् १९४१ ई० में उन्होंने एक कार्यक्रम तैयार कर बुन्देलखंड के साहित्यिकों के समक्ष उपस्थित किया था और वहाँ की जनपदीय सामग्रियों के सङ्कलन एवं अध्ययन के लिए वहाँ भाषा समिति, भूगोल या देशदर्शन समिति, पशु-पक्षी समिति, वृक्ष-वनस्पति समिति, ग्राम-गीत समिति, संस्कृति और साहित्य समिति, खनिज-पदार्थ और कृषि उद्योग समिति के सङ्गठन की राय दी थी। अग्रवाल जी का यह विचार था कि "यदि व्यवस्थित रीति से पाँच वर्ष तक इस प्रकार का कार्य होगा तो आशा है, देश और जनता के वास्तविक जीवन के साथ हम गाढ़ा परिचय प्राप्त कर सकेंगे। सन् १९४३ ई० में डाक्टर अग्रवाल ने इस कार्य के लिए एक व्यापक पञ्चवर्षीय योजना तैयार की थी और उसे उन्होंने "जनपद कल्याणी योजना" की संज्ञा दी थी। वह योजना निम्नाङ्कित पाँच खण्डों में विभाजित थी :—

वर्ष १—साहित्य, कविता, लोकगीत, कहानी आदि जनपदीय साहित्य के विविध अंगों की खोज और संग्रह। वैज्ञानिक पद्धति से उनका संपादन और प्रकाशन।

वर्ष २—भाषा विज्ञान की दृष्टि से जनपदीय भाषा का सांगोपांग अध्ययन—अर्थात् उच्चारण या ध्वनि विज्ञान, शब्द-कोष, प्रत्यय, धातुपाठ, मुहावरे, कहावत और नाना प्रकार के पारिभाषिक शब्दों का संग्रह और आवश्यकतानुसार सचित्र संपादन।

वर्ष ३—स्थानीय भूगोल, स्थानों के नाम की व्युत्पत्ति और उनका इतिहास, स्थानीय पुरातत्व, इतिहास और शिल्प का अध्ययन।

वर्ष ४—पृथिवी के भौतिक रूप का समग्र परिचय प्राप्त करना अर्थात् वृक्ष-वनस्पति, मिट्टी, पत्थर खनिज, पशु, पक्षी, धान्य, कृषि, उद्योग-धन्धों का अध्ययन।

वर्ष ५—जनपद के निवासी जनों का सम्पूर्ण परिचय अर्थात् मनुष्यों की जातियाँ, लोक का रहन-सहन, धर्म, विश्वास, रीति-रिवाज, नृत्य-गीत, आमोद, प्रमोद, पर्व, उत्सव, मेले, खान-पान, स्वभाव के गुण-दोष, चरित्र की विशेषतायें—इन सबकी बारीक छान-बीन और पूरी जानकारी प्राप्त करके ग्रन्थ रूप में प्रस्तुत करना।

अग्रवाल जी ने जनपदीय कार्यकर्त्ताओं को सुझाव दिया था कि उस पञ्चविध योजना को वर्षानुक्रम से या सुविधानुसार कार्यान्वित किया जा सकता है। उन्होंने कार्यकर्त्ताओं को यह भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुझाव दिया था कि जनपदीय सामग्रियों का सङ्कलन एवं अध्ययन हिन्दी के माध्यम से हो और इस प्रकार सङ्कलित अमूल्य निधि से राष्ट्र भाषा हिन्दी का भन्डार भरा जाय।

उन दिनों पन्डित बनारसीदास जी चतुर्वेदी का विकेन्द्रीकरण आन्दोलन भी चल रहा था कि कार्यों की सुविधा के लिए प्रत्येक प्रान्त, मंडल या जनपद में स्थानीय या मांडलिक साहित्य सम्मेलनों का गठन होना चाहिये। फलस्वरूप सन् १९४० ई० ब्रज साहित्य मंडल की स्थापना हुई और उनकी ओर से मुखपत्र के रूप में ब्रजभारती एवं मधुकर का प्रकाशन भी आरम्भ हुआ। इन संस्थाओं ने अपने-अपने क्षेत्र में तदनुसार प्रशंसनीय कार्य किये और उनके मुख-पत्रों के माध्यम से बहुत सी सामग्रियाँ प्रकाश में भी आयी। तत्पश्चात् बघेलखण्ड, विन्ध्य भूमि, राजस्थान, मालवा, अवध, भोजपुर आदि जनपदों में भी ऐसी संस्थायें स्थापित हुई और अपने क्षेत्र में अपने-अपने साधनों के अनुसार कार्य भी किये। टीकमगढ़ में लोकवार्त्ता परिषद स्थापित हुई और कृष्णानंद जी गुप्त के सम्पादकत्व में प्रकाशित होने वाली 'लोकवार्त्ता' के माध्यम से बहुत से महत्वपूर्ण काम हुए।

सन् १९४२ ई० में राहुल जी ने यह प्रश्न उठाया कि क्षेत्रीय भाषाओं में साहित्य रचना होनी चाहिये और उन्हें शिक्षा का माध्यम भी बनाया जाना चाहिये। राहुल जी का यह प्रस्ताव बहुत से लोगों को अग्राह्य था, यद्यपि ये तीनों आन्दोलन पृथक्-पृथक् थे, किन्तु ये एक ही समय चल रहे थे और उनमें किसी न किसी रूप में जनपदों की चर्चा आ ही जाती थी। फलतः कुछ लोगों ने भ्रमवश इन्हें एक ही आन्दोलन समझा और हिन्दी जगत् में इन प्रश्नों को लेकर विवाद छिड़ा, पक्ष और विपक्ष में दलीलें आयी। डाक्टर अग्रवाल के कार्यक्रम की उपयोगिता निर्विवाद थी। उसने पठित समाज को अपनी ओर आकृष्ट भी किया और इस दिशा में बहुत कुछ काम भी हुए।

फिर विभिन्न जनपदों में होने वाले सङ्कलन एवं अध्ययन कार्यों में समन्वय स्थापित करने, उन्हें वैज्ञानिक दिशा में चलाने, सङ्कलित सामग्रियों के तुलनात्मक अध्ययन एवं संपादन-प्रकाशन की व्यवस्था करने के लिए एक सङ्गठन की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी, फलतः सन् १९५२ ई० में श्री बनारसीदास चतुर्वेदी की प्रेरणा से हाथरस में जनपदीय कार्यकर्त्ताओं का एक सम्मेलन आयोजित हुआ और उसका उद्घाटन डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद ने किया उस सम्मेलन में 'हिन्दी अन्तर्जनपदीय परिषद्' का संगठन हुआ। उस संस्थे के उद्देश्य में कहा गया कि यह संस्था हिन्दी-भाषी क्षेत्र की भूमि, वहाँ के जन और संस्कृति का बहुमुखी अध्ययन की भावना से प्रेरित होकर अध्ययन के लिए उपलब्ध सामग्री का सङ्कलन, संरक्षण, प्रकाशन और लोकहित की दृष्टि से प्रचार के लिए कार्य करेगी। आचार्य श्री नरेन्द्रदेव जी उसके अध्यक्ष निर्वाचित हुए और श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' उसके प्रधान मन्त्री। सर्व श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, वासुदेवशरण अग्रवाल, जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी, बैजनाथसिंह 'विनोद', सेठ रामबाबू लाल, उदयनारायण तिवारी, हजारीप्रसाद द्विवेदी, सत्येन्द्र जी, कृष्णानन्द गुप्त, श्याम परमार, देवीलाल सामर, बंशीधर शुक्ल और ठाकुरप्रसाद सिंह उसकी कार्य समिति के अन्य पदाधिकारी एवं सदस्य थे। उसका मुख्य कर्यालय बनारस में था और 'जनपद' नामक एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन भी आरम्भ हुआ। लेकिन अर्थाभाव के कारण कुछ दिनों के बाद 'जनपद' का प्रकाशन स्थगित हो गया और धीरे-धीरे उस संस्थे का कार्य भी शिथिल हो गया। उस परिषद ने जिस महत्वपूर्ण कार्य को संपादित करने का दायित्व लिया था, वह पूरा नहीं हो सका।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गत मई में पन्डित बनारसीदास चतुर्वेदी का हमें एक पत्र मिला कि हिन्दी अन्तर्जनपदीय परिषद को पुनर्जीविन करने का हम प्रयास करें। उनके ही आदेश से हमने ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा के अध्यक्ष श्री वृन्दावन दास जी से सम्पर्क स्थापित किया और वे इस प्रश्न पर विचार करने के लिए जनपदीय कार्य-कर्त्ताओं की एक अनौपचारिक बैठक बुलाने के लिए सहमत हैं। हमने परिषद के पुराने कार्य-कर्त्ताओं में डाक्टर परमेश्वरीलाल गुप्त, बैजनाथसिंह विनोद, डाक्टर श्याम-परमार आदि से भी सम्पर्क स्थापित किये। इनके अतिरिक्त हमने अनेक नये कार्य-कर्त्ताओं का भी ध्यान इस प्रश्न पर आकृष्ट किया है। बुन्देल खण्ड के श्री श्याम सुन्दर जी 'बादल' ने हमें सब प्रकार के सहयोग का आश्वासन दिया है। श्री बनारसीदास जी अपनी वृद्धता एवं अस्वस्थता के कारण इसमें सक्रिय भाग नहीं ले सकेंगे, लेकिन उनका निर्देश तो हमें सदा मिलता ही रहेगा।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि अन्तर्जनपदीय परिषद की जितनी आवश्यकता उस समय थी, उससे आज कहीं अधिक है। हम अब तक जनपदीय सामग्रियों का अंशमात्र ही सङ्कलित कर पाये हैं और ऐसी विपुल सामग्रियाँ विस्मृति के गर्भ में विलीन होती जा रही हैं। इस राष्ट्रीय निधि का नाश हमारे देश के लिए बड़े दुर्भाग्य की बात सिद्ध होगी। ये हमारी भावात्मक एकता के प्रतीक है। हम हिन्दी अन्तर्जनपदीय को पुनर्जीवित करने के प्रयास में विद्वानों के सहयोग की आशा रखते हैं।

गतांक से आगे

ब्रजभाषा के मुसलमान कवि (२)

(श्री युगलकिशोर चतुर्वेदी, अशोक-मार्ग, जयपुर)

ब्रजभाषा, ब्रजभूमि तथा ब्रजेश श्री कृष्ण के प्रति इतना असीम अनुराग केवल मुसलमान पुरुष कवियों का ही रहा हो, सो बात नहीं, इन तीनों के अनुपम आकर्षण ने प्रेम दीवानी मुस्लिम कवियत्री "ताज" को भी इतना प्रेरित और प्रभावित किया कि वह तो अपने आराध्य देव के साथ रामाकार होने के निमित्त अपने परम्परागत धर्म इस्लाम—तथा उसकी उपासना विधि 'कलमा', 'कुरान' और 'निवाज' तक का परित्याग करके "देव-पूजा" करने और 'हिन्दुआनी' बनने तक की 'ठान' ली थी। इस भावना को व्यक्त करने वाला आपका यह पद पठनीय है :—

सुनो दिलजानी मेरे दल की कहानी,
तुम दस्त ही विकानी बदमानी भी सहूँगी मैं।
देव-पूजा ठानी मैं निवाज हू भुलानी,
तजे कलमा, कुरान, सारे गुनन गहूंगी मैं॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्यामला सलोना सिर ताज सिर कुल्ले दिये,
तेरे नेह दाग में निदाघ ह्वै दहूंगी मैं।
नन्द के कुमार कुरवान तारगी सूरत पै,
ताण नाल प्यारे हिन्दुआनी ह्वै रहूँगी मैं॥

केवल ताज ही क्यों, ब्रजभाषा के चमत्कार ने तो 'शेख' नामक एक अन्य मुस्लिम महिला को सामान्य रंगरेजिन से सुप्रसिद्ध कवयित्री भी बना दिया था। इतना ही नहीं, ब्रजभाषा काव्य के माध्यम से व्यक्त किये गये विचारों के आदान-प्रदान ने इसको ब्रजभाषा के एक उच्च कोटि के कवि–आलम के साथ वैवाहिक सूत्र में भी बाँध दिया था।

इन दो प्रेमी कवियों के पारस्परिक आकर्षण से सम्बद्ध यह किम्वदन्ति प्रचलित है कि आलम नाम के उक्त कवि, जो पहले ब्राह्मण जाति के थे–ने अपनी पगड़ी उस रंगरेजिन को रंगने के लिये दी। जब उसने पगड़ी को खोला तो उसके छोर में कागज का एक टुकड़ा बँधा हुआ मिला, जिसमें यह दोहार्द्ध अङ्कित था–"कनक छुरी सी कामिनी काहे को कटि छीन" कवि हृदया शेख ने इसको पढ़कर और वैसी ही भाव पूर्ण भाषा में उसकी पूर्ति इस प्रकार करके– "कटि को कञ्चन काटि विधि, कुचन मध्य धरि दीन" रंगी हुए पगड़ी में बाँध दी। इस पूर्ति से प्रभावित होकर उक्त प्रेमी कवि ने उसको यथेष्ट पुरस्कार देने के साथ-साथ अपना धर्म परिवर्तन उसके करके साथ विबाह भी कर लिया।

इस मुस्लिम महिला कवि ने ब्रज भाषा में अत्युच्च कोटि की कविता की भी जिसके सरस तथा हृदयानन्ददायक पदों का रसास्वादन कीजिये :–

(१)

रात के उनीदे अलसाते मदमाते राते,
अति कजरारे दृग तेरे यों सोहात हैं।
तीखी-तीखी कोरनि करोरे लेत काढ़े जीउ,
केते भये घायल और केते तलफात हैं॥
ज्यों-ज्यों लै सलिल चल "सेख" धोवै बार-बार,
त्यों-त्यों बस बूंदन के वार झुकिजात हैं।
कै बर के घाले कैधों नाहर नहन वाले,
लोहू के पियासे कहूँ पानी ते अघात हैं॥

(२)

पैंडो सम सूधो बैंडों कठिन किवार द्वार,
द्वारपाल नाहीं तहाँ सवल भगति है।
शेष भनि तहाँ मेरे त्रिभुवन राम हैं जु,
दीन बन्धु स्वामी सुर पतिन को पति हैं॥
बरी को न बैर वरि आई को न परवेस,
हीने को हटक नहीं छीने को सकति है।
हाथी की हूंकार पलपाछे पहुँचन पावे,
चींटी की चिघार पहले ही पहुँचति है॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शेख की कविता की भाँति ही आलम का काव्य भी ब्रजभाषा का उत्कृष्ट नमूना माना जाता है। उनका रचा हुआ आलम कवि 'नामक' ग्रथ बहुत प्रसिद्ध है। आपकी कमनीय कविताओं की झलक देखिए--

(१)

जा थल कीन्हे विहार अनेकन ता थल काङ्करी बैठि चुन्यो करैं।
जा रसना सो करी बहुबातन ता रसना सो चरित्र गुन्यो करै॥
'आलम' जौन से कुञ्जन में करी केलि, तहाँ अब शीश धुन्यो करैं।
नैनन में जो सदा बसते, तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करैं॥

(२)

प्रेम रंग पगे जगमगे जगे जामिनि के, जोबन की जोति जोर उमगत हैं।
मदन के माते मतवारे ऐसे घूमत हैं, झूमत हैं झुकि-झुकि झांकि उघरत है॥
'आलम' सो नवल निकाई इन नैननि की, पाँखुरी पदुम पै भँवर थिरकत हैं।
चाहत हैं उडिवो को देखत मयङ्क मुख, जानति है रैनि ताते ताहि मैं रहत हैं॥

उपर्युक्त कवि तथा कवयित्री के टक्कर के इस युग के दूसरे मुसलमान कवियों में सैयद गुलामअली बिलग्रामी उपनाम 'रसलीन' का स्थान बहुत ऊँचा है। अरबी, फारसी, तथा संस्कृत के विद्वान होने के साथ-साथ ये ब्रजभाषा के भी श्रेष्ठ कवि थे। 'अंगदर्पण' और 'रसप्रबोध' इनकी प्रधान रचनायें हैं, जिनके कारण इनकी गणना आचार्यों में की जाती है। इनकी कविता के उदाहरण—

मुकुत भये घर खोयके, कानन बठे जाय।
घर खोवत हैं और को कीजै कौन उपाय॥
कत दिखाय कामिनि दई, दामिनि को निज बाँहि।
थरथरात सीतन फिरै, फर-फराति घन माँहि॥

इस युग के ब्रजभाषा के अन्य मुसलमान कवियों में पठान सुलतान, अब्दुल-रहमान, महबूब तथा याकूबखाँ और प्रसिद्ध हुए हैं। पठान सुलतान राजगढ़ भूपाल के नबाब थे। इन्होंने बिहारी सतसई के दोहों पर कुण्डलियाँ लगाई हैं। यथा :—

नासा मोडि नचाय दृग, करी कका की सौंह।
काँटे लौं कसकति हिये, गड़ी कटीली भौंह॥
गड़ी कटीली भौंह, केस निर वारति प्यारी।
तिरछी चितवन चितै मनो उर हनत कटारी॥
कहि 'पठान सुलतान' विकल चित देख तमासा।
वाको सहज सुभाव और को बुधि बल नासा॥

अब्दुल रहमान कवि, औरंगजेब के पुत्र बहादुर शाह के मनसबदार थे। इन्होंने 'यमक-शतक' नाम का ग्रन्थ बनाया है। इनकी भाषा में एक विशेषता है, जैसा कि इन दोहों से सिद्ध होगा :—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पलकन में राखहुं पियहि, पलक न छाड़ौं सङ्ग।
पुतरी सौते होहिं जिन, डरपत अपने अङ्ग॥
करकी कर की चूरियाँ, बरकी वर की रीति।
दरकी दरकी कंचुकी, हरकी हरकी प्रीति॥

महबूब कवि का काल १७६१ के लगभग निश्चित किया गया है। इनकी रचना सरल और सानुप्रास थी जैसे :—

मृग मद गन्ध मिलि चन्द सुगन्ध बहै, केसरि कपूर धूरि पूरत अनन्त है।
मोर मद मलति गुलाबन बलित भौंर, भनै महबूब तौर और दर सन्त है॥
रच्यो परपञ्च, सरपञ्च, पञ्च सरजूने, करलै कमान, ताज बिरही हनन्त है।
छिन-छिन लई ऋतु राजत समाज नई उनई फिरत भई सिसिर बसन्त है॥

याकूबखाँ ने १७७५ में 'रसभूषण' ग्रन्थ रचा। केशवदास कृत "रसिक प्रिया" पर इनकी बनाई टीका है।

भक्ति, वीर और शृङ्गार रस की ही नहीं, उक्त मध्य युगीन मुस्लिम कवियों ने ब्रजभाषा के माध्यम से हास्य रस की भी कविता की है। इस कोटि के कवियों में आगरा निवासी अली-मुहिब्बखाँ उपनाम पीतम प्रमुख हैं, जिन्होंने १७८७ में "खटमल-बाईसी" नामक एक परम-मनोहर हास्यरूप पूर्ण ग्रन्थ बनाया। उसके नमूने देखिये :—

(१)

जगत के कारन, करन चारों वेदन के, कमल में बसे बैसुजान ज्ञान धरि कै।
पोखन अवनि दुख सोखन त्रिलोकन के, समुद्र में जाय सोये सेस सेज करिकै॥
मदन जरायो औ संहारयौ दृष्टि ही सो सृष्टि, बसे हैं पहार बेऊ भाजि हरवर कै।
विधि हरि हर और इनते न कोई तेऊ, खाट पै न सोवै खटमलन सों डर कै॥

(२)

बाघन पै गयौ देखि बनन में रहै छिपि,
साँपन पै गयौ पताल ठौर पाई है।
गजन पै गयो धूरि डारत है सीस पर,
वैदन पै गयो कोऊ दारू न बताई है॥
जब हहराय हौ हरी के निकट गयो,
मो सों हरि कह्यो तेरी मति भूल छाई है।
कोऊ ना उपाउ, भटकत जनि डोलै सुनै,
खाट के नगर खटमलन की दोहाई है॥

१८०० के लगभग नूरमुहम्मद ने "इन्द्रावती" नामक परमोत्तम प्रेम ग्रन्थ रचा था। लगभग इसी समय बुन्देलखण्ड के शासक जुल्फकारखाँ नामक ब्रजभाषा के एक और प्रसिद्ध मुसलमान कवि हुए थे, जिनका "जुल्फिकार सतसई" नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध है। अनवरखाँ (१८१०) ने ब्रजभाषा का "अनवर चन्द्रिका" नामक सतसई की एक उत्तम और प्रख्यात टीका रची थी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पूर्वोक्त कवियों के अतिरिक्त "तेग अली" नामक एक मुसलमान कवि और हुए हैं, जिन्होंने 'बदमाश-दर्पण' ग्रन्थ की रचना की थी। इसी प्रकार नबी का 'नखशिख' तथा बाहब का "बारहमासा" नामक ग्रन्थ और प्रसिद्ध हुए हैं।

ब्रजभाषा के मुसलमान कवियों की तालिका केवल यहीं समाप्त नहीं हो जाती, अभी तो लगभग १०० ऐसे कवि और गिनाये जा सकते हैं जिन्होंने मुसलमान होते हुए भी ब्रजभाषा में अत्युच्च कोटि की कविता की है। लेख के विस्तार भय से उनका विवरण अति संक्षेप में किया जा रहा है :—

क्र. सं.	कविता काल	नाम	विशेष विवरण
१	१६६६	अहमद	स्फुट काव्य
२	१७००	कारेबेग	,,
३	१७००	रज्जब अली	दाऊदपावु के शिष्य
४	१७०६	काजी कदम हुसैन	साखी ग्रन्थ
५	१७०८	हुसैन	कालिदास हजारा
६	१७१०	दाराशाह	दोहा स्तव संग्रह
७	१७३५	मीर रस्तम	इनके छन्द कालिदास हजारा में हैं
८	१७३६	जैनुद्दीन मुहम्मद	स्फुट काव्य
९	१७३७	दानिशमंद खाँ	औरंगजेब के कृपा पात्र
१०	१७३८	आसिफखां	,, ,, ,,
११	१७५४	करीम	इनका नाम 'सूदन' की सूची में है
१२	१७६०	मुहम्मद	,, ,, ,,
१३	१७६५	अब्दुल जलील	औरंगजेब के दरबार में
१४	१७८०	रहीम	खानखाना से इतर
१५	१७८५	आमिल	स्फुट काव्य
१६	१७९६	आजमखाँ	शृंगार दर्पण
१७	१८००	तालिबशाह	मिश्रित काव्य
१८	१८००	मीर अहम्मद विलग्रामी	,, ,,
१९	१८०३	तालिबअली विलग्रामी	,, ,,
२०	१८२०	यूसुफखाँ	रसिक प्रिया व सतसई टीकाकार
२१	१८३०	नेवाज जोलाहा	—
२२	१८३७	किशवर अली	सार चन्द्रिका
२३	१८५८	काजिम अली	सिंहासन बत्तीसी
२४	१८६०	मिर्जामद नायक	सुकवि
२५	१८६०	नबाब हिम्मत बहादुर	सुकवि
२६	१८८४ के पूर्व	सैयद पहाड़	रससार
२७	१८८९	ईसवी	टीका सतसई
२८	१८९०	आजम	षड्ऋतु तथा नखशिख पर उत्तम काव्य किया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्र. सं.	कविता काल	नाम	विशेष विवरण
२९	१८९९	कासिमशाह	हंस जवाहिर
३०	१९१७ के पूर्व	हाजी	प्रेममनामा
३१	१९२२	बखतावरखाँ	सुन्नीनामा, धनुषसमैया
३२	१९२५ के पूर्व	खान	—
३३	१९३३	अलीमन	—
३४	१९३४	लतीफ	—
३५	१९५६ के पूर्व	ज्ञानअली	सियवर केलि पदावलि
३६	वर्तमान पीढ़ी के मीर		अमीर अली
३७	वर्तमान पीढ़ी के हफीज्जुलाखाँ		कई संग्रह स्फुट काव्य
३८	वर्तमान पीढ़ी के पीर (मीरमुहम्मद)		उरदौली (सीतामऊ)
३९	,,	सैयद छेदाशाह	पौहर (कानपुर)
४०	,,	मो. अमीर खाँ	आगरा
४१	,,	मु० खैरीती खाँ	देवरीसागर

कतिपय वे मुसलमान कवि जिनका कविता काल आदि का ठीक-ठीक पता नहीं। अकारादि क्रम से :—

१. अलस्याद
२. आरिफ
३. आसियापीर
४. इजदानी
५. इन्शा
६. काजी अकरम फैज
७. खान आलम
८. खान मुलतान
९. खान सुलतान
१०. गुलामी
११. जानजाना
१२. जुलूकरनैन
१३. तेगअली
१४. दीन दरवेश
१५. नजबी
१६. नवी
१७. नेयाज
१८. निशात
१९. पंथी (मिर्जा रोशन नजीर)
२०. मीरमाधा
२१. मुराद
२२. नजीबखाँ (रसिया)
२३. रहमतुल्ला
२४. रंगखानि
२५. बजहन
२६. बहाब
२७. वाजिद (ओला)
२८. वाहिद
२९. साहब
३०. सुलतान
३१. शाह मुहम्मद
३२. शाहशफी
३३. शाहहादी
३४. शेख गदाई
३५. शेख सलीमत
३६. हाशिम बीजापुरी
३७. हिम्मतखाँ
३८. हसन मारहरी

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्रामीण बोलियाँ और हिन्दी की समृद्धि

(डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन' एम० ए०, डी० लिट्०)

कोई भी साहित्यिक भाषा आकाश से एक साथ धरती पर नहीं टूट पड़ती; निश्चित रूप से उसका किसी न किसी जन बोली अर्थात् ग्रामीण बोली से विकास हुआ करता है। साहित्यिक भाषाओं के मूल और विकास का इतिहास हमारे उक्त कथन का साक्षी है। साहित्यिक भाषा अपने विकास के लिए किसी विशिष्ट ग्रामीण बोली के व्याकरणिक ढाँचे पर सहारा लेते हुए अपने शब्द-भंडार को अनेक ग्रामीण बोलियों के शब्द-रत्नों से भरती रहती है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि एक साहित्यिक भाषा की जीवन धारा का मूल स्रोत ग्रामीण बोलियाँ हैं। उन्हीं से साहित्यिक भाषा को शक्ति और विस्तार मिलता है। जिस दिन किसी साहित्यिक भाषा का सम्बन्ध उसकी अपनी ग्रामीण बोलियों से टूट जाएगा, उस दिन वह साहित्यिक भाषा निष्प्राण हो जाएगी। उसकी जीवन धारा धीरे-धीरे पतली पड़ती जाएगी और अन्त में सूख जाएगी। इसलिए एक मानव, शिष्ट या साहित्यिक भाषा के लिए परम आवश्यक और अनिवार्य है कि वह अपनी प्राणदायिनी ग्रामीण बोलियों से शब्द-जल-राशि ग्रहण करती रहे। उन ग्रामीण बोलियों के शब्द ही हमारे अपने शब्द हैं। वास्तव में वे ही हमारी धरती माता की कोख से पैदा हुए सच्चे सपूत हैं। जन-जीवन की संस्कृति के कंठ से निकले हुए उन शब्दों में ही हमारी धरती गाती है और आकाश स्वर देता है। हमारा दैनिक व्यापार, हमारे गृह उद्योग, हमारे पर्व, हमारे संस्कार, हमारे वृक्ष, हमारी नदियाँ, हमारे फूल-पत्ते, फल आदि हमसे क्या कहते हैं, इसे हमारी साहित्यिक भाषा तभी अच्छी तरह बता सकती है जब वह अपनी ग्रामीण बोलियों के शब्द-रत्नों से अपने को सम्पन्न बनाती रहे। शब्द, मुहावरे, कहावतें आदि जो भी विचाराभिव्यक्ति के तत्व हैं, वे सभी तो ग्रामीण बोलियों की देन हैं।

हिन्दी आज हमारे नवोदित राष्ट्र की राजभाषा और राष्ट्रभाषा है। देश की संपर्क भाषा बनने का भी यह अधिकार प्राप्त कर रही है। ऐसी स्थिति में आज हमारी 'हिन्दी' को अपना हृदय बहुत विशाल और उदार बनाना है। उसे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी अर्थ-व्यंजकता की सबल सार्थकता को भी सिद्ध करना है। यह सब कुछ ग्रामीण बोलियों के शब्द-सहयोग पर ही निर्भर है।

बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, हरियाणा और हिमाचल प्रदेश का सम्मिलित भू-भाग 'हिन्दी-प्रदेश' कहाता है। इस संपूर्ण हिन्दी-प्रदेश की शिक्षा, शासन एवं साहित्य की भाषा 'हिन्दी' ही हो सकती है। आज इस हिन्दी-प्रदेश में लगभग सत्तरह ऐसी सबल ग्रामीण बोलियाँ अपना आसन जमाये हुए हैं, जिन्हें व्यापकता, प्रमुखता और सबलता की दृष्टि से बोलियाँ न कहकर उपभाषाएँ कहें तो अनुचित न होगा। सारे हिन्दी-प्रदेश को यदि हम पूर्वी और पश्चिमी नाम के दो खंडों में बाटें, तो पूर्वी खंड की ग्रामीण बोलियों के नाम इस प्रकार हैं—

(१) मगही (२) मैथिली (३) भोजपुरी (४) अवधी (५) बघेली और छत्तीसगढ़ी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पश्चिमी खंड में (१) कुमायूनी (२) गढ़वाली (३) हरियाणी (४) कौरवी (५) कन्नौजी (६) ब्रजभाषा (७) बुन्देली (८) मालवी (९) मेवाती (१०) जयपुरी और (११) मारवाड़ी।

हिन्दी-प्रदेश की इन सत्तरह ग्रामीण बोलियों से हिन्दी-प्रदेश की अपनी संस्कृति, कला, व्यवसाय आदि को सदा सहज वाणी मिली है और आगे भी मिलती रहेगी। इन बोलियों के शब्द सपूतों के बल पर ही हिन्दी सच्चे अर्थों में राष्ट्र सिंहासन पर विराजमान होकर उसे सुशोभित कर सकती है। विभिन्न सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति के लिए ग्रामीण बोलियों के शब्द जैसी सच्ची अर्थ-व्यंजकता प्रकट करते हैं, वैसी अर्थ-व्यंजकता गढ़े हुए बनावटी शब्दों में नहीं मिल सकती। स्नेह और वात्सल्य के भाव को जिस सचाई और बारीकी के साथ हमारी ब्रजभाषा का 'कान्हा' या 'कन्हइया' शब्द व्यक्त करता है, वैसी बात 'कृष्ण' शब्द में नहीं मिलती। 'हुड़क', 'टीस', 'चबक', 'हरारत', 'हौंस' आदि शब्द ब्रजभाषा ने हिन्दी को ऐसे प्रदान किये हैं कि आज तक हमारी साहित्यिक हिन्दी इनकी टक्कर के अन्य शब्द नहीं दे सकती। हिन्दी ऐसे जीवन्त शब्दों को लेकर सदा जीवनी शक्ति धारण करती रहेगी। शिक्षा के विभिन्न विषयों तथा ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के लिए शब्दों को केवल समितियों में बैठकर गढ़ना हमारे लिए कल्याणकारी न होगा। हमें तो जन-जीवन के समुद्र में से शब्द-मोतियों को लाना पड़ेगा। वह जल-राशि ग्रामीण बोलियाँ ही हैं। उनसे निकाले हुए सच्चे मोती ही हिन्दी अर्थात् हमारी राष्ट्रभाषा का उत्तम कंठहार बना सकते हैं।

हमारी ग्रामीण बोलियों की शब्द सम्पत्ति का समष्टिगत रूप ही हमारी राष्ट्र-भाषा अथवा साहित्यिक हिन्दी भाषा का असली रूप है। हिन्दी के असली, अर्थ-व्यंजक और जीवन्त शब्द प्रारम्भ में बोलियों से ही दान में प्राप्त हुए थे। हिन्दी की आदि जन्मदात्री उक्त सत्तरह ग्रामीण बोलियाँ ही हैं। उन्होंने ही अपनी कोख से ऐसे सार्थक एवं प्राणवान् शब्द पैदा किये हैं जो आज हिन्दी को एक समर्थ भाषा का दर्जा दिला रहे हैं। हम यह विश्वास के साथ कह सकते हैं कि सच्चे शब्द हमें ग्रामीण जनों के जीवन से ही प्राप्त हो सकते हैं।

'क्रोधावेश में किसी को पीटने के लिए दौड़ना' कितने प्रकार का हो सकता है। उन भावों को प्रकट करने के लिए क्या-क्या शब्द हैं और उनकी क्या-क्या विवक्षाएँ हैं, यह सब कुछ हमें ग्रामीण बोलियों से ही मालूम हो सकता हैं। उक्त क्रिया की विभिन्न विवक्षाओं के लिए ब्रजभाषा में 'झपटना', 'अर्राना', 'रूरना' आदि शब्द प्रचलित हैं। ये तीनों शब्द अपना एक पृथक् अर्थ और बिम्ब रखते है। ऐसे शब्दों को लेकर ही हिन्दी समृद्ध हो सकती है। ऐसे हजारों शब्द हमारी ग्रामीण बोलियों में भरे पड़े हैं। हिन्दी-प्रेमियों तथा हिन्दी-सेवियों के पाँवों के रथ उन क्षेत्रों में पहुँचें और उस धरती से शब्द-कणों को चुनकर संग्रह करें तब हिन्दी सच्चे अर्थों में समृद्धि को प्राप्त होगी।

शीशम आदि के पुराने तने के गर्भ भाग की काली-सी लकड़ी बहुत मजबूत और अच्छी मानी जाती है। ब्रजभाषा-क्षेत्र के जन-जीवन में उसे 'सार' या 'राच' कहते हैं। 'सीकुर', 'पकौट' या 'हीर' भी उसी का नाम है। रीति कालीन कविवर सेनापति ने भगवान् राम की खड़ाउओं को कल्प-वृक्ष के सार से बनी हुई बताते हुए लिखा है—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"सुरतरु सार की सवारी है विरंचि पचि,
कंचन खचित चिन्ता मनि के जराइ की।"

कवित्त की इस पंक्ति के 'सार' शब्द का बिम्बात्मक अर्थ-ग्रहण वही कर सकता है, जिसने ग्रामीण जीवन में घुल मिलकर ग्रामीण ब्रजभाषा के 'सार' शब्द को सुन लिया और गुन लिया हो।

एक 'सार' ही क्या, ऐसे हजारों अर्थ व्यंजक जीवित शब्द ग्रामीण बोलियाँ हिन्दी को दे सकती हैं। आवश्यकता तो इन कामधेनुओं को दुहने वाले गोपकुमारों की है।

जब कोई जुलाहा अपने करघे पर कपड़ा बुनता है तब कभी-कभी करघे की कंघी की खराबी से तीन-चार तागों की लम्बी मोटी रेखा-सी बन जाती है, उसे ब्रजभाषा के जनपदीय जन 'साँटन' या 'जौर' कहते हैं। इस प्रचलित शब्द के पर्याय को गढ़ने की आवश्यकता नहीं। 'साँटन' या 'जौर' जीवित शब्द है। हजारों मनुष्य इसके अर्थ को जानते हैं। ऐसे शब्दों को लेकर हिन्दी एक सहज और समर्थ भाषा बन सकेगी।

किसानों, मजदूरों, कारीगरों आदि की सहज भाषा ही तो ग्रामीण बोलियाँ हैं। उन बोलियों में समाज शास्त्र, शिल्प, उद्योगधन्धों के सैकड़ों बढ़िया-बढ़िया शब्द मिलेंगे जो हिन्दी की समृद्धि में सच्चे सहायक हो सकते हैं। शिक्षा का माध्यम जब हिन्दी को स्वीकार कर लिया गया है तब तो उन शब्दों का संग्रह करना हमारा अनिवार्य कर्त्तव्य कर्म हो जाता है। लगभग सौ सच्चे पृथ्वीपुत्र उक्त सत्तरह ग्रामीण बोलियों से शब्द संग्रह करके हिन्दी को अर्पित कर सकें तो निस्संदेह हिन्दी सच्चे अर्थों में संपर्क-भाषा, राष्ट्र-भाषा, राज-भाषा और शिक्षा-भाषा बन सकेगी और सभी प्रकार समृद्ध भी मानी जाएगी।

['आकाशवाणी मथुरा' के सौजन्य से]

(शेष पृष्ठ २९ का)

३९. फजा मलखाँ
४०. फरीद
४१. मीरन
४२. हुसैनी
४३. मियाँ इत्यादि

ब्रजभाषा सेवी उपर्युक्त मुसलमान कवियों के अतिरिक्त कुछ और भी मुसलमान कवि होंगे, जिनके नाम भी इस लेख में छूट गये हों फिर भी एक विदेशी, विधर्मी तथा विभाषी समुदाय द्वारा इस भाषा में कविता किया जाना उसकी सरसता, माधुरी आदि सदगुणों का सूचक है। क्या ब्रजभाषा के वर्तमान प्रेमी उक्त कवियों से प्रेरणा ग्रहण करके उसके उत्थान के लिये प्रयत्न करेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय इतिहास में भारशिव नाग वंश

(श्री वृन्दावनदास)

हिन्दू साम्राज्य का पुनर्गठन चौथी शताब्दी में गुप्तकाल के आरम्भ से नहीं माना जा सकता है और न वाकाटकों से ही जो उनसे सौ साल पहिले हुए थे वरन् भारशिव नागों से माना जायगा जो उनसे भी पचास साल पहिले हुए थे। यदि भारशिव नाग न होते तो वाकाटक कहाँ से आते और यदि भारशिव नाग और वाकाटक न होते तो गुप्त-साम्राज्य कल्पनातीत होता। ताम्रलेखों, शिलालेखों और सिक्कों से इन दोनों साम्राज्यों का इतिहास भली भाँति प्रमाणित है। प्रचुरता से उपलब्ध पौराणिक सामग्री द्वारा भी इस काल की ऐतिहासिकता पुष्ट होती है।

प्रसिद्ध इतिहासकार विंसेन्ट स्मिथ ने वाकाटकों और भारशिवों पर एक पंक्ति भी नहीं लिखी। उनकी यह धारणा कि भारतीय इतिहास में आंध्रवंशीय राजाओं के बाद और गुप्तों के उदय के बीच का समय अन्धकार पूर्ण है एकदम निराधार और भ्रान्तिपूर्ण है। तथ्य तो यह है कि यह समय अत्यन्त घटनापूर्ण है तथा इस समय पर बड़ा विस्तृत इतिहास मिलता है।

भारत का साम्राज्य समुद्र गुप्त से पहिले ६० वर्ष तक वाकाटकों के हाथ में रहा परन्तु वाकाटकों को यह साम्राज्य भारशिवों से मिला था। वाकाटक सम्राट प्रवरसेन के पुत्र गौतमी-पुत्र का विवाह भारशिव सम्राट भवनाग की पुत्री के साथ हुआ था। यह वैवाहिक सम्बन्ध उस समय के इतिहास की बड़ी महत्वपूर्ण घटना थी। इससे दो राजवंशों की मैत्री परिपक्व हुई और तज्जन्य सम्मिलित प्रयास के आगे अहिन्दू कुषाण साम्राज्य अपने आपको सम्हाल न सका और छिन्न भिन्न हो गया। इस विवाह-सम्बन्ध का उल्लेख सभी वाकाटक राजवंश के लेखों में उपलब्ध होता है।

भारशिव लोग मूलतः बघेलखण्ड के निवासी थे। कौशाम्बी और काशी के मध्य किसी स्थान से इनका निकास था। वाकाटक लोग वागाट या वाकाट से जो बुन्देलखंड में ओड़छा के उत्तरी भाग में एक ग्राम है निकले प्रतीत होते हैं। अतः इनको भारशिवों का पड़ौसी ही समझना चाहिये। भारशिव लोग बघेलखण्ड से विन्ध्याचल होकर गंगातट पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने काशी में दस अश्वमेध यज्ञ किये। अश्वमेध यज्ञ तो हिन्दूशास्त्रों के विधान के अनुसार राजनीतिक विजयों के उपलक्ष में होते हैं। भारशिवों ने कुषाणों पर मार्मिक प्रहार किये और उनका आर्यावर्त से उन्मूलन कर दिया, इसी उपलक्ष में उन्होंने काशी में गंगातट पर दस अश्वमेध यज्ञ किये थे और अपना राज्याभिषेक गंगा के पवित्र जल से किया था। जिस स्थान पर भारशिवों के यज्ञ संपन्न हुए थे वह उसी समय से दशाश्वमेध घाट कहलाता है।

भारशिवों ने जो कार्य उठाया वह अत्यन्त गौरवपूर्ण था। वे हिन्दूसाम्राज्य के पुनर्संस्थापक थे। उस समय हिन्दुओं पर शकों का राज्य था जिसको इतिहास में कुषाण साम्राज्य बोलते हैं। उस समय हिन्दूधर्म त्रस्त था। आरम्भ में शकों ने हिन्दुओं पर बड़े अत्याचार किये, उन्होंने अनेक ब्राह्मणों की हत्या की, मन्दिरों को ध्वस्त किया। उनकी पाकशाला में साँड़ों को पकाया जाता था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अल्बेरूनी का कहना है कि कुषाण लोग कहा करते थे कि हम लोग देवपुत्र हैं, हिन्दुओं पर राज्य करने का हमें ईश्वर की ओर से अधिकार मिला हुआ है। वे लोग मध्य एशिया के तुखार थे। ये बड़े नृशंस थे और इनका शासन भी कठोर था।

कुषाण साम्राज्य उस समय उस सारे प्रदेश पर था जिसको आजकल हम उत्तर-प्रदेश और बिहार कहते हैं। उस पर उनकी सत्ता और अधिकार सुदृढ़ था। इस प्रदेश में भारशिवों ने कुषाणों पर जो चोट लगाई उससे वे वहाँ से हटने को बाध्य हो गये। दक्षिणापथ के सातवाहन सम्राट पश्चिम शक-शक्ति से युद्धरत रहे परन्तु वे भी उतनी सफलता प्राप्त न कर सके थे जो भारशिवों ने उत्तरी भारत में की थी।

भारशिवों के आराध्यदेव शिव थे। जिस प्रकार शिवजी का जीवन योगियों और संन्यासियों का सा था उसी प्रकार भारशिवों का शासन योगियों का सा सरल था, उनके शासन-सूत्र अथवा रहन-सहन में किसी प्रकार की दिखावट न थी। उन्होंने संहारकर्ता शिव को अपना इष्ट माना। उनको सर्वत्र शिव ही शिव दिखाई देते थे। उन्होंने अपनी गतिविधियों से देश के राजनीतिक वातावरण को शिवमय कर दिया। उन्होंने एक शक्ति सम्पन्न अहिन्दू साम्राज्य को ध्वस्त किया। दस अश्वमेध यज्ञ किये। कुषाणों की सिक्का पद्धति की अवहेलना करके हिन्दू रीति से सिक्कों का निर्माण स्वयं किया और दूसरों से कराया। उन्होंने हिन्दू प्रजातन्त्रों को स्वतन्त्र किया। भारत के प्राचीन गणराज्यों को उनकी स्वाधीनता प्राप्त कराई। उन्होंने गणराज्यों को प्रत्येक प्रकार की सामर्थ्य और क्षमता प्रदान की। वे चाहें जिस प्रकार अपने सिक्के चला सकते थे। उन्होंने अपने चारों ओर गणराज्य स्थापित किये। जिस प्रकार शिवजी अपने गणों से घिरे रहते हैं उसी प्रकार यत्र तत्र बिखरे हिन्दू प्रजातन्त्र इनके गण थे। और ये उनके संघ मुख्य अथवा संघनेता थे ये स्वतन्त्रता का प्रचार और उसकी रक्षा करते थे। इनका जीवन योगियों और सन्यासियों जैसा था। उनके समय में बौद्ध धर्म पतनोन्मुख हो गया। कुषाणों के समय में बौद्ध धर्म राजाओं के हाथ में पड़कर अहिन्दूरूप हो गया था। अब भिक्षुओं को अत्याचारियों के रूप में देखा जाता था। डाक्टर काशीप्रसाद जी जायसवाल ने अपनी पुस्तक 'अन्धकार युगीन भारत' में उस समय के बौद्धधर्म की दशा का बड़ा सुन्दर चित्र खींचा है। वे लिखते हैं, "उन दिनों बौद्ध धर्म मानों एक अत्याचारी वर्ग का पोष्यपुत्र बना हुआ था और जब उस वर्ग के अत्याचारों का निर्मूलन हुआ तब उसके साथ-साथ उस धर्म का अवश्य पतन हुआ होगा। बौद्ध धर्म उस समय राष्ट्रीयता के उच्चतल से पतित हो गया था। कुशनों के हाथ में पड़कर बौद्ध धर्म ने अपनी आध्यात्मिक स्वतन्त्रता नष्ट कर दी और वह एक राजनीतिक साधन बन गया था।"

नाग राजवंश का उत्थान सर्व प्रथम विदिशा में हुआ था। पुराणों में विदिशा के नाग राजवंश को दो भागों में विभाजित किया है। (१) शुङ्गकालीन नाग राजा गण (२) शुङ्गोत्तर कालीन नाग राजे।

पुष्य मित्र शुङ्ग का राज्यारोहण १८८ ई० पू० हुआ था। शुङ्ग काल ११२ वर्ष और कण्व वंश का काल ४५ वर्ष समझा जाता है। इस प्रकार १५७ वर्ष उपरान्त ३१ ई० पू० वर्ष तक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शुङ्ग और कण्व दौनों काल समाप्त हो चुके थे। शुंगकालीन नाग-राजाओं का तिथि क्रम इस प्रकार है।

शेष ई० पू० ११०–९०
भोगिन् ई० पू० ९०–८०
रामचन्द्र ई० पू० ८०–५०
धर्मवर्मन् ” ५०–४०
वंगर ” ४०–३१

उक्त ५ नाग राजाओं ने ई० पू० ३१ तक विदिशा में राज्य किया। इन नाग-राजाओं को शुंगकालीन कहा जाना चाहिये। सन् ३१ ई० पू० के बाद के नाग राजागण ने कदाचिन् पद्मावती को अपनी राजधानी बनाया था। इन राजाओं में सर्वप्रथम भूतनन्दी हुआ। भागवत से अनुसार भूतनन्दी के समय से इस वंश की पुनः स्थापना हुई। शुंगोत्तरकालीन नाग राजाओं के नाम के पीछे नन्दी शब्द जुड़ा हुआ है। वायु पुराण में इन वैदिश नाग राजाओं को वृष अर्थात् शिव का नन्दी कहा गया है। यही कारण है कि उनके नामों के अन्त में नन्दी शब्द आया है। ऐसा प्रतीत होता है कि भारशिव उपाधि का सम्बन्ध भी वृष और नन्दी आदि उपाधियों पर ही आधारित है।

सन् ३१ ई० पू० से ७८ ई० तक शिलालेखों और सिक्कों के आधार पर भूत नन्दी से लेकर भूतनन्दी सहित ८ नाग राजाओं का उल्लेख मिलता है। उनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—(१) भूतनन्दी (२) शिशु नन्दी (३) यशः नन्दी (४) पुरुषदात (५) उत्तमदात (६) कामदात (७) भवदात (८) शिवनन्दी या शिवदात।

उपरोक्त वर्णन से विदित होता है कि सन् ११० ई० पू० से ७८ ई० तक लगभग दो सौ वर्षों में १३ नाग राजाओं ने राज्य किया जिनमें पहिले पाँच ने विदिशा को और दूसरे आठ ने पद्मावती को अपनी राजधानी बनाया। भूतनन्दी के वंशज राजा शिवदात अथवा शिवनन्दी के समय तक और उसके बाद लगभग आधी शताब्दी तक अपनी राजधानी पद्मावती में राज करते रहे।

अन्तिम राजा शिवनन्दी के शासनकाल के उपरान्त कुछ वर्ष बाद पद्मावती में कुषाण क्षत्रपों का शासन स्थापित हो गया। उस काल में नागों ने विदिशा और पद्मावती में रहना छोड़ दिया और वहाँ से मध्यप्रदेश में चले गये। उन्होंने वहाँ की पहाड़ियों में सुरक्षित रह कर पचास वर्ष तक राज्य किया। उनका उस काल में मध्य-प्रदेश के पुरिका और नागपुर नन्दिवर्द्धन नामक स्थानों में राज्य था। पद्मावती में कुषाण क्षत्रप विन्वस्फाणि का शासन हो गया जो बड़ा शक्तिशाली था और जिसने अनेक युद्धों के उपरान्त बिहार तक अपना आधिपत्य स्थापित कर दिया था।

नागों के इस प्रकार मध्यप्रदेश को निक्रमण करने से इतिहास पर बड़ा प्रभाव पड़ा। इससे मध्यप्रदेश के विन्ध्यवर्ती आर्यावर्त का बुन्देलखण्ड से घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया। बुन्देलखण्ड का एक भाग और दक्षिणापथ के नागपुर वाला भाग दौनों मिलकर एक हिन्दुस्तानी प्रदेश बने रहे हैं और वहाँ के निवासियों की भाषा और संस्कृति पूर्णांश में उत्तर भारत की सी है। नामों के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साठ वर्ष तक वहाँ रहने का ही यह ऐतिहासिक परिणाम है। कुषाण कालीन राज्यापहरण के कारण ही नागों को एक प्रकार से निर्वासित होकर यहां रहना पड़ा था। उन्होंने एक ओर तो नागपुर से पुरिका होशंगाबाद तक और दूसरी ओर पूर्वीमालवा तक अपना सम्बन्ध बराबर स्थापित रक्खा, बघेलखण्ड रीवाँ से भी बराबर वे मिले ही रहे। इसी बघेलखण्ड से होते हुए उनके परवर्ती भारशिव नाग गंगातट पर पहुँचे थे।

भारशिव नागों को अपने अभियान में बड़ी सफलता मिली। उन्होंने शक्तिशाली कुषाण साम्राज्य पर करारे प्रहार करके उसे हिला ही नहीं अपदस्थ भी कर दिया। अपनी महान् विजयों के उपलक्ष में उन्होंने अश्वमेध यज्ञ भी किये। उनकी सफलताओं का उचित रूप से मूल्याङ्कन करने के लिए भारत की तत्कालीन राजनीतिक स्थिति का कुछ दिग्दर्शन कराना आवश्यक है।

सन् ७८ ई० में इस देश में जो शक शासन (कुषाण राज्य) प्रचलित था उसकी विशेषता का वर्णन अल्बेरूनी ने इस प्रकार किया है, "यहाँ जिस शक का उल्लेख है उसने आर्यावर्त में अपने राज्य के मध्य में अपनी राजधानी बनाकर सिन्धु से समुद्र तक के प्रदेश पर अत्याचार किया था। उसने हिन्दुओं को आज्ञा देदी थी कि वे अपने आपको शक ही समझें और शक ही कहें, इसके अतिरिक्त अपने आपको कुछ न समझें या न कहें।"

गर्ग संहिता में भी प्राय: इसी प्रकार की बात कही गई है। "शकों का राजा बहुत ही लोभी, शक्तिशाली और पापी था। इन भीषण और असंख्य शकों ने प्रजा का स्वरूप नष्ट कर दिया था और उनके आचरण भ्रष्ट कर दिये थे।"

गुणाढ्य ने कथा सरित्सागर में कहा है "ये म्लेच्छ लोग ब्राह्मणों की हत्या करते हैं और यज्ञों और धार्मिक कृत्यों में बाधा डालते हैं। भला ऐसा कौन सा अपराध है जो ये दुष्ट नहीं करते।" महाभारत के वन पर्व में भारत के शक, पुलिंद, यवन, कांभोज, वाल्हीक, शूर, आभीर राजाओं के शासन का उल्लेख है। उस वर्णन की बहुत सी बातें शकों के राज्य से मिलती जुलती हैं।

देश की राजनीतिक स्थिति के इस संदर्भ में नाग सम्राट उस आन्दोलन के नेता बन गये थे जो कुषाणों के विदेशी शासन से स्वतन्त्रता प्राप्त करने को उठा था। नाग सम्राटों ने गण राज्यों का संरक्षण और सम्वर्द्धन किया। इन प्रजातन्त्रों का विस्तार गंगा की तराई के पश्चिम में एक ही विस्तृत क्षेत्र में था। पूर्वी और पश्चिमी मालव प्रदेश, गुजरात, आभीर राजपूताना और पूर्वी पंजाब का एक अंश जो मद्र कहलाता था ये सब भू-भाग प्रजातन्त्रों में स्थित था। इनके अतिरिक्त यौधेय और मालव गण भी महत्वपूर्ण प्रजातन्त्र समझे जाते थे। समुद्रगुप्तके उदय से पूर्व ये सब प्रजातन्त्र स्वतन्त्र थे। ये स्वतन्त्रता उन्हें नागों ने ही दिलवाई थी। इनमें से कुछ प्रजातन्त्र तो नागों के ही या उनके सगे सम्बन्धियों के थे। इन प्रजातन्त्रों की जनता राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत थी। उस समय हिन्दुओं में उस विघटनात्मक यादवीप्रकृति का अभाव था जिसके कारण उन्होंने बाद में बहुत क्षति उठाई और पराधीनता अंगीकार करने को विवश हुए। नागों ने उन्हें सच्चा नेतृत्व प्रदान किया था। उनका ध्येय विदेशी सत्ता का उन्मूलन करके हिन्दू धर्म, संस्कृति और सभ्यता की पुनर्प्रतिष्ठापना करना था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाग काल में मालवों, यौधेयों और मद्रकों ने फिर से अपने-अपने सिक्के बनाने आरम्भ कर दिये थे। इन सिक्कों का नाग सिक्कों से सम्बन्ध था और स्वभावतया इससे उन प्रजातन्त्रों की नागों के प्रति अधीनता स्पष्ट रूप से प्रतिपादित होती थी।

बड़े-बड़े प्रजातन्त्र और उनके संघ ही नाग साम्राज्य का स्वरूप और विस्तार था। इन संघों से नागों को कुषाणों के विपरीत युद्ध में सहायता प्राप्त होती थी। नाग साम्राज्य एक प्रजातन्त्र-प्रधान साम्राज्य था। आरम्भिक मगध के कोट और प्रयाग के गुप्त नागों के आधीन उनके करद सामन्त थे। इस प्रकार भावी मगध और गुप्त साम्राज्य की नींव भी नागों के समय में ही पड़ी। वायु और ब्राह्मण्ड पुराण में इस बात का उल्लेख है कि बिहार उत्तर-प्रदेश, बुन्देलखण्ड, मध्य-प्रदेश, मालवा, राजपूताना, पूर्वी पंजाब का मद्र प्रान्त ये सभी भारशिव नागों के विशाल साम्राज्य के अन्तर्गत थे। भारशिव लोग निरन्तर कुशन साम्राज्य पर प्रहार करते हुए उसका आकार छोटा करते रहे और परिणाम स्वरूप उनका साम्राज्य विस्तार प्राप्त करता रहा।

भारशिव नागों का उत्थान सन् १४० ई० के लगभग सम्राट नवनाग के नेतृत्व में हुआ। नागों के जिस वंश को भारशिव नाग वंश कहते हैं उसका संस्थापक नव नाग था। उसने कांतिपुरी में सर्व प्रथम अपना राज्य स्थापित किया। पुराणों के अनुसार नागों ने पद्मावती कान्तिपुरी और मथुरा में सात पीढ़ियों तक राज्य किया। नागों की इन शाखाओं के प्रमुख राजाओं का तिथि और वंश क्रमानुगत विवरण इस प्रकार है।

कान्तिपुरी नाग-शाखा

नव नाग (भारशिव का वंश का संस्थापक)	सन् १४०—१७० ई०
वीरसेन (जिसने मथुरा और पद्मावती की शाखाओं को भी संस्थापित किया)	सन् १७०—२१० ई०
हयनाग	सन् २१०—२४५ ई०
त्रयनाग	सन् २४५—२५० ई०
बर्हिन् नाग	सन् २५०—२६० ई०
चरज नाग (इसके काल में वाकाटकों का प्रभुत्व २८४ ई० में आरम्भ हो गया था)	सन् २६०—२९० ई०
भवनाग (इसकी कन्या वाकाटक सम्राट प्रवरसेन के पुत्र गौतमी पुत्र को ब्याही थी)	सन् २९०—३१५ ई०
रुद्रसेन (पुरिका में)	सन् ३१५—३४४ ई०

पद्मावती नाग-शाखा (टाकवंश)

भीम नाग	सन् २१०—२३० ई०
स्कन्द नाग	सन् २३०—२५० ई०
वृहस्पतिनाग	सन् २५०—२७० ई०
व्याघ्र नाग (इसके काल में वाकाटकों का प्रभुत्व आरम्भ हो गया)	सन् २७०—२९० ई०
देवनाग	सन् २९०—३१० ई०
गणपति नाग	सन् ३१०—३४४ ई०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मथुरा शाखा के अधिपति नाग राजाओं के नाम अज्ञात हैं। सन् ३४४ ई० के बाद के नाग राजा वाकाटकों के करद सामन्त एवं प्रतिनिधि रूप शासक थे। उनमें अहिच्छत्र वंश का अच्युत-नन्दी अन्तिम राजा था। अन्तर्वेदी वंश का अन्तिम राजा मतिल था जिसकी राजधानी सम्भवतः इन्द्रपुर (इदौर खेड़ा) में थी, उसने सन् ३२८ से ३४८ तक शासन किया। तीसरा श्रुघ्न वश था जिसके दो राजा नागदत्त (३२८–३४८ ई०) और महाराज महेश्वरनाग (३४८ से ३६८ ई०) हुए। समुद्रगुप्त के शिलालेख से मथुरा वाले वंश के अन्तिम नागराजा नागसेन का उल्लेख मिलता है। समुद्रगुप्त के शिलालेख के अनुसार नागसेन की राजधानी निश्चित रूप से मथुरा ही थी। सम्भव है मथुरा में नागसेन के बाद नाग राजाओं की एक दो पीढ़ी और भी हुई हों। पद्मावती की टाक वशाय नाग शाखा के अन्तिम राजा गणपति नाग के सिक्के इतनी बड़ी तादाद में मिले हैं जितने किसी हिन्दू राजा के उपलब्ध नही हुए। ये आठ प्रकार के हैं। इनसे विदित होता है कि गणपति नाग ने निस्संदेह ३५ वर्ष तक राज्य किया।

भारशिवों ने हिन्दू जाति के दुःखों का अन्त करने के लिये शिव के रुद्र रूप की आराधना की जिससे विदेशियों के शासन से मुक्ति मिले। उन्होंने समस्त वातावरण को शिवमय बनाया और शिव के समान ताण्डव नृत्य कर दुष्टों का संहार किया। दुष्टों से मुक्ति पाने के लिए ही उन्होंने शिव को आदर्श मानकर उनको प्रतिष्ठापित किया। उस समय सर्वत्र जन-साधारण के मस्तिष्क में यह बात भली-भाँति बैठ गई थी कि स्वयं संहारकर्ता शिव ने ही भारशिव राज्य की स्थापना की है, शिव ही भारशिव राज्य के पोषक और रक्षक हैं और वे ही भक्तों को स्वतन्त्र करने के लिए उठ खड़े हुए हैं। भारशिवों के जीवन दर्शन पर डा० काशी प्रसाद जायसवाल ने बड़े सुन्दर शब्दों में अपनी पुस्तक अन्धकार युगीन भारत में इस प्रकार लिखा है, "समाज को फिर से ठीक दशा में लाने के लिए शैव साधुता या विरक्ति एक आवश्यक प्रतिकार बन गई थी। शकों ने हिन्दू जनता को निर्बल कर दिया था और इस निर्बलता को दूर करने के लिए शैव साधुता एक आवश्यक वस्तु थी। कुशनों के लोलुपतापूर्ण साम्राज्यवाद का नाश कर दिया गया और हिन्दू जनता में नैतिक दृष्टि से जो दोष आ गये थे, उनका निवारण किया गया। और जब यह काम पूरा हो चुका तब भारशिव लोग क्षेत्र से हट गये। शिव का उद्देश्य पूरा हो चुका था, इसलिये भारशिव लोग आध्या-त्मिक कल्याण और विजय के लिए फिर शिव में लीन हो गये। अन्त तक उन पर कोई विजय प्राप्त नहीं कर सका था और न कभी उन्होंने अपने आचरण को भौतिक स्वार्थ से कलंकित ही किया था। वे शंकर भगवान और उनके भक्तों के सच्चे सेवक थे और इसलिये वे अपना सेवा-कार्य समाप्त करके इतिहास के क्षेत्र से हट गये थे। इस प्रकार का सम्मानपूर्ण और शुभ अन्त क्वचित् ही होता है और भारशिव लोग ऐसे ही अन्त के पूर्णरूप से पात्र थे। भारशिवों ने आर्यावर्त में फिर से हिन्दू राज्य की स्थापना की थी। उन्होंने हिन्दू साम्राज्य का सिंहासन फिर से स्थापित कर दिया था, राष्ट्रीय सभ्यता की भी प्रस्थापना कर दी थी और अपने देश में एक नवीन जीवन का संचार कर दिया था। प्रायः चार सौ वर्षों के बाद उन्होंने फिर से अश्वमेध यज्ञ कराये थे। उन्होंने भगवान शिव की नदी माता गंगा की पवित्रता फिर से स्थापित की थी और उसके उद्गम से लेकर संगम तक उसे पापों और अपराधों से मुक्त कर दिया था और इस योग्य बना दिया था कि वाकाटक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और गुप्त लोग अपने मन्दिरों के द्वारों पर उसे पवित्रता का चिन्ह समझ कर उसकी मूर्तियाँ स्थापित करते थे। उन्होंने ये सभी काम कर डाले थे, पर फिर भी अपना कोई स्मारक पीछे नहीं छोड़ा था। वे केवल अपनी कृतियाँ छोड़ गये और स्वयं अपने आपको उन्होंने मिटा दिया।"

डा० जायसवाल के उपरोक्त कथन से भारशिवों की महान राष्ट्रीय भावना एवं उत्कृष्ट देश-प्रेम का पता चलता है। वास्तव में उनका समय भारत की राजनीति में स्वर्णयुग था। भारशिव लोग कदापि सत्तालोलुप न थे, उनका उद्देश्य केवल विदेशी शासन का अन्त करके हिन्दू-राज्य का पुनर्संस्थापन था। वे अपने उद्देश्य में सफल हुए। उन्होंने वाकाटकों और गुप्तों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर एक सुदृढ़ मैत्री के आधार पर हिन्दुओं को संगठित कर दिया। उसी संगठन के आधार पर वे विदेशियों का उन्मूलन करने में सफल हो सके। चूँकि उनके उद्देश्य भौतिक स्वार्थों पर आधारित न थे इसलिये उनका मार्ग कभी अवरुद्ध न हुआ और उनके सब अभियान सफल हुए। यदि भारशिव लोग कुछ और काल तक भारतीय राजनीति पर छाये रहते तो हिन्दू जाति एक ऐसी सुसंगठित कौम बन जाती जिसका सामना करना किसी भी विदेशी शक्ति को सम्भव न होता।

आधुनिक हिन्दी-कविता में-सूर

(श्री अरविन्द मिश्र ४ ए पार्क रोड लखनऊ)

विभिन्न राजनैतिक संधियों के बीच भविष्य की अस्थिरता से आशङ्कित भारतीय जन-जीवन के अशांत मानस को संतोष प्रदान करने वाले हिन्दी-साहित्य के भक्ति-काल की महत्ता असंदिग्ध है। निर्गुण की ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी दोनों धाराओं के शीतल छींटों से आन्तरिक उत्ताप का शमन नहीं हो पाया था। यही कारण है कि सगुण का सहारा लेकर राम और कृष्ण की पावन चरितावली की वह काव्य-सलिला प्रवाहित हुई कि भारतीय समाज जीवंत एकता और प्राणमयी क्षमता के साथ फिर से गौरवान्वित हो उठा।

रामाश्रयी धारा के एकमात्र सफल कवि तुलसी तो लोकनायक के रूप में प्रतिष्ठित हुए किन्तु कृष्णाश्रयी भक्ति-धारा की लोल लहरियों पर जिन अष्टछापी वरेण्य वीणाओं के सजग तार झंकृत हुए, उनमें सर्वाधिक महनीय, अत्यंत प्रेषणीय और महीयसी मोहिनी झङ्कार प्रज्ञाचक्षु सूर की वीणा की थी। आज भी संगीतज्ञों, कलावंतों और गायकों की स्वर-साधना ही नहीं वरन् भौतिकता से आक्रान्त अशांत जनमानस की शान्ति का आश्रय जिस काव्य में होता है, वह सूर का ही है।

कवि समसामयिक दायित्वों का ही निर्वाहक नहीं होता उसे तो अतीत की वे कड़ियाँ भी ध्यान में रखनी पड़ती हैं जो सामाजिक विकास के लिए अनिवार्य हों। सूर की प्रतिभा और साधना ने मिलकर जिस अतीत का सुनहरा ताना-बाना बुना वह न केवल वर्तमान, बल्कि भविष्य के लिए भी प्रेरणाप्रद है।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने सूर के व्यक्तित्व, भक्ति-भावना, काव्य-कौशल और रस व्यंजना का सुन्दर चित्रण करते हुए उन्हें सूर्य-सदृश स्वीकार किया है—

बल्लभ सागर बिट्ठल जाहि जहाज बखान्यौ।
जग-कवि-कुल-मद हरयौ प्रेम नौके पहिचान्यौ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक वृति नित सवा लाख हरि-पद रचि गाये।
श्री बल्लभ-बल्लभ अभेद करि प्रकट जनाये॥
जा पद-बल अब लौं नर सकत गाइ-गाइ हरि गुनि जियो।
अघ-निकर सूर-कर सूर-पथ सूर-सूर जग मैं उयो॥

कविवर श्रीधर पाठक सूर की कुलीनता, प्रातिभ प्रखरता, अनन्य भक्ति, सरसता, कलागत क्षमता आदि का सफल रूप खड़ा करके उन्हें अविचल भारतीय लाल और हिन्दी का हितकारक सिद्ध करते हैं—

दूजै द्विज-धूरि-गन्य, कवि-कुल-रवि, सूर धन्य,
भक्तन-मनि-मूरधन्य रसिकन-मन हारी।
धनि-धनि ध्रुव हिन्द-सुअन हिन्दी-हितकारी॥

श्री बदरीनाथ भट्ट सूर के व्यक्तित्व और काव्य के उपादानों का संकेत करते हुए उनके गहन प्रभाव का भक्तिमय चित्रण कर रहे हैं—

नेत्र रहित हो उस अथाह की पाई तुमने थाह।
नेत्र-सहित हम थके भटकते नहीं सूझती राह॥
× × × ×
जिस अदृश ने अंधकूप में खींच किया दुख दूर।
कैद उसी को किया हृदय में हो तुम सचमुच सूर॥
× × × ×
अलङ्कार-ध्वनि-रसमय निकली हृदय वेंणु से तान।
वही हमारे लिए बन गई मधुर अलौकिक गान॥

डा० हरिवंश राय 'बच्चन' सूर की विश्वासमयी भक्ति और आस्था का चित्राङ्कन करने के साथ उन्हें भगवान से भी अधिक महत्वपूर्ण मानने हैं—

था सहज-विश्वास का युग, जबकि तुमने गीत गाया।
और मैं संदेह, शङ्का, संशयों का हूँ सताया॥
मैं तुम्हारे श्याम से तुमको अधिक सच मानता हूँ।
जब मुझे भगवान कहना था, तुम्हें मैंने पुकारा।
सूर, पथ मुझको दिखाओ, पद-लगा मैं हूँ तुम्हारा॥

सूर-सागर की गरिमा, सूर-काव्य की क्षमता और प्रभावमयता का उल्लेख करते हुए श्री सोहनलाल द्विवेदी ने उनका अभिवादन किया है—

कैसे अभिवादन करूँ तुम्हारा सूरदास,
तुम हो रहस्य, तुम हो घटना!
नर नारी तो थक जाते हैं भरते भरते नन्हीं गागर।
तुम तो अपनी उर की द्रोणी में, भर लाये अथाह सागर॥
जिसकी सहस्र हिलकोरों में।
कितने ही जीवन पोत बँधे से डोरों में॥
पर जाते हैं जग-जलधि-कूल।
खिल उठे जहाँ सुख शांति, मुक्ति के स्वर्ण फूल॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'भ्रमर गीत की प्रभावमत्ता का उल्लेख करके डा० प्रभाकर माचवे अन्धेपन में दिव्य दृष्टि का महनीय स्वरूप दिखाते हुए सूर की सराहना कर रहे हैं—

जब-जब पढ़ता हूँ भ्रमरगीत। मन में उठती है यही प्रीत ।।
इन आँखों में जग दंद-फंद बहतर बनना सूर-सा अन्ध ।।

डाक्टर देवकी नन्दन श्रीवास्तव 'नन्दन' ने सूर की प्रतिभा एवं वाणी को महान् मानते हुए उनके शब्द-गुंफन, रस-गरिमा, भक्ति-माधुर्य, छन्द-निपुणता आदि सशक्त काव्य-गुणों का सुन्दर चित्रण किया है—

जितना तुम लख सके बन्द आँखों से,
उतना कितनी आँख अबतक हैं परख सकीं ?
रूप और रस का मादन जितना चख सके मौन अधरों से तुम,
उसकी कितनी प्रतिभायें थाह पा सकीं ?

× × × ×

वर्ण-वर्ण में वंशीवादन का सम्मोहन छलक रहा,
भरता प्राणों में मधु आसव।
क्षण:क्षण नव रमणीय कलाओं की,
बहुरङ्गी छटा जगातीं भूमाओं का चिन्मय वैभव ।।

× × × ×

श्याम बने उद्धव, उद्धव गोपी बन गये, तुम्हारे छंदों की छाया के बँधन में।
सत्य बना सुन्दर, सुन्दर बन सत्य अनूठा, निखर उठा आह्लादों के स्पंदन में ।।

श्री रामऋषि शुक्ल के शब्दों में सूर के गीतों में प्यारे नटनागर का प्रतिबिम्ब दधि-माखन के साथ हृदय की मीठी-मीठी चोरी, बाल-जीवन, गोपिका-प्रेम, मोहन की सुषमा और अमृत का सागर धरा हुआ दिखाई पड़ता है। इसीलिए वे सूर के प्रति शत-शत नमन करते हैं—

नयनों में छबि नाच उठा करती मोहन के मुख की।
बाल-चरित की, गोपीजन, के प्रेम, अतीन्द्रिय सुख की।।
दधि-माखन के साथ हृदय की मीठी-मीठी चोरी।
निश्छल-निर्मल जीवन-क्रम में बात न कोई दुःख की ।।
गीत तुम्हारे क्या हैं, दर्पण प्यारे नटनागर के।
शत-शत तुम्हें नमन ओ, स्रष्टा अमृत के सागर के ।।

श्री सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश' सूर की भाषा-मधुरिमा, भाव-विभोरता, दास्य-भक्ति आदि का मूल्याङ्कन करते हुए उनका महत्त्व व्यक्त कर रहे हैं—

मही पर स्वर्ग तुम्हीं से आया।
हार खिलाई मनमोहन को उनको सखा बताया।
कलित ललित ब्रजभाषा द्वारा जग को अमृत पिलाया।
विश्व विदित सागर रच सुन्दर सबको सुलभ बनाया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूर तनिक माखन-हित तुमने हरि को नाच नचाया।
रहित विलोचन उर लोचन का करतब खूब दिखाया।
दास्य भाव भाया न तुम्हें प्रिय सख्य भाव अपनाया।
सरस तुम्हारे उर-सितारे ने प्रेम-सुधा बरसाया।।

श्री रामस्वरूप अवस्थी 'रूप' सूर की प्रज्ञा-संबलित भक्ति, रस-विभोरता, सृजन-शक्ति और मधुर प्रेम की सुन्दर झाँकी प्रदर्शित करते हैं—

व्यर्थ विवाद-रुनुकता अथवा सीही वाला।
प्रज्ञाचक्षु कि चक्षु संबलित, सन्त निराला।
'अष्टछाप' का भक्त भाव-रत्नाकर गहरा।
जन-मानस आनन्द-दोल-दोलित हो लहरा।।
शान्ति, सहज ऋङ्गार, विमल वात्सल्य त्रिवेणी।
मिली 'सूरसागर' में, निरूपम नवल निश्रेणी।।
प्रति गृह के प्रति अजिर श्याम लीलाधर विहरे।
मुक्त कंठ के गीत अवनि अंबर में छहरे।।
राधा-बल्लभ सुहृद, देव-दुर्लभ सुख भोगी।
वसुन्धरा में अमर, 'सूर' साकार संयोगी।।

डाक्टर लक्ष्मीशङ्कर मिश्र 'निशङ्क' राधा-कृष्ण की उपासना, काव्य-मधुरिमा और दिव्य-दृष्टि जैसे गुणों की याद दिलाते हुए सूर महत्ता का गायन कर रहे हैं—

वहिनंद के लाल को बाँसुरी की, लहि माधुरी राग नये करिगो।
वृषभानु लली की स्नेह सुधा को, सँवारि कै गीतन मैं भरिगो।।
ब्रजभूमि की केलि-कला के अनंद सों, दीनता के दुख को दरिगो।
बिनु आँखिन ही अँसुवान के नीर सों, काव्य के सागर को भरिगो।।

श्री भैरवदत्त शुक्ल की दृष्टि में सूर ने गोप-ग्वालों की लीलायें, मुरली-स्वर, भ्रमर-गीत और विविध असुरों की संहार की कथायें सुनाकर कोमल भावनाओं, एकता, दार्शनिकता, वेदना, आसुरी बल की पराजय, सत्य की जय और श्याम के गुणगायन की छटा दिखाई है—

गोपियों में विश्व की सद्भावनाओं को बसाया;
गोप-ग्वालों के बहाने, एकता का गान गाया;
छेड़ मुरली की कथायें, दार्शनिकता को जुहारा;
गा भ्रमर का गीत, पावन पीर का परिसर सजाया;
आसुरी बल की पराजय ही दिखा प्रत्येक पद पर;
सत्य का जयगान गाया श्याम के गुणगान में!
सूर तुमने ही सखापन, पा लिया भगवान में।।

ऊपर विवेचित काव्यांशों के माध्यम से आधुनिक हिन्दी-कवियों ने सूर के विषय में जो कुछ कहा है, उससे श्रद्धामयी पुलक, आस्थामयी निष्ठा, चित्रांकन युक्त काव्य-प्रतिभा और शब्द गुंफनवती क्षमता का पूरा-पूरा पता लगता है। साथ ही उन सबको मिलाकर सूर का व्यक्तित्व भी झलकने लगता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सामाजिक-विषमता-विषयक लोक गीत

(श्री गौरीशङ्कर द्विवेदी 'शङ्कर', शंकर निवास झांसी)

मानव-हृदव की कोमल से कोमल और सूक्ष्म से सूक्ष्म भावनाओं का मर्मलोक-गीतों में मिलता है। महाकवियों की कविताओं की भाँति उनमें अलङ्कार, यमक, श्लेष, व्यंजना, रूपक और अन्य शाब्दिक-चमत्कार नहीं होते किन्तु सीधी-सरल-भाषा में हृदय के उद्गार, स्वाभाविक-रस और प्रचुर-माधुर्य लिए हुए इस प्रकार निकलते जाते हैं कि उनको सुन कर जन-जन मुग्ध हो जाया करते हैं। भारतीय-संस्कृति का जीता-जागता प्रतिबिम्ब लोक-गीतों में ही मिलता है।

लोक-गीत अपौरुषेय माने गए हैं, उनका प्राचीन काल से ही समाज पर प्रभाव रहा है। अपने रस-माधुर्य, स्पष्ट स्वरूप, और भाषा-भाव की अकृत्रिमता के कारण ही वे युग-परम्परा से मानव-समाज में प्रचलित चले आ रहे हैं और भविष्य में भी जीवित बने रहेंगे इसमें संशय नहीं।

काश्मीर से कन्या कुमारी तक और गाँधी-धाम से पुरी तक समूचे देश में लोक-गीतों का एक समान आधिपत्य है। कितने ही गीत तो थोड़े-बहुत हेर-फेर के साथ सर्वत्र एक समान ही गाए जाते हैं और मानवों की आंतरिक-भावनाओं को व्यक्त करते हैं।

जन्मोत्सव के शुभ अवसर पर गाया जाने वाला गीत 'सोहर' कहलाता है। यह गीत आगन्ने (सन्तान के आगमन) अर्थात् जन्म से एक दो मास पूर्व ही गाया जाने लगता है। पश्चात् प्रसव-पीड़ा, जन्म और मुण्डन होने तक में उन गीतों को गाया और सुना जाता है। इन गीतों में सामाजिक कुरीतियों और विषमताओं पर कितनी करारी चोट की गई है वह विचारणीय है।

अवध में प्रचलित एक सोहर-गीत का भाव है :—

(पुत्री कहती है) जिस उदर से भैया का जन्म हुआ है
उस ही उदर से मेरा जन्म हुआ है
भैया के जन्मोत्सव पर माता जी ने सोहर गवाए थे
(किन्तु) मेरे जन्म पर चुप्पी साध ली थी
भैया के जन्म पर माता जी ने उत्सव किए थे
(किन्तु) मेरे जन्म पर वे चुपचाप ही बनी रहीं
हम ने तब ही समझ लिया था कि माता जी
मुझको घर में न रक्खेंगीं। (वे मेरा) देश
निकाला ही करेंगी।

यथा:— जौनीं ओदरिया सें भैया जनम लें, ओही सें जनम हमार रे।
भैया जनम ले माई सोहर गवाऊ, हमरे जनम ले चुप साध रे।
भैया जनम ले माई गोतिन नेउत, हमरे जनम ले चुप साध रे।
तबै हम जाना माई हमें न रखिहैं, करिहैं देसवा निसार रे।

एक दूसरे गीत में पुत्री कहती है कि घर का सब साज सामान तो भैया के लिए ही है, मेरे भाग्य में तो विदेश जाना ही लिखा है।

यथा:— भैया को लीखल भावा बाबा का रजिया, हम को लिखल परदेस रे।

इस गीत की भावनाओं से मिलता-जुलता गीत बुन्देल खण्ड, उत्तर प्रदेश और समूचे मध्य-प्रदेश में गाया जाता है।

यथा:— कौना कौं दै दईं बाबुल मड़ा-अटारी, कौना दई परदेस, मोरे लाल ?
बीरन कौं दै दईं बाबुल मड़ा-अटारी, बेटी दई परदेस, मोरे लाल ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय संस्कारों में पाणि-ग्रहण-संस्कार को विशेष महत्व प्राप्त है। विवाह का प्रारम्भ, दोनों ही घरों में (वर और कन्या पक्ष) शुभ माना जाता है, उससे घर-घर में आनन्द का सागर उमड़ता हुआ-सा जान पड़ता है, प्रत्येक अवसर के भाव-पूर्ण गीत गाए जाते हैं। वर-पक्ष वाले जब बरात लेकर कन्या-पक्ष के दरवाजे पर पहुँचते हैं तब कन्या-पक्ष वाले उन सब का भरपूर स्वागत करते हैं और वर का विशेष-पूजन। बुन्देलखण्ड, मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश में उसको द्वारचार अथवा टीका कहते हैं। इस अवसर पर कन्या-पक्ष के दरवाजे पर घोड़े पर सवार होकर वर पहुँचता है—कन्या-पक्ष वाले जब उसका पूजन करते हैं तब मधुर-कण्ठ से नारियाँ जो गीत गाती हैं उसको सुनकर हृदय गद्गद हो उठता है और भावुक व्यक्तियों की तो आँखें तब गीली हो जाती हैं।

वह गीत है:— कोट नवै, परवत नवै, सिर नवै न नवायें,
उन कौ माथौ जब नवै, जब साजन आयें।

अथवा—पुरुष नवै बड़-भागिया, घर साजन आयें नारि नवै गुन आगरी, सुत-सुन्दर पाय।
रूख नवै उपकारिया, फल-फूलहिं पायें, चतुर नवै गुन-ग्राहकी, सद् विद्यई पायें।

पंजाब-प्रदेश में घर से पुत्री को बिदा करते समय जो गीत गाया जाता है, वह भावनाओं में बहुत कुछ उक्त गीत से ही मिलता-जुलता है। ये गीत दोनों पक्षों का हृदय किस सीमा तक द्रवित कर देते हैं इसको भुक्त-भोगी ही भली प्रकार अनुभव कर सकते हैं। इस गीत का भावार्थ होता है :—

न झुकने वाले, ऊँचे पर्वत की चोटियों के समान,
तेरे पिता को विनम्र ही झुकना पड़ा, किस के लिए ?
बेटी ! तेरे लिए।
भीतर तेरी माता, जिसने जन्म दिया है, रो रही है,
और बाहर तेरे पिता के नेत्रों से आँसुओं की,
ऐसी झड़ी लगी है जैसे मेह बरस रहा हो।

यथा:— नी परवत निमियो पहाड़ी दा होर, निमियो न काई।
निमियो बेटी तेरा बाबुला, घर बेटड़ी हो गई॥
अंदर बीवी दी माँ रोवै, बाहर रोवै लोकाई।
बीवी दा बाबुला अंज रोवै, जिद्दी इन्द्र बरखा लाई॥

इस प्रकार के और भी कितने ही गीत हैं किन्तु उन सब का उल्लेख कर सकना यहाँ संभव नहीं।

उक्त भावनाएँ केवल एक-दो पक्षों, एक-दो प्रदेशों या एक-दो पुत्रियों की ही नहीं हैं वरन् समूचे राष्ट्र के नारी-समाज की हैं जो युग-परम्परा से काश्मीर से कन्याकुमारी तक और गाँधी-धाम से पुरी तक विविध लोक-गीतों के रूप में विद्यमान हैं। उनके द्वारा शोध करने वालों को विविधता में एकत्व-भावना के भली प्रकार दर्शन हो जाते हैं।

राष्ट्र का यह प्रचलित श्रवण-ज्ञान एकत्र होकर भली प्रकार प्रकाश में आ सके तो राष्ट्र-भाषा-हिन्दी का अधिक हित हो। राष्ट्र-भाषा-हिन्दी तब तक बलवती नहीं बन सकती जब तक कि उस में लोक-साहित्य का समावेश नहीं किया जाता, वह तब ही सर्व प्रियता प्राप्त कर सकती है जब उसको जन-जन की भाषा बनाकर हर दिशा में समर्थ बना दिया जाएगा। इस ओर रुचि रखने वाले महानुभाव इस पर और भी प्रकाश डालें तो उत्तम हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लोकवार्ता में—

अहोई आठें

(श्रीउमाशङ्कर दीक्षित, एम० ए०, साहित्य रत्न)

नन्द भौजाई मिलिकें खदाने में ते मट्टी खोदिवे गईं। मट्टी खोदत में नन्द पै स्याग्रो मैय्या के चिकुली-चिकुला (बच्चा) कट गये। स्याग्रो नें नन्द कूँ पकरि लयौ और बोली-कै तैनें मेरे बच्चान कूँ काट दयौ है तू मोकूँ अपनी कूँख दै। बाकी सात भौजाई हती उनमें ते सातइ भौजाई नें स्याग्रो ते कही—"मैय्या ! जाकी कूँख मति लै, जि तौ पराये घर की है। जाकी बदली मेरी कूँख लैलै।

तब ते सातई भौजाई के बच्चा होंय और मरि-मरि जाँय। बाकी की छै भौजाईन कें तो खूब सुख हो उनके बेटा-बेटी खूब खेलते कूदते रहते और जाकें बिचारी कें बड़ों दुख रहतौ। बु जाकूँ रात दिना ताहिने मार्‌यौ करतीं—"जा और दिया अपनी कूँख, पराई जाई से पीछें।" बाकूँ ऐसें दुखी देखि कें काऊ परोसिन नें वाय एक उपाय बतायौ कै कातिक लगत जो आठें आवै है बाकू 'अहोई आठें' कहें हैं सो तू बाकौ बर्त रहिये। बाकौ वर्त सुख सुहाग और सन्तान कूँ दैवे वारौ है। बाके करिवे तें तेरे सब दुख दूर है जामिगे। बा दिना तेरे य्हाँ अहोई माता आवैगी तू बाके मूड़ के डींगर (जुपाँ) देखिवे लगि जइयो। बाके सुख हैवे ते बु तोकूँ सब कछू दै जावैगी।"

कातिक लगत आठें आई। बानें लीप पोत कें भीति पै चन्दा तारे बनाये और स्याग्रो माता की मूर्ति काढ़ी। दिन भर निर्जला वर्त राख्यौ। संजा कूँ अहोई माता बुढ़िया के रूप में आई। वाय खूब भोजन कराये और फिर बाके डींगर देखिवे बैठि गई, गोद में अपनौ हाल ही कौ पैदा भयौ छोरा हू डारि लयौ। बीच-बीच में बा छोरा कूँ नौंच देइ करै। जाते बु छोरा जोर-ज़ोर ते रोवन लगै। अहोई माता बोली—"चौं बहू जि लाला काये कूँ रोइ रह्यौ है ?" बहू ने कहीं—जापै पैंहरिवे, ओढ़िवे और बिछाइवे कूँ कपड़ा-लत्ता नाँहि ताते रोइ रह्यौ है। तो बुढ़ियाँ ने अपने कान में ते एक रूई की फुरफुती निकासि कें आँगन में फेंक दई। सोई वहाँ तौ बढ़िया-बढ़िया कपड़ान कौ ढेरि लग गयौ। थोरी देर पीछै फिर बहू ने बालक कूँ नौचि दयौ। तौ बालक फिर रोमन लग्यौ। बालक कूँ रोमत देखि कें फिर अहोई नें पूछी—बहू अब काये कूँ रोवै है ? बहू बोली—कै मैय्या जि अकेलौ है जाकें और कोई मैय्या-बहन नायें वाते रोवै है। अहोई मैय्या नें अपने कान ते दूसरी फुरफुरी निकारि कें फेंक दई सोई बाके सगरे बालक जो मरि गये बु सब आँगन में खेलने लगे। बहू ने फिर अपने बालक कूँ नौंच दयौ—फिर अहोई नें पूछी कें अब काहे कूँ रोवै है। बहू बोली कै जि तुम्हारी कान की फुरफुती के ताईं मचलि रह्यौ है। अहोई नेबाय अपने कान की फुरफुती हू दै दई। सोई बाकें सकल सिद्धनवौ निद्ध है गईं। बड़े-बड़े महल चौवारे बनि गये। खूब धन दौलत है गयौ। अहोई माता की दया ते बाकें सब आनन्द है गये। जैसी अहोई मैय्या बाकें पहिलें आईं वैसी काऊ कें मति अइयो और जैसी पीछें आई वैसी सब काऊ कें अइयो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पत्र-पत्रिका समीक्षा

(श्री वृन्दावनदास)

हिन्दी-स्मारिका—प्रकाशक हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग

माननीय सेठ गोविन्ददास जी की प्रेरणा और श्री मौलिचन्द शर्मा के सत्प्रयासों के परिणामस्वरूप प्रकाशित यह पत्रिका हिन्दी जगत के सम्मुख हिन्दी की कतिपय शीर्षस्थ संस्थाओं के इतिवृत्त को प्रस्तुत करती है। इन सस्थाओं से सम्बन्धित इसमें प्रचुर ज्ञानवर्द्धक सामग्री विद्यमान है। अब तक इन संस्थाओं के क्रिया कलाप का लोगों को पूरा ज्ञान उपलब्ध न था। नई बातों को जानकारी से हिन्दी प्रेमियों को विशेष लाभ होगा। सम्मेलन द्वारा आयोजित परीक्षाओं और उसके महत्वपूर्ण प्रकाशनों का लेखा जोखा, नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हिन्दी विश्वकोष का विवरण तथा हिन्दी साहित्य के वृहत्इतिहास की पूर्व सूचना और राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्द्धा का देश व्यापी हिन्दी-प्रचार सङ्गठन आदि का बड़ा सुन्दर और विशद वर्णन है। विद्वानों द्वारा अन्य लेख भी हिन्दी की देश विदेशों में गति विधियों पर प्रचुर एवं विश्लेषणात्मक प्रकाश डालते हैं। डा० विजयेन्द्र स्नातक का अनुसन्धान पर एक बहुत ही विद्वत्तापूर्ण लेख है। डाक्टर स्नातक ने अपने लेख में हिन्दी के वर्तमान शोध प्रबन्धों की दयनीय स्थिति पर तथ्यसमन्वित अध्ययन प्रस्तुत किया है। उन्होंने पुनरावृत्ति दोष से मुक्ति पाने के हेतु कुछ अत्यन्त मौलिक सुझाव भी दिये हैं जैसे हिन्दी शोधार्थियों द्वारा विदेशों के साहित्य की विधाओं या हिन्दी शोध-प्रबन्धों का प्रस्तुतीकरण।

यदि स्मारिका के आयोजकों की प्रार्थना पर हिन्दी की अन्य संस्थायें भी अपना वृत्त प्रकाशनार्थ भेज कर सहयोग प्रदान करतीं तो स्मारिका का आकार बढ़ सकता था और वह और भी व्यापक बन सकती थी। फिर भी स्मारिका बहुत अच्छी रही। सम्मेलन का प्रयास अभिनन्दनीय है।

विश्व भारती—चैत्र-ज्येष्ठ, २०२४ संपादक श्री रामसिंह तोमर

प्रकाशक हिन्दी भवन शान्ति-निकेतन (पश्चिम बंग)

यह शान्ति-निकेतन के हिन्दी भवन की साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी त्रैमासिक पत्रिका है। विश्वभारती पत्रिका विश्वभारती शान्ति-निकेतन के तत्वावधान में प्रकाशित होती है। इसमें लेखों का चयन भव्य है। "कालिदास द्वारा वर्णित इन्दुमती स्वयम्बर" शीर्षक लेख बड़ा सुन्दर है। इस लेख की विषय सामग्री अनेक विविधताओं में भारतीय एकता का बड़ा सुन्दर चित्र प्रस्तुत करती है। महाकवि ने स्वयम्वर के वर्णन के मिस से प्राचीन भारतीय राज्यों की भौगोलिक सीमायें अति सुन्दर ढंग से वर्णित की हैं। प्रवीण राय पातुर और उनका काव्य शीर्षक लेख केशवदास की कवि-शिष्या अथवा काव्य-प्रेरणा रूप प्रवीणराय जो ओरछा के कुंवर इन्द्रजीतसिंह की प्रेयसी थी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर है। इस लेख में कवयित्री प्रवीण पातुर पर अम्लय सामग्री निहित है। इस कवयित्री पर अद्यतन ऐसा सुन्दर लेख देखने में नहीं आया। अन्य लेख भी पठनीय एवं ज्ञानवर्द्धक हैं। संपादक महोदय श्री तोमर लेखों के सुन्दर चयन के लिए बधाई के पात्र हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी सम्पूर्ण बचत आज ही

उत्तर प्रदेश कोअपरेटिव बैंक लिमिटेड

प्रधान कार्यालय लखनऊ में

जमा कर अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कीजिये

उक्त बैंक सहकारी आन्दोलन के अन्तर्गत सरकारी साझेदारी तथा बैंकिंग संस्थान अधिनियम के अन्तर्गत सरकार द्वारा निरीक्षित एक मात्र एवं विश्वसनीय बैंकिंग संस्था है

शाखाएँ — आगरा, अल्मोड़ा, बरेली, फैजाबाद, डी० ए० वी० कालेज कानपुर, गोंडा, पीलीभीत, कानपुर, रामपुर, सीतापुर, वाराणसी।

क्षेत्रीय कार्यालय — आगरा, गोरखपुर, कानपुर, बरेली।

हमारी विशेषताएँ

१—राज्य की समस्त कृषि योजनाओं के लिए जिला एवं केन्द्रीय सहकारी बैंकों के माध्यम से आर्थिक सुविधाएँ प्रदान करना।

२—प्रत्येक प्रकार की बैंकिंग सुविधायें प्रदान करना।

३—अल्प सामयिक एवं मियादी अमानतें आकर्षक दरों पर स्वीकार करना।

आप भी राष्ट्र निर्माण योजनाओं की पूर्ति, उसकी स्मृद्धि के निमित्त अपना धन लगाकर सहयोग प्रदान कर राष्ट्र निर्माण में हाथ बटाएँ।

अन्य जानकारी

क्षेत्रीय अधिकारी, शाखा प्रबन्धक या मुख्य कार्यालय से प्राप्त कीजिये

गत ५ वर्षों में बैंक की प्रगति के कुछ आंकड़े

	३०-६-६०	३०-६-६५
१—पूँजी	२५४·७६ लाख	५३८·७६ लाख
२—अमानतें	७४७·४६ लाख	२०६०·०८ लाख
३—सहकारी संस्थाओं को ऋण दिया गया	१३०५·९५ लाख	३३३६·२५ लाख
४—लाभ	१६·०५ लाख	३७·०२ लाख

ए० पी० सिंह
आई० ए० एस०
अध्यक्ष

मथुरा सिंह
उपाध्यक्ष

धीर सिंह वर्मा
सामान्य प्रबन्धक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसानों के लिए स्वर्ण अवसर

यानमार पावर टिलर

(पी० के० ए० २० एन० टी० ९५ के०)

(७–१०·५ अश्व शक्ति का)

प्रयोग कर

कृषि उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि का महत्वपूर्ण साधन

छोटे किसान के लिए ट्रैक्टर जो संसार प्रसिद्ध १०·५ बी० हा० पा० यानमार डीजल इञ्जिन एवं निम्न उपयन्त्रों से युक्त है :–

न्यूमैटिक रबर ह्वील्स, राटार टिलर स्टैण्डर्ड ट्रल किठ माउन्टेड डीजेल इञ्जिन यानमार माडेल एन० टी० ९५ के० आयरन ह्वील्स वाटर फिल्ड राइडिंग लापरेट्स सेडल तथा न्यूमैटिक रीयर ह्वील एक्स्टेंशन ऐटरी तथा कवर, स्वायल हीपिंग बोर्ड लाइट इक्विपमैन्ट डावनेमों के साथ दो साइड राइडर टीम स्पेशल रौटरी ब्लेड्स, ड्रम के साथ, फोर्क राटार टाइन्स तथा दो स्टैग प्लाड।

किसानों के कृषि सम्बन्धी प्रत्येक कार्य जुताई, हेंगाई, पटेला पानी निकालना व छिड़काब आदि।

विशेष जानकारी के लिये–कृपया सम्पर्क स्थापित करें :–

उत्तर प्रदेश

कोआपरेटिव फैडरेशन लिमिटेड,

६ कैपर रोड, लखनऊ।

(उत्तर प्रदेश के लिये एकमात्र वितरक)

फोन नं० : २४८५२, २५८६४, २३५६३, २७७६०, २८०३३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

* दीपावली मंगलमय हो *

आज का यह पावन प्रकाश पर्व प्रेरणा-प्रदान करता है
जन-जीवन को स्वच्छ एवं निष्कलंक बनाने की
आइये
दीपों की इस झिलमिल ज्योति में

हम संकल्प करें :

- उत्पादन में वृद्धि करने का
- परिवार को छोटा और नियोजित बनाने का
- बचत का धन राष्ट्र निर्माण में लगाने का
- नागरिक सुरक्षा योजना को सफल बनाने का
- भ्रष्टाचार और साम्प्रदायिकता के जहर को निकाल फेंकने का

विज्ञापन संख्या ४-सूचना विभाग उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

उत्तर प्रदेश सरकार आह्वान करती है

उन्नीसवें गणतंत्र दिवस के पुनीत पर्व पर

अन्न में आत्म निर्भरता, उत्पादन में वृद्धि;
साधनों के विकास के लिए
किसान, मजदूर, बुद्धिजीवी वर्ग सभी लगन और उत्साह से
कठिन परिश्रम के साथ-साथ राष्ट्रीय बचत योजनाओं में
अधिक से अधिक योगदान तथा
परिवार कल्याण नियोजन विधियों को अपनाकर
विकास कार्यों में तेजी लाएँ और नये समाज की रचना में
सहायक बनें।

सूचना विभाग उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१-हमारे जवानों के शौर्य ने शत्रु के मनसूबे धूल में मिला दिए।
२-हमारे यहाँ बने हथियारों के सामने अमरीकी हथियार कामयाब न हो सके।
३-हमें अपने को अन्नोत्पादन में भी आत्म निर्भर होना है।
४-अमरीका या अन्य देशों का मुँह ताकना धोखा दे सकता है।

देश का हर व्यक्ति राष्ट्र की इस सबसे बड़ी समस्या में अपना योग दे सकता है। जिला सहकारी बैङ्क में अपना धन आप जमा करें जहाँ वह पूर्ण सुरक्षित है, ब्याज दूसरे बैङ्कों से आपको ज्यादा मिलेगा और किसानों के अन्नोत्पादन के कार्य में आपके धन का उपयोग होगा।

जिला निवासियों के लिये हमारी शुभ कामनाओं के साथ हम आशा भी करते हैं कि आप अपने ही सहकारी बैंक को अपनाकर अपना तथा इस बैंक का और अपने राष्ट्र का सदैव हित करेंगे।

ब्याज की दरें

सेविंग खाता पर	४	प्रतिशत वार्षिक
कौल डिपौजिट पर	३।।।	,, ,,
६ माह की अमानत पर	५।।	,, ,,
१ साल की अमानत पर	६।	,, ,,
२ साल की अमानत पर	६।।	,, ,,
३ साल की अमानत पर	६।।।	,, ,,
४ साल की अमानत पर	७	,, ,,
५ साल की अमानत पर	७।	,, ,,
७ साल की अमानत पर	७।।	,, ,,

मथुरा जिला सहकारी बैंक लि०, मथुरा

बाबू वृन्दावनदास अध्यक्ष ब्रज साहित्य मण्डल, के लिए राष्ट्रीय प्रेस, डेम्पियर नगर, मथुरा में मुद्रित तथा प्रकाशित।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

फाल्गुन सं० २०२४ वि०

सम्पादक :
श्री वृन्दावन दास
बी० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक :
श्री किशन प्रसाद जैन
संयुक्त प्रधान मन्त्री

अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा

वर्ष २१] वार्षिक मूल्य ४) [अङ्क ४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

❀ अनुक्रमणिका ❀

क्र.सं.	लेख	लेखक	पृ.सं.
१	सम्पादकीय	.... श्री वृन्दावनदास	१
२	जन्मान्तर (ब्रजभाषा अनुवाद)	... बा० श्यामसुन्दर खत्री	३
३	कवीन्द्र के जन्मान्तर का ब्रजभाषानुवाद	... श्री अमृतलाल चतुर्वेदी	४
४	जन्मान्तर (पद्यानुवाद)	... बा० श्यामसुन्दर खत्री	४
५	स्वर्गीय पं० हरिशंकर जी के जीवन पर संस्मरण	... श्री वृन्दावनदास	६
६	ब्रजभाषा साहित्य का व्यापक प्रभाव	... डा० हरवंशलाल शर्मा डी.लि.ट्	९
७	ब्रज साहित्य में वसन्त और होली वर्णन	.... ज्यो० राधेश्याम द्विवेदी	१२
८	ब्रज प्रदेश के लोक कवि : रामकुमार शर्मा	.... श्री श्रीराम शर्मा एम० ए०	१६
९	होली फाग	... श्री राम भरोसे हयारण 'अभिराम'	२०
१०	देवकाव्य में नारी-सौन्दर्य का चित्रण	... श्रीमती डा० राज बुद्धिराजा	२१
११	बिहारी सतसई की रचना	... डा० वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी पी-एच० डी०	२३
१२	भारतीय इतिहास में वाकाटक वंश	.... श्री वृन्दावनदास	२६
१३	वसन्त लतिका की अपूर्ण प्रति	... श्री अगरचन्द नाहटा	३०
१४	विचार परिचर्या	.... श्री मोहनलाल शर्मा एम०ए०	३३
१५	ब्रजभाषा साहित्य सम्मेलन, कुछ प्रश्न	... डा०सुधेश, वृन्दावन	३४
१६	हिन्दी की 'से' विभक्ति	... श्री किशोरीदास बाजपेयी	३६
१७	पत्र व्यवहार	.... डा० अम्बा प्रसाद सुमन	३७
१८	"	... श्री रामनारायण उपाध्याय	३८
१९	"	... श्री रवीन्द्र	३९
२०	"	... पं० बनारसीदास चतुर्वेदी	४१
२१	ग्रन्थावलोकन	... श्री राजेन्द्र रञ्जन एम० ए०	४३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

[अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य-मण्डल की मुख-पत्रिका]

वर्ष २१] मथुरा फाल्गुन सं० २०२४ [अङ्क ४

सम्पादकीय—

अब की बार फाल्गुन अङ्क ब्रज कोकिल कविरत्न सत्यनारायण अर्द्धशताब्दि समारोह के शुभ अवसर पर निकल रहा है अतः सर्वप्रथम समारोह के सम्बन्ध में ही कुछ चर्चा करना आवश्यक है।

कविरत्न अर्द्ध शताब्दि समारोह

इस समारोह के प्रति कार्य-कर्ताओं में स्फूर्ति और प्रेरणा उत्पन्न करने का श्रेय सम्पूर्णतः श्रद्धेय बनारसीदास जी चतुर्वेदी को है। उन्होंने इस विषय में महिनों पहिले सर्व प्रथम मुझको और पं० देवीप्रसाद दिव्य को पत्र लिखे। जैसे ही हम दोनों ने परस्पर वार्तालाप शुरू किया पं० रमेश-चन्द्र जी दुबे भी हमारी सहायतार्थ स्वयं ही आये। बस फिर क्या था? समिति बनी और बड़ी लगन के साथ कार्य होने लगा। सर्वश्री राजेन्द्र रघुवंशी, सूर्यपालसिंह जी तोमर, हृषीकेश जी चतुर्वेदी, अमृतलाल जी चतुर्वेदी प्रभृति सज्जनों का भी निरन्तर सहयोग प्राप्त हुआ। श्री रमेश-चन्द्र जी दुबे स्वयं ब्रजभाषा साहित्य के मर्मज्ञ और उच्चकोटि के कवि हैं। अतः समिति ने प्रस्ता-वित कविरत्न स्मृति ग्रंथ के लिए उनको ही संपादक मनोनीत किया। श्री दुबे ने बड़े मनोयोग से कविरत्न के स्मृति ग्रंथ का संपादन किया है। उन्होंने हर प्रकार से हमारी बड़ी मदद की है। कविरत्न की स्थायी कीर्ति रक्षा तथा ब्रज-साहित्य के उन्नयन की दिशा में अभी हम को उनसे और भी बहुत-सी आशाऐं हैं। पं० देवीप्रसाद जी दिव्य तो साहित्यिक क्षेत्र के अनुभवी कार्यकर्ता हैं ही। प्रधानमन्त्री की हैसियत से समारोह के तो वे प्राण ही हैं। श्री राजेन्द्र जी रघुवंशी ने समारोह के सांस्कृतिक पक्ष को सम्हाल लिया है। हमें पूर्ण विश्वास है कि साहित्यिक बन्धुओं का यह प्रयास सर्वथा सफल होगा।

इसी अवसर पर त्रिदिवसीय कार्यक्रम के अन्तर्गत कुंवर हनुमन्तसिंह शताब्दि समारोह तथा महाकवि ग्वाल पुण्य शताब्दी समारोह भी मनाये जा रहे हैं। पत्रिका के आगामी अङ्क में समारोह का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जायगा।

अन्तर्जनपदीय कार्यक्रम

हिन्दी को समृद्ध बनाने के लिए अन्तर्जनपदीय कार्य का महत्व स्वयं-सिद्ध है। नवीन परिस्थितियों के संदर्भ में वे ही कार्य देशहित और जनहित में समझे जावेंगे जो देश में एकता की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भावना उत्पन्न करें। पृथक्तावादी दृष्टिकोण विघटनात्मक प्रवृत्तियों को जन्म देता है अतः त्याज्य है। कभी-कभी स्वत्वों की रक्षा के लिए हमें प्रचारात्मक आन्दोलन करना पड़ता है परन्तु उस आन्दोलन से यदि जनसमूह के विभिन्न वर्गों में मनोमालिन्य उत्पन्न हो तो हमें उससे भी विमुख होना पड़ेगा। सौहार्द की स्थापना देश और समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। आन्दोलनात्मक पद्धति को यदि हम थोड़े दिन के लिए स्थगितकर हिन्दी के लिए रचनात्मक कार्य करें तो यह हिन्दी की अनुपम सेवा होगी। हमें हिन्दी के भण्डार को निरन्तर भरना है। हमें अपने श्रम, अध्यवसाय और सहयोगात्मक वृत्तियों से ऐसी स्थिति उत्पन्न कर देनी है जिसमें हिन्दी को कोई ऐसी भाषा न बता सके जिसमें अनेक कमियाँ हों। यदि हिन्दी भाषी राज्यों में हिन्दी को उसका उचित स्थान मिल जाय तो वह दिन दूर नहीं रहेगा जिसको अहिन्दी क्षेत्रों के लिए भी हिन्दी अनिवार्य हो जायगी। अन्तर्जनपदीय कार्य ही एक ऐसा अमोघ अस्त्र है जिससे हम हिन्दी को विश्वविजयिनी बना सकते हैं, भारत की तो बात ही क्या है। हिन्दी की १७ बोलियों अथवा उपभाषाओं में अपार लोक-साहित्य है, इसी प्रकार भारत की अन्य चौदहों भाषाओं का अपना-अपना लोक-साहित्य है। विद्वज्जन यदि इस विशाल वाङ्मय का आलोड़न कर अनुवादों और शब्द-सङ्कलन से हिन्दी के भण्डार को भरपूर करें तो विश्व में हिन्दी का कोष अप्रतिम होगा। अन्तर्जनपदीय परिषद की स्थापना तो होनी ही चाहिये।

स्वर्गीय पं० हरिशङ्कर जी शर्मा

प्रातः स्मरणीय डाक्टर हरिशङ्कर जी शर्मा का आकस्मिक निधन हिन्दी जगत की महान् दुर्घटना है। हमने प्रस्तुत पत्रिका में एक स्वतन्त्र लेख के माध्यम से अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। हम ब्रजभारती का अगला अङ्क स्वर्गीय पण्डितजी के स्मृति अङ्क के रूप में प्रकाशित करेंगे। पण्डितजी के मित्रों, प्रशंसकों के रूप में विद्वानों से अनुरोध है कि पण्डित जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अपने लेख संस्मरण आदि हमें शीघ्र से शीघ्र भेजें। पण्डित जी की महान सेवाओं का हिन्दी-जगत अत्यन्त ऋणी है। उनका उपयुक्त स्मारक बना कर ही हम उस ऋण से मुक्त हो सकते हैं। पण्डित जी का स्मारक क्या हो! इस पर हम विद्वानों के सुझावों की अपेक्षा करते हैं। पण्डित जी का एक अच्छा स्मारक बनाने के हेतु मेरे संयोजकत्त्व में एक समिति का निर्माण हो चुका है। क्या आगरा महापालिका का यह पुनीत कर्तव्य नहीं है कि वह अपने इस विशिष्ट स्वर्गस्थ नागरिक के सम्मान में उसकी स्मृति रक्षार्थ एक सड़क, एक पुस्तकालय किंवा किसी एक चिकित्सालय का नाम पण्डित हरिशङ्कर जी के नाम पर रख दें। स्मारक समिति शीघ्र ही अपने सुझाव प्रस्तुत करेगी।

प्राप्ति-स्वीकृति

हमें लगभग ५० पुस्तकें प्रख्यात साहित्यकार श्री महेन्द्र जी से और बाबा कृष्णदास कुसुमसरोवर गोवर्द्धन (मथुरा) वालों से उनके प्रकाशनों की एक-एक प्रति मण्डल के पुस्तकालय के लिए प्राप्त हुई हैं, अतः हम उपरोक्त दोनों महानुभावों के प्रति मण्डल की ओर से कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

—वृन्दावनदास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जन्मान्तर

मूल लेखक-कवीन्द्र रवीन्द्र
(ब्रजभाषा अनुवाद—बा० श्यामसुन्दर खत्री)

त्यागिबे कों हौं तयार अबै द्युतिमन्त सु-सभ्यता को नव दीपक,
चाह न मोंहिं बनौं नव बंग में नव्य-युगान्तर को परिचालक;
जैहौं न लन्दन, पैहों न खिल्लत, का घटि है, मोहिं सोच न रंचक,
जो परजन्म में होहुँ कहूँ ब्रजमंडल को कोउ गोप को बालक ।।

जे नित वंशीवटाश्रय जाय कै नेम ते प्रेम ते धेनु चरावैं,
गुंजन की वहु माल बनाय कै आपुस में पहिरैं पहिरावैं;
कुंजन में बिँदरावन के मुरलीधर की मुरली सुनि पावैं,
शीतल श्याम कलिन्दजा-नीर में धूम मचाय कै कूदि नहावैं ।।

"भोर भयो, जगौ"—टेरि कै जागत और जगावत बाल परस्पर,
गेहन ते ब्रजगोपिन के दधि मंथन की धुनि होत मनोहर;
पंथ चराव के धूलि उड़ावत गो-दल जात चले गति मंथर,
आँगन आँगन गोपबधू पयदोहन काज में होत हैं तत्पर ।।

सावन की घनघोर घटा जबै छावति छाया सु-ताल तमालन,
कूल कलिन्दजा के दुहुँ ओर महातमतोम में डूबत जा छन;
घाटन पै बनिता ब्रज की डरतीं, कँपतीं जे चढ़ी कहुँ नावन,
कानन में सु-कलाप-छटा छहरावत नाचत मोर सुहावन ।।

फागुन की उजियारी निशा में कलिन्दजा-तीर अशोक के कानन,
जावहिंगे हम बाल सबै मिलि शीश पै मोरपखा करि धारन;
झूलहिंगे हम पेंग बढ़ाय कै डारि हिँडोरे कदम्ब की डारन,
व्योम गुँजाय कै वंशी की तानन, खेल रचावहिंगे मन भावन ।।

नेसुक चाह न मोहिं बनौं नव बंग में नव्य:युगान्तर-चालक;
देश अँधेरो रहै, तो रहै, नहिं मोहिं जरावनो सभ्यता-दीपक;
है जहँ छाँह अशोक-कदम्ब की, माखन-छाछ भरयो जहँ चौचक,
वा थल कौनिहु जन्म में ह्वै सकौं जो पै कोऊ ब्रजगोप को बालक ।।

(रसखान के पदचिह्नों पर भावानुवाद)

—:* *:—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवीद्र के जन्मान्तर का ब्रजभाषानुवाद

(श्री अमृतलाल चतुर्वेदी- एडवोकेट)

नई सभ्यता चमक दमक छाँड़न मैं राजी। चालकता नव वंग नवल युग मोहि न छाजी ।।
कहा भयौ जो देश विलायत गयौ न आयौ। कहा भयौ जो राजा कौ परसाद न पायौ ।।
रे जौ पै पर जनम ग्वाल बालक ह्वै पाऊँ। तो मैं नित घर नई सभ्यता दीप बुझाऊँ ।।
जो वंसीवट तट नित केवल धेनु चरावै । जो गुँगचिन की माल गूँथि पहिरै पहिरावै ।।
जो जन सुचि वृन्दावन के विपिनन वन। सुनत सदा सौ स्याम सुंदर की मृदुल मुरलि धुन ।।
जो जन जमुना स्याम, सीत जल केलि कुदावैं । जो वंसीवट तट नित केवल धेनु चरावै ।।
टेर परस्पर, भयौ प्रात जागौ रे भैया। रे घर घर सुनि परत चलन लागी दधि रैया ।।
देखौ रे, गोचर के मारग गैयाँ आवत। चपल चाल सौं चलति निज खुरन धूरि उड़ावत ।।
आहा, अँगना बीच ब्रज वधू दुहतीं गैया । कहै परस्पर भयौ प्रात जागौ रे भैया ।।
रे, सावन घन स्याम तमाल तरुन धिरि घेरौ। अरे कलिन्दी दोऊ कूलन कियौ अंधेरौ ।।
घाट घाट पै ब्रज ललना हिय माँहि डरावै। पार जात जो नाव चढ़ीं मझधार कँपावै ।।
पूँछ उठाऐं नाचत मोर कुंजन वन हेरौ। रे सावन घन, स्याम-तमाल-तरुन धिरि घेरौ ।।
सिर धरि पुच्छ मयूर नवल फागुन रजनी हम। कहुँ जमुना तट कोउ असोक वन चलै रहैं रम ।।
जब फूलन सों सजी मंजु झूला की डोरी। द्रुम कदम्ब की सुदृढ़ कसि जै है जोरी ।।
जब नभ पूरि पवन-दक्खिन सँग मुरलि गुँजै है। ग्वाल वाल हम सँग जमुन तट मेला ह्वै है ।।
ना भैया, चालकता नव युग वंग न चाहूं। नई सभ्यता दीप न मैं तिन देस जराऊँ ।।
जो कहुँ सह नवनीत दही छैना के गामन। कहुँ असोक औ अम्ब कदम्बन तरु की छाँहन ।।
जो कबहूँ ब्रज जनम ग्वाल वालन मैं पाऊँ। तौ मैं चालक वेग नवल युग होन न चाऊँ ।।

—:* *:—

जन्मान्तर

मूल लेखक कवीन्द्र रवीद्र

(पद्यानुवाद बा० श्यामसुन्दर खत्री)

राज़ी हूँ तज ही देने को नव्य सभ्यता का दीपक,
चाह नहीं नव बंग भूमि में होऊँ नव युग चालक।
क्या क्षति, जाऊँ जो न विलायत,
क्या क्षति, मिले न शाही ख़िलअ़त,
यदि हो पाऊँ अपर जन्म में ब्रज का गोपालक बालक,
तो मैं दूँगा बुझा स्व-गृह में नव्य सभ्यता का दीपक ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो वंशीवट-तले नित्य ही केवल धेनु चराते हैं,
पिरो पिरो गुंजों की माला आपस में पहनाते हैं।
वृन्दावन-वन में पाते सुन,
सदा श्याम की वंशी की धुन,
कालिन्दी के श्यामल शीतल जल में कूद नहाते हैं।
जो वंशीवट-तले नित्य ही केवल धेनु चराते हैं।।

'हुआ सवेरा, जागो भाई',—होती टेर परस्पर है,
घर-घर से दधिमंथन की ध्वनि आने लगती सुखकर है।
मैदानों में गोधन जाते,
चपल खुरों से धूल उड़ाते,
गृहाङ्गनों में ब्रज-कुलवधुएँ पयदोहन में तत्पर हैं।
'हुआ सवेरा, जागो भाई',—होती टेर परस्पर है।।

सावन-घन की छाया ढकती जब श्यामल तमाल आमूल,
हो जाते तब तमतोमावृत कालिन्दी के दोनों कूल।
तट पर ब्रजबालाएँ डरतीं,
तरणी पर वे काँपा करतीं,
वन कुंजो में मोर नाचते उठा कलाप मोद में फूल।
सावन-घर की छाया ढकती जब श्यामल तमाल आमूल।।

नई नई फाल्गुन-रजनी में हम सब नीलनदी-तट पर,
जाएँगे अशोक-उपवन में मोरपंख शिर धारण कर।
पुष्परज्जु झूले की सुन्दर,
कस देंगे कदम्ब-शाखा पर,
जब मलयानिल में गूँजेंगे नभ-व्यापी वंशी के स्वर,
हम सब ग्वालबाल रच देंगे मेला नीलनदी-तट पर।

ना भाई, मुझको न बंग में बनना नवयुग का चालक,
बालूँगा न तमिस्र देश में नव सुसभ्यता का दीपक।
पय-दधि-माखन-भरे गाँव में,
बकुल-अशोक-कदम्ब छाँव में,
किसी जन्म में भी हो पाऊँ यदि ब्रज का बल्लव-बालक,
तो न चाह, नव बंग भूमि में होऊँ नवयुत-परिचालक।।

—*:*:—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्व० पं० हरिशंकर जी शर्मा के जीवन पर संस्मरण

(डा० वृन्दावनदास अध्यक्ष ब्रज साहित्य मण्डल मथुरा)

कविरत्न पद्मश्री डा० हरिशङ्कर शर्मा अपने आप में एक संस्था थे। उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। वे उच्चकोटि के कवि और साहित्यकार तो थे ही महामानव भी थे। उनका निवास-स्थान साहित्यिकों का तीर्थस्थल था। जो साहित्यिक उनसे मिलने जाता उससे वे इतने स्नेह और आत्मीयता से मिलते कि वह आत्मविभोर हो जाता। पण्डित जी के व्यक्तित्व में उसे अपना निकटतम आत्मीयजन प्रतिबिम्बित होता था। पण्डित जी के निश्छल प्रेम की अमिट छाप उसके हृदय पटल पर सदैव के लिए अङ्कित हो जाती थी।

पण्डित जी ने अपने जीवन में महान् कार्य किये। उन्होंने छोटे-बड़े ८१ ग्रन्थ लिखे। अगणित कविताऐं उनके असंख्य मित्रों, प्रशंसकों शिष्यों आदि पर पत्रों के प्रत्युत्तर स्वरूप आशीर्वादात्मक रूप से विद्यमान हैं। उनकी प्रत्येक रचना बड़ी शुद्ध, सरस और मनोहर होती थी। लिखते क्या थे मानो मोती जड़ देते थे। महाजनों के अक्षर इतने सुस्पष्ट और सुवाच्य क्वचित् ही देखने में आये हैं। अवकाशविहीनता में बड़े लोग त्वरालेखन के अभ्यासी हो जाते हैं, परिणामतः उनका लिखना घसीट ही हो जाता है। पण्डित जी इसके अपवाद थे।

पण्डित जी जब वार्तालाप करते अपना हृदय खोलकर रख देते थे। अपने जीवन के संस्मरण तो प्रायः सुनाया ही करते थे। हिन्दी और भारतीय संस्कृति पर वे आपसी वार्तालाप में भी कभी आँच न आने देते थे। जीवन में कईबार उनको प्रादेशिक तथा अखिल भारतीय स्तर के कवि सम्मेलनों में अध्यक्षता के लिए बुलाया गया था। एकबार बम्बई सम्मेलन में P E N Society वाले किसी अंग्रेजी भक्त ने PEN की महिमा का गुणगान करते हुए हिन्दी में ऐसे शब्द का अभाव बताया और चुनौती दी। पण्डित जी कब चूकने वाले थे ? उन्होंने कहा कलम संस्कृत शब्द है और उसका चमत्कार है क से कवि, ल से लेखक और म से मसिजीवी साहित्यकार। चुनौती देने वाले की बोलती बन्द हो गई।

एकबार एक सम्मेलन में वे और डा० वृन्दावनलाल वर्मा दोनों गये थे। सम्मेलन में जाने के पूर्व निवास-स्थल पर डा० वर्मा ने मनोविनोद की मुद्रा में पण्डित जी को छेड़ने के लिए ब्रज-संस्कृति के प्रति कुछ कह कर उसका उपहास किया। पण्डित जी उस समय चुप रहे। डा० वर्मा ने उसी मज़ाक को सम्मेलन में भी दुहराया। अन्त में जब पण्डित जी अध्यक्षीय भाषण देने उठे तो उन्होंने डाक्टर वर्मा की बात का भी उत्तर दे डाला। उन्होंने कहा, "ब्रज की महिमा अवर्णनीय है। बुन्देलखण्ड में तो वर्मा जी को अपने नाम के लिए भी कोई उपयुक्त शब्द न जुड़े, अपना नाम भी उन्होंने ब्रजक्षेत्र के एक धाम से लिया।" वर्मा जी जो पण्डित जी के अभिन्न मित्र हैं मीटिंग समाप्त होने के पश्चात् पण्डित जी से कहने लगे, "दुष्ट, यह बात पहिले नहीं बताई।" पण्डित जी ने कहा, "यदि मैं यह पहिले ही बता देता तो आप पहले कही हुई बात यहाँ न कहते।" वर्मा जी पण्डित जी से उम्र में कुछ बड़े हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज साहित्य-मण्डल के अध्यक्ष पद पर काम करते हुए जब से मैं ब्रजभाषा की सेवा रत हुआ पण्डित जी मेरे ऊपर बड़ी कृपा करने लगे। उनका मुझ पर असीम स्नेह हो गया था। जब कभी भेंट करने के बाद मैं उनसे बिदा होता तब वे बहुधा कहते, "आपके प्रति हमारे हृदय में बड़ा आदर है।" मैं उन शब्दों को सुनकर बड़े संकोच का अनुभव करता। एकबार मैंने उनसे कह ही दिया, "पण्डित जी ! आपके इन शब्दों से मुझे कुछ लज्जा सी और संकोच होता है। मुझे तो आप आशीर्वाद दें।" पण्डित जी तुरन्त बोले, "आप जो .....कार्य कर रहे हैं उसका पारखी तो मैं हूं, आपको संकोच क्यों होना चाहिये ?" मैंने इससे यही निष्कर्ष निकाला कि वे साधारण से साधारण कार्यकर्ता का भी साहित्यिक पोषण करते थे जिससे वह अनुप्राणित और उत्प्रेरित होकर अपनी साधना में लगा रहे। नेतृत्व के कितने ऊंचे आदर्शों को वे निभा रहे थे ? पण्डित जी के चले जाने से मैं अपने आपको एकाकी और साहित्यिक क्षेत्र में अनाथ सा हो गया महसूस करता हूँ।

पण्डित जी में स्पृहा नाम को भी न थी। कविसम्मेलनों में कवियों को साथ लेकर आने के लिए जब मार्गव्यय के रूप में कोई निधि उनके पास आती तो वे केवल तीसरे दर्जे का किराया लेकर शेष धन को लौटा देते। यद्यपि वे बड़े गौरव से अपने को मसिजीवी साहित्यकार कहा करते थे तथापि प्रकाशकों से उन्होंने कभी व्यावसायिक दृष्टिकोण से बात न की। जो कुछ किसी प्रकाशक ने दे दिया ले लिया। वे मोलतोल करने के कतई आदी न थे। अपनी आत्मा का हनन करके उन्होंने लेखन को अपना व्यवसाय कभी न बनाया। किसी भी मूल्य पर उनसे उनके आदर्शों के विरुद्ध लिखवाया जाना सम्भव न था। उन्होंने एकबार एक सेठ का तीन हजार रुपया इस आधार पर लौटा दिया कि पुस्तक लेखन का प्रस्तावित विषय महात्मागाँधी के चलाये आन्दोलन के प्रतिकूल था। इस संस्मरण को वे बड़े गौरव और चाव से सुनाया करते थे। बातचीत में उन्होंने उस सेठ का नाम कभी बता कर न दिया, यह उनकी शालीनता का द्योतक था। किसी का दिल दु:खाना उनकी आदत के बाहर था।

पण्डित जी कई भाषाओं के लिये लेख विशिष्ट ज्ञाता थे। उर्दू, फारसी, अरबी, संस्कृत और अंग्रेजी पर उनको पूरा अधिकार था। वे उर्दू की भी शायरी करते थे। फारसी, अरबी, उर्दू के हजारों शब्द उन्हें ऐसे कण्ठस्थ थे जैसे वे स्वयं एक कोष हों। शब्दों की व्युत्पत्ति बताते हुए वे ऐसे शब्दों की झड़ी लगा देते थे जो वास्तव में फारसी या अरबी के हैं परन्तु हिन्दी में जिनका पूर्णतया समावेश हो गया है। वे बड़ी निर्भीकता से कहते कि उर्दू कोई स्वतन्त्र भाषा नहीं; वह हिन्दी का ही फारसी संस्करण है।

पण्डित जी पत्र पत्रिकाओं के लिये लिखने में कभी संकोच न करते थे। एतन्निमित्त जो कोई भी उनके पास जाता उनसे कुछ लेकर ही आता था। पण्डित जी की जैसी प्रतिभा थी और जैसा उनका गहन ज्ञान था वैसा ही उन्होंने हिंदी जनता और सरकार दोनों ही से मान प्राप्त किया। उनको अनेक उपाधियाँ और पुरस्कार आदि मिले। अनेक सभाओं और सम्मेलनों का अध्यक्ष बनाकर उन्हें सम्मानित किया गया। छन्द शास्त्र विज्ञान पर आगरा विश्व विद्यालय ने उन्हें डाक्टरेट की उपाधि प्रदान की। छन्द शास्त्र पर ऐसा अद्भुत् विवेचन किसी अन्य ग्रन्थ में नहीं ऐसी देश के उद्भट विद्वानों की मान्यता है। सरकार ने उनकी साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्हें पद्मश्री की उपाधि से विभूषित किया जिसे उन्होंने हाल ही में हिन्दी विधेयक के प्रतिवाद स्वरूप त्याग दिया । पण्डितजी अन्त तक सक्रिय रहे । वे अब तक गुरुकुल विश्व विद्यालय के उपकुलपति, उत्तर-प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष तथा और कई संस्थाओं जैसे सूर स्मारक मण्डल आदि के अध्यक्ष थे । वे अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य मण्डल के भी अध्यक्ष रह चुके थे ।

पण्डितजी अपने को कलम का मजदूर बताया करते थे। उन्होंने अपनी कलम से इतना कमाया भी कि वे अपने तीनों पुत्रों और पुत्र बधुओं को उच्च शिक्षा प्राप्त करा सके । वे फीस मुआफ करा कर पढ़ाने के विरुद्ध थे । उन्होंने अपने बच्चों की कभी फीस माफ नहीं कराई । उनके तीनों पुत्र और उनकी बहुऐं उच्च शिक्षा प्राप्त हैं तथा उच्च पदों पर आसीन हैं और आदर्श सद्ग्रहस्थता का निर्वाह कर रहे हैं ।

स्वर्गीय पण्डित जी कार्यकर्ताओं के तो प्रेरणा श्रोत ही थे । वे हरेक के कार्य का मूल्यांकन करते और उसे प्रोत्साहन देते रहते थे । उनके हृदय में किसी के प्रतिद्वेष तो लेशमात्र भी न था । प्रेम परिपूर्ण अपने हृदय से उन्होंने जो कुछ अपने जीवन में अनुभव के रूप में बटोरा था उसे वे बड़े मुक्त हस्त से बिखेरते रहते थे । वे अत्यन्त कृपालु और सहृदय थे ।

काव्य नवनीत—

(संपादक—ब० वृन्दावनदास)

रीतिकाल के और रीति परंपरा के अन्तिम महाकवि नवनीत जी की उत्कृष्ट कृति—'सनेह शतक' और 'श्यामांगवयव भूषण' का सुन्दर संपादन बा० वृन्दावनदास जी ने किया है, प्रारम्भ में रीति-परंपरा और नवनीत जी के समसामयिक कवियों की पृष्ठभूमि में नवनोत जी के ऊपर भूमिका महत्व-पूर्ण है । सनेह, शतक में प्रेम के ऊपर नवनीत जी की अनेक उक्तियाँ हैं तथा श्यामांगवयव भूषण उनका नखशिख है । मूल्य २) रु०

(अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य मण्डल, मथुरा से प्राप्य)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज-भाषा साहित्य का व्यापक प्रभाव

(डा० श्री हरवंश लाल शर्मा, पी० एच० डी०, डी० लिट्०)

ब्रज की स्थिति मध्यदेश में है जिसके लिए मनुस्मृतिकार ने लिखा है,...."एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः, स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।" मध्यदेश सदा ही भारतीय संस्कृति का केन्द्र रहा है। मध्यदेशीय संस्कृत–शौरसेनी प्राकृत=शौरसेनी अपभ्रंश=ब्रजभाषा =इस प्रकार ब्रजभाषा प्राचीन भाषा परम्परा का विकसित रूप है तथा ब्रज संस्कृति भारतीय संस्कृति की प्रतिनिधि है। महर्षि वेद-व्यास जी ने वैदिक वाङ्मय तथा पुराण साहित्य का सम्पादन मध्यदेश में ही किया था। बौद्ध-साहित्य में उल्लिखित १६ महाजन पदों में से ९ मध्यदेश में ही थे। मनुस्मृतिकार ने जिस प्रदेश को ब्रह्मर्षि कहा है उसमें चार जनपद सम्मिलित थे—कुरु, पांचाल, मत्स्य और शूरसेन। पाणिनि तथा पतंजलि आदि वैयाकरणों के ग्रन्थों से स्पष्ट हो जाता है कि लोक-भाषा, साहित्यिक भाषा से भिन्न रही है परन्तु अन्त में लोक-भाषा ही सम्पूर्ण साहित्यिक सम्पत्ति के साथ साहित्य भाषा बन जाती है और यह क्रम—सातत्य निरन्तर चलता रहता है। इसी क्रम में मध्यदेश की भाषा संस्कृत, पालि-शौरसेनी प्राकृत-शौरसेनी अपभ्रंश और ब्रजभाषा है। संस्कृत के पश्चात् भाषा का साहित्यिक रूप इसी क्रम से हुआ है। सिद्ध हेमचन्द्र शब्दानुशाशन तथा अन्य व्याकरण के ग्रन्थों में शौरसेनी प्राकृत तथा शौरसेनी अपभ्रंश पर पर्याप्त विचार हुआ है तथा उन्हें आर्य भाषाओं की 'रीढ़' स्वीकार किया गया है। प्रायः संपूर्ण उत्तरी भारत की साहित्यिक भाषा शताब्दियों तक शौरसेनी अपभ्रंश रही है दक्षिण के भी अनेक क्षेत्रों में इसका प्रवेश हुआ जिसके पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध हैं (मान्यखेट=मालखेड-निजाम हैदराबाद)। यों तो अपभ्रंश के भी तीन रूप थे—पश्चिमी, दक्षिणी और पूर्वी, परन्तु वैयाकरणों का स्पष्ट मत है कि तीनों का मूल पश्चिमी या शौरसेनी अपभ्रंश ही थी। जब अपभ्रंशों ने आधुनिक भाषाओं का रूप ग्रहण किया तो यह शौरसेनी ही भाषा या मध्यदेशी कहलायी। इसी भाषा को किन्हीं विद्वानों ने अन्तर्वेदी भी कहा है। शाहजहां के समय में मिर्जा खां ने इसका व्याकरण 'तुहफ्तुलहिन्द' नाम से लिखा था जिसका अंग्रेजी अनुवाद डाक्टर ज़ियाउद्दीन ने किया। मिर्जा खां ने लिखा है कि संस्कृत और प्राकृत के अतिरिक्त सब बोलियों को भाखा कहा है और खास तौर से भाखा का सम्बन्ध ब्रज से है। इस प्रकार मूल छान्दस या प्राकृत का सम्पूर्ण दाय ब्रजभाषा को ही प्राप्त हुआ और वास्तव में भाषा की संज्ञा भी 'ब्रजभाषा' को ही मिली।

भाषा की भांति संस्कृति, धर्म, दर्शन, कला और साहित्य का भी देश का प्रतिनिधित्व इसी प्रदेश ने किया। श्री कृष्ण की जन्म-भूमि होने के कारण यह भूमि पुण्य भूमि और तीर्थ भूमि हो गई और भागवत धम की उदय स्थली बनी। इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि मथुरा नगरी बौद्ध, जैन, वैष्णव, शैव, यक्ष, नाग, आर्यसमाज सभी धर्मों का एक प्रकार से उत्स रहा है। अब यह बात आज ब्रजभूमि की खुदाई से भी सिद्ध हो चुकी है। चीनी यात्री हुएनसांग का ७ वीं शताब्दी का मथुरा वर्णन इस तथ्य पर कुछ प्रकाश डालता है कि ललित कलाओं की दृष्टि से भी इस प्रदेश के मन्दिरों में भारतीय कला का पूर्ण प्रतिनिधित्व हुआ था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय संस्कृति का सबसे समर्थ और स्थायी माध्यम साहित्य है। लोक चेतना का प्रतीक बनकर ही साहित्य स्थायित्व प्राप्त करता है। वास्तव में जिस साहित्य में मूल मानवीय मनोवृत्तियों की सही अभिव्यक्ति होगी, वही साहित्य प्राणवान्, जीवन्त और प्रतिनिधि हो सकता है। कहना न होगा कि ब्रज-प्रदेश के साहित्य में ये तत्व प्रारम्भ से ही ऐसे ओत-प्रोत हैं कि वे उसका अभिन्न अङ्ग बन गए हैं। इन्हीं तत्वों के कारण ब्रजभाषा साहित्य ने सम्पूर्ण देश के साहित्य को प्रभावित और अनुप्राणित किया है। सम्पूर्ण देश की रागात्मक और भावात्मक एकता का सम्पादन करने में ब्रजभाषा साहित्य ही प्रणय-सूत्र रहा है।

साहित्य को व्यापक और स्थायी मूल्य प्रदान करने वाले तीन तत्व हैं— १–आस्था २-शृङ्गार और ३–सङ्गीत। इन तीनों तत्वों को ब्रजभाषा साहित्य ने अपना आधार स्तम्भ बनाया है। प्रेम और शृङ्गार लोक की मूल मनोवृतियां हैं—लोक मत के मूल तत्व हैं। बौद्धों की महायान और सहजयान शाखाओं में प्रेम और शृङ्गार का ही विस्तार है। दक्षिण के आलवार भक्तों के गीतों में प्रेम और शृङ्गार की ही ध्वनि गूँजती है। वैष्णव सहजयान, शाक्तमत तथा शैवमत में भी प्रेम और शृङ्गार को ही किसी न किसी रूप में अभिव्यक्ति मिलती है। देश में आज जो कला के प्राचीन नमूने प्राप्त होते हैं उनसे यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है कि प्रेम और शृङ्गार धार्मिक स्तर पर भी सामान्य जनता में स्वीकृत हो चुके थे। अवतार की प्रतिष्ठा प्रेम और शृङ्गार के आधार के बिना निष्प्राण और निर्जीव सी ही है। बौद्ध और जैन मतों ने भी इन्हीं लोक तत्वों को ग्रहण कर अपने-अपने धर्मों की प्रतिष्ठा की। यह लोक मत का प्रमुख संदेश था जिसका एकमात्र वाहक ब्रज-भाषा साहित्य था। प्रायः सभी देशी भाषाओं का साहित्य इस साहित्य से अनुप्राणित हुआ है। इस लोक आस्था को भागवत धर्म ने सबसे पहले स्वीकार किया और मध्य-देश के साहित्य ने इससे सबसे पहले अभिव्यक्ति दी। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश की रचनाओं में अभिव्यक्त उन्मुक्त प्रेम और शृङ्गार की विरासत ब्रजभाषा साहित्य को प्राप्त हुई। यह इसी का प्रभाव था कि जैन मुनि और बौद्ध कवि भी निर्वाण-कामिनी के आलिंगन के गीत गाने लगे थे। पुष्पदन्त के महापुराण में रास का अद्वितीय वर्णन है। हेमचन्द्र के दोहों में कृष्णलीला के अनेक दोहे हैं। प्रबन्ध चिन्तामणि और प्राकृत पैंगलम् में इस प्रकार के उदाहरण भरे पड़े हैं। इस युग के संस्कृत कवियों ने भी इन्हीं दो तत्वों को अपना प्रतिपाद्य बनाया तथा कृष्ण कथा को माध्यम। गीत गोविन्दकार जयदेव को तो स्पष्ट कहना पड़ा।

"यदि हरि स्मरणे सरसं मनो, यदि विलासकलासु कुतूहलम्।
मधुरकोमलकान्त पदावलीं शृणु तदा जयदेव सरस्वतीम्॥"

क्षेमेन्द्र के दशावतार चरित में राधा का शृङ्गारिक रूप बड़ा ही मनोहर चित्रित हुआ है।

"गच्छन् गोकुल गूढ़ कुञ्जगहनानि, आलोकयन् केशवः।
सोत्कण्ठंवनितानतो वनभुवा सख्येव रुद्धांचलः।
राधाया न न नेति नीविहरणं वैक्लव्यलक्ष्याक्षराः।
सस्मार स्मरसाध्वसाद्भुततनोरर्द्धोक्तिरिक्तागिरः॥"

ब्रजभाषा का सहज माधुर्य इन तत्वों की अभिव्यक्ति में समर्थ था। इसीलिए इसके साहित्य में सङ्गीत तत्व का समावेश स्वतः ही हो गया। गीत, वाद्य और नृत्य तीनों ही सङ्गीत के तत्व

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रजभाषा साहित्य में जीवन्त रूप में मुखरित हुए हैं। ध्रुपदगायन शैली का परिष्कार भी इसी प्रदेश में हुआ। ब्रज की तान, लावनी और ख्याल तो प्रसिद्ध ही हैं। इसी प्रकार वाद्यों के भी अनेकानेक प्रकार ब्रज प्रदेश में प्रचलित हुए। नृत्य के तो सभी भेदों को इस प्रदेश ने रास में समाविष्ट कर लिया।

सभी रसों, गुणों और अलंकारों की जैसी सहज अभिव्यक्ति ब्रज-भाषा साहित्य में हुई है वैसी संसार की किसी भाषा में सम्भव ही नहीं है। इसीलिए ब्रज-भाषा प्रादेशिक होते हुए भी अन्तर्प्रादेशिक हो गयी और साहित्य ब्रज का होकर भी सार्वभौम बन गया।

ब्रज-प्रदेश में रचित साहित्य की बात तो अलग रही, हिन्दीतर मध्ययुगीन भाषाओं का साहित्य भी ब्रज साहित्य से प्रेरणा पाता रहा है तथा बंगाल उड़ीसा, आसाम, महाराष्ट्र तथा केरल प्रान्तों में तो अनेक कवि ऐसे हुए हैं जिन्होंने अपनी-अपनी क्षेत्रीय भाषाओं के सम्मिश्रण से ब्रज-भाषा का ही प्रयोग किया है। ब्रज-साहित्य की प्रेम लक्षणा भक्ति ने इन भाषाओं के साहित्य को आमूल अनुप्राणित किया। तेलुग के मणिकिसिगन्न, बम्मेरपोतन्न, अन्नमाचार्य, महाराजिधिराज श्रीकृष्ण देव राम, श्री तेनालिराम कृष्ण कवि तथा त्यागराजु के साहित्य के अनेक पद ब्रज-भाषा साहित्य के पदों के अनुवाद से लगते हैं। इसी प्रकार तमिल में लिखे आलवारों के भक्ति साहित्य पर ब्रज-साहित्य की पूर्ण छाया है। मलयालम में तो इससे अनुप्राणित साहित्य की भरमार है। निरणाम् कवित्रयम्-माधव, शंकर और राम (पणिक्कर) की रस पूर्ण रचनाएँ ब्रज-भाषा साहित्य का स्मरण दिलाती हैं। चेरूश्शेरी नम्पूतिरि की कृष्ण गाथा तो भक्तजनों का हार है। इसमें वात्सल्य और शृङ्गार स्पष्ट रूप से सूर के वात्सल्य और शृङ्गार के समकक्ष है। दोनों का प्रेरणा स्रोत निश्चित रूप से ब्रज-भाषा साहित्य की परम्परा ही हो सकती है। इसी प्रकार मलयालम के कवि शिरोमणि एलतुच्छन का विशाल साहित्य प्रेम लक्षणा भक्ति का स्वच्छ आकार है। महाकवि नेप्यार की कृतियाँ भी कृष्ण भक्ति साहित्य की अपूर्व देन है।

कन्नड़ भाषा में भी भक्ति से अनुप्राणित साहित्य पर्याप्त मात्रा में मिलता है। वहाँ का हरिदासों का साहित्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है—पादराय, व्यासराय, पुरन्दरदास, कनकदास तथा श्री वादिराज विशेष उल्लेख्य हैं। महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल, आसाम, और उड़ीसा में तो तत्तत् क्षेत्रीय भाषाओं के अतिरिक्त ब्रज-भाषा का ही इतना विशाल साहित्य है कि उसे देखकर आश्चर्य होता है कि किस प्रकार ब्रज-भाषा का आधिपत्य देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैला हुआ था। ये रचनाएँ ब्रज-भाषा और साहित्य की दृष्टि से बड़ी महत्वपूर्ण हैं। ऐसे भक्त कवियों में मराठी के ज्ञानदेव, नामदेव, भानुदास, श्रीएकनाथ, तुकाराम प्रसिद्ध हैं। गुजराती के नरसिंह मेहता वीरसिंह, केशवदास, भीम, नाकर तथा विष्णुदास, चतुर्भुज, अखौजी तथा प्रेमानन्द उल्लेखनीय हैं। बंगाल के तो अनेकानेक कवियों ने श्रीचरण चैतन्य महाप्रभु के प्रभाव से भगवान् की बोली में ही भगवान् का यशोवर्णन किया है। और उसे ब्रजबुलि का नाम दिया है। आसाम के भी अनेक कवियों ने ब्रजबुलि में कृष्ण भक्ति साहित्य की रचना की है। हेम सरस्वती तथा माधव कन्दली के अतिरिक्त शंकर देव, माधवदेव तथा भट्टदेव ब्रजबुलि के उल्लेखनीय भक्त कवि हैं। उड़ीसा प्रदेश में भी महाप्रभु के प्रभाव से विपुल भक्ति साहित्य लिखा गया। सारलादास को उड़िया का व्यास कहा जाता है जो चौदहवीं शताब्दी में हुए थे। उनके पश्चात् पंच सखाओं ने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उड़िया में विपुल भक्ति साहित्य लिखा। १६ वीं शताब्दी में महाप्रभु के प्रभाव से उड़ीसा में असंख्य प्रेम गीत लिखे गये। पंजाबी का साहित्य तो एक प्रकार से ब्रजभाषा साहित्य ही है।

इस प्रकार मध्ययुगीन भाषाओं के साहित्य के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सम्पूर्ण वाङ्मय का प्रेरणा स्रोत ब्रज-भाषा साहित्य ही रहा है और इसी कारण उसमें सर्वत्र सांस्कृतिक एकता उपलब्ध होती है। बात यह है कि प्रेम और शृङ्गार के परिष्कार और उदात्तीकरण का श्रेय ब्रज-भाषा साहित्य को ही प्राप्त हुआ। उस साहित्य ने प्रेम और शृङ्गार को लोक प्रिय, मधुर और आकर्षक बनाने के लिए संगीत का आश्रय लिया। प्रेम और शृङ्गार भक्ति के अंग बन गए। इसीलिए भक्ति, शृङ्गार और संगीत की त्रिवेणी का प्रवाह ब्रज-भाषा साहित्य के माध्यम से सम्पूर्ण देश में प्रवाहित हो गया।

ब्रज-साहित्य में वसन्त और होली वर्णन

(ज्यो० राधेश्याम द्विवेदी, स्वामीघाट, मथुरा)

वसन्त वैभव का विशद वर्णन वैसे तो सभी भाषाओं के साहित्य में मिलता है किन्तु संस्कृत साहित्य के बाद यदि वसन्त और होली का वर्णन देखना हो तो विभूतिमयी ब्रज-भाषा के साहित्य भण्डार में ही देखने को मिलता है, महाकवि सूरदास, नन्ददास, परमानन्ददास आदि अष्टछाप के कवियों के अतिरिक्त केशवदेव और द्विजदेव बिहारी, और पदमाकर और रत्नाकर, विद्यापति और सेनापति, ग्वाल गंग, और लाल बलवीर यहाँ तक कि आज तक विद्यमान ब्रजभाषा के कवियों ने वसन्त और होली पर खूब ही लिखा है, आश्चर्य तो यह है कि मुसलिम कवि रसखान, तोष और कमाल तक ने वसन्त पर कमाल की कवितायें लिखी हैं, जिनको पढ़ने और सुनने से वसन्त ऋतु का प्रत्यक्ष दर्शन सामने उपस्थित हो जाता है, ब्रज प्रदेश और ब्रज संस्कृति का वसन्त और होली से घनिष्ट सम्बन्ध होने के कारण भक्तिकाल और रीतिकाल के कवियों ने वसन्त के वर्णन में कोई कमी नहीं रक्खी है और ब्रज-साहित्य के भण्डार के उपवन को सभी ऋतुओं के वर्णन से हरा भरा किया है, ब्रज प्रवेश प्राकृतिक सौन्दर्य का प्रदेश रहा है अनेक वन और उपवनों से आवेष्ठित गिरि गोवर्धन और कालिन्दी से कमनीय यह प्रदेश वसन्त ऋतु का वैभवपूर्ण प्रदेश था जिसमें ब्रजेश श्रीकृष्ण ने अपनी बाल मनोहर लीलाओं से इसको और भी रङ्गीला और रसमय बना दिया, वसन्त की इस ऋतु में महान पर्व होली का आगमन शिशिर के उत्पात के अन्त से होता है।

ब्रज के काव्य साहित्य में वसन्त और होली या फाग आदि की कल्पना अपने प्रिय इष्ट के सान्निध्य और प्राप्ति करने के लिए की है, ऐसी मधुर मधु, माधवी ऋतु में पावन पर्वों के उल्लास मय राग, रंग, गीत वाद्यों से युक्त, संगीतमय बनाकर इस ऋतु की साहित्य संगीत और संस्कृति का समन्वय कर वसन्त के वैभव की अभिवृद्धि की है, भक्तिकाल के कवियों के हृदय में काव्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भावना का अपेक्षा भक्ति भावना का बाहुल्य था। उनका लक्ष्य भगवत् भक्ति ही था। जो कुछ उन्होंने अपने ललित काव्य में लिखा वह अपने इष्टदेव को रिझाने के लिए और उसकी लीलाओं के वर्णन को लोकप्रिय बनाने के लिए ही लिखा।

कदम्ब की कुञ्जों की कमनीयता केकी, कोकिल और कीर की कुहुक मधु, माधुरी और मलती तथा मदन मादकता मधुर मधुकरों की मोहक गुंजार रसालों की भौरों की बहार बन उपवन बाग और बगीचियों के बहार के वर्णन के अतिरिक्त अपने इष्टदेव के बसन्त आभूषण की शोभा अबीर और गुलाल, कुमककुम और केसर के लाल पीले रङ्गों की रंगीली होली की छटा साथ ही अनेक काम युक्त संगीत के गान से इस ऋतु वर्णन को सर्वांग पूर्ण सर्वाङ्ग और आनन्दमयी बनाया गया है।

कविवर बिहारीलाल ने बसन्त वर्णन के निम्न दोहों में बसन्त का साक्षात् स्वरूप सामने रख दिया है :

छकि रसाल सौरभ सजै, मधुर माधुरी गन्ध।
ठौर ठौर झौरंत झपत, थौर झौर मधु अन्ध॥
या मधुरितु में कौन से बढ़त न मोद अनन्त।
कोकिल गावत है कुहुकि मधुरा गंजरत तंत॥

दिशि दिशि, कुसुमित देखियत उपवन विपिन समाज।
मनो वियौगिन कौं कियौ सर, पंजर रितुराज॥

कहुँ लावति विकसित कुसुम कहूं डोलावत वायः।
कहूं छिपावत चांदनी मधुरितु दासी आय॥

अली मान तजि सेइये हिलमिल प्यारे कन्त।
सब जग मन भायौ भयौ हाकिम नयौ बसन्त॥
अलि गुञ्जत कूजत विहङ्ग प्रफुल्लित कुसुम अनंत।
शीतल मंद सुगन्ध वह पौन वाखनि बसन्त॥

उपर्युक्त दोहों में कवि ने बसन्त का विशुद्ध वर्णन किया है। भक्तिकाल के कवियों की कृतियों में तो कृष्ण भक्ति की भावना बिलकुल भरी पड़ी है। जैसा कि सूरदास और कृष्णदास के पदों से जानने को मिलता है :

आइ हैं हम नंद के द्वारें।
खेलन फाग बसन्त पंचमी सुख समाज विचारें॥१॥
कौऊ ले अगर कुंकमा केशरि काहू के मुख पर डारें।
कोऊ अबीर गुलाल उड़ावें आनंद तनन संभारें॥२॥
मोहन कों गोपी निरखत सब नीकें वदन निहारें।
चितवनि में सबही 'वस' कीनी नागर नंद दुलारें॥३॥
ताल मृदङ्ग मुरली डफ वाजें झांझन की झनकारें।
'सूरदास' प्रभु रीझि मगन भये गोप वधू तनवारें॥४॥

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छिरकत छींट छबीली राधे चंदन भरि भरि बोरी रे।
अबीर गुलाल विविध रंग सों धो लोचन परि गई रोरी रे ॥१॥
सर्वस वस कियो रसिक कुमारी प्रेम फंदहि डोरी रे।
सूर प्रभू गिरिधर लाल कों देर ही प्रेम अकोरी रे ॥२॥

अब कृष्णदास का बसन्त सुनियै :

लाल गुपाल गुलाल हमारी आंखिन में जिन डारो।
वदन चन्द्रमा नेन चकोरी इन अंतर जिन पारोजू ॥१॥
गाओ राग बसन्त परस्पर अटपटे खेल निवारो जू।
कुंकुम रंग सों भरि पिचकारी तकि नेनन जिन मारो जू ॥२॥
बंक विलोचन दुख के मोचन भरि कें दृष्टि निहारो जू।
नागरी नायक सब सुखदायक 'कृष्णदास' कों तारो जू ॥३॥

ये बसन्त के पद वल्लभ कुल मंदिरों में कीर्तन के समय धमार ताल में गाये जाते हैं जो धमार कहलाते हैं। भक्त कवियों के इन भाव भरे संगीतमय पदों में भक्ति भावना के साथ-साथ साहित्य का आनन्द भी मिलता है। इसी प्रकार धर्मानुरागी अन्य सम्प्रदायों के अन्य सन्त कवियों में भी अपने इष्टदेव को रिझाने के लिए बसन्त और फाग के पद गाये हैं और कवित्त सुनाये हैं।

रीतिकाल के आचार्य कवि केशव ने बसन्त के वर्णन में भक्तिकालीन परम्परा के मार्ग से भिन्न मार्ग अपनाया जिसमें साहित्य का नवीन विकसित रूप सामने आया :

कोकिल की केका सुनि कारे न मतथ मन मनमथ मनोरथ रथ पथ सोहिये।
कोकिला की काकलिन कलित कललित वाग देखत न अनुराग उर अब से हिये।
कोकिन की कारिका कहत सुक सारिकानि केसौ दास नारिका कुमारिका हू मोहिये।
हंस माल बोलत ही मान की उतरि माल।

कवि पदमाकर का कितना सुन्दर वर्णन है। उसे सुनिये :

बोले नदलाल सों न ऐसी वाल को हिये ॥
कूलन में कोलिन कछारन में कुञ्जन में क्यारिन कलित कलीन किलकन्त हैं।
कहै पदमाकर परागई में पौन हूं में पातिन में पिकन पलाशन पगन्त है।
द्वार में दिशान में दुनी में देश देशन में देख्यों दीप दीपन में दीपत द्विगन्त है।
दीपिन में ब्रज में नबोलिन में वोलिन में बनन में बागन में बगरयौ वसंत है ॥

पदमाकर के ऐसे अनेक कवित्त अलंकारिक, प्रकृतिक सौन्दर्य युक्त बसन्त वर्णन कै मिलते हैं।

कविवर ग्वाल ने वसन्त के साथ फाग का आनन्द भी प्रदान किया है :

फूल रही सरसों चहुं ओर, ज्यौ सोने बेस विछावत सांचे।
चीर सजे नर नागिन पीत बढ़ी रसरीत वरङ्गना नाचे।
त्यों कवि ग्वाल रसाल के बौरन औरन रंन ऊधम मांचे।
काम गुरु भयौ फाग शुरू भयौ खेलिए आज बसन्त की पाँचे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कविवर ग्वाल जी के शिष्य लाल बलवीर ने अपनी भक्ति भावना पूर्ण काव्य कृति से साहित्य सुधा का पान कराया है :

वनन पै वागन पै वागन की बीथिन पै, वृक्षन पै वेनि पै शोभा सरसंत है।
ब्रज की नवेलिन पै बैंनीन पै वस्त्रन पै, बेसर बुलाखन पै व्यूह दरसंत है।
लाल बलवीर जू की वांसुरी पै बैनन पै, बिहंसि विलोकन पें हेर हरसंत है।
वरनत बनंत ना बहार है अनंत देखौ, वृन्दावन चन्द पै बसंत वरसंत है॥

देख बन वागन में सुमन बसंती खिले, पवन बसंती ये त्रिविध सुखदाई है।
वसन बसंती धार धार अङ्ग अङ्गन में, केशर वसंती खौर मालन सजाई है।
लाल बलवीर प्यारी प्रीतम के सङ्ग सबै, गावत बसंती राग मोद सरसाई है।
दिख छवि जाई भई ब्रज में अवाई, बड़े भागन ते प्यारी ये वसंत ऋतु आई है॥२॥

बाल गोल गोरी मनमोहन गहौ री कोऊ, मीजें मुख रोरी आज होरी लाल होरी है।
छीन लई लकुट मुकट बेनु पीत पटी, चूंदरी उढ़ाय हसें वधूरी हंसोरी है।
लाल बलबीर लोक पालन कौ पाल लाल, देखौ ब्रज बालन की बध्यौ प्रेम डोरी है।
बूझै चित चोरी नई कौन ये कहोरी, हंसि कहत किशोरी मोरी नंदू जू की छोरी है॥३॥

अब मुसलिम कवि रसखान और कमाल का वर्णन सुनिये ;

डहडही मोरी मंजुडार सहकार की पै चहचही चुहिल चहुँ किल अलकीन्ही।
लहलही लोनी लता लपटी तमालन पै कहकही तापै कोकिला की काकलीन की।
तहतही करि रसखान कै मिलन हेतु लहलही बानि तजि मानस मलीन की।
महमही मंद मंद मारूत मिलन तैसी गहगही खिलन गुलाब की कलीन की॥

कवि कमाल का भी कमाल देखिये :

आयौ है बसन्त कन्त वास कियौ अन्त लाग्यौ मैन शरतंत सुधिने को नहीं अङ्ग की।
गावत धमारै ते अधिक उपचारै आह कोकिल पुकारै मनौ नैन भट जङ्ग की।
होली के जरत धीर कै स्यौ न धरत बनै ताही में परत है व्यथा को मनो सङ्ग की।
औरनहिं चार सब थाकी कै कमाल बाल लीन तेहि काल गति पंजर पतङ्ग की॥

बसन्त और फाग ब्रज साहित्य और संस्कृति का सच्चा अचल सुहाग है।

प्रसिद्ध कवियों के अतिरिक्त सैकड़ों अप्रसिद्ध विस्मृत कवि हैं जिन्होने बसन्त और होली के वर्णन में बहुत कुछ लिखा है और अपनी छाप तक नहीं लगाई है। कहने का तात्पर्य यही है कि ब्रज-भाषा में बसन्त और होली का भरपूर भंडार भरा है जिसका आनन्द ब्रज-साहित्य सरिता में गोता लगाने पर ही मिल पाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"ब्रजप्रदेश के लोक कवि : रामकुमार शर्मा"

(श्री श्रीराम शर्मा, एम.ए., २५ कृष्णापुरी, अलीगढ़)

निस्संदेह रूप से ब्रज जनपद के साहित्य को प्रकाश में लाने का श्रेय इस दिशा के अग्रणी विद्वान डा० सत्येन्द्र को ही है। उन्होंने सर्व प्रथम अन्धकार के गर्भ में पड़े ब्रजलोक-साहित्य को निकाल कर उसका उद्धार ही नहीं किया अपितु अपने शोध प्रवन्ध में ऐसी अनेक दिशाओं को भी सुझाया जिन पर शोध कार्य होने चाहिए। खेद है कि उनके कार्य को सुचारु रूप से आगे बढ़ाने का कार्य कुशल एवं लगनशील अध्येताओं द्वारा हुआ ही नहीं। कुछ लेखक ब्रज साहित्य मंडल के द्वारा प्रकाशित 'ब्रज-भारती' के माध्यम से जैसे ही आगे आये थे कि दुर्भाग्य से उस संस्था को ही आपसी मतभेदों का शिकार बनकर अपना अस्तित्व समाप्त प्राय: करना पड़ा। इन पंक्तियों के लेखक ने विद्वान डा० सत्येन्द्र के पी—एच० डी० उपाधि के शोध–प्रबन्ध–"ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन" के पृ० ११७ पर पढ़ा था—"यह सनेहीराम जी के जीवन चरित्र और उनके काव्य पर एक पैरती हुई दृष्टि है। इसी प्रकार न जाने कितने लोक कवि आज ग्रामों की जनता के हृदय में बसे हैं और उनका काव्य ग्रामीणों के कंठ में हिलोरें ले रहा है और यहाँ उन सबका परिचय देना संम्भव नही। यह शोध का एक अलग विषय है।" इस प्रेरणा वाक्य से प्रभावित हो लेखक ने यह सोचा था कि ब्रज के अन्धकार के गर्त में पड़े इन अनेकों लोक कवियों को प्रकाश में लाया जाय किन्तु नियति की निष्ठुरता वश यह कार्य पड़ा ही रहा है। ब्रज भारती के वर्ष २०११ अङ्क ज्येष्ठ में गोपालदत्त शर्मा का 'ब्रज का लोक गायक हरि फूला' शीर्षक लेख देखकर जितनी प्रसन्नता हुई थी, उसका अनुमान लगाना कठिन है। किन्तु इस लेख में बेचारे हरिफूला के जीवन सम्बन्धी तथ्यों, जीवन की विशिष्ट घटनाओं, उसके कृतित्व की विशेषताओं और उसके द्वारा आविष्कृत एक लोक-गीतों की शैली जिकड़ी भजन का मर्म न खुल सका था। वह कितनी प्रशंसा का पात्र रहा कि जिसने लोकगीतों की एक शैली को जन्म दिया, जिसका प्रचलन समस्त ब्रज प्रदेश में लगभग ६०-७० वर्ष तक इतनी बहुलता के साथ रहा कि जनसमुदाय ने हजारों बार अपने मन में आनन्दातिरेक के साथ सुना और महाभारत व पुराण आदि के आख्यानों को जन-जन तक पहुंचाने के प्रयास में पूर्ण सफलता प्राप्त करने वाली शैली ने एक प्रबल ज्वार का रूप धारण किया। यह सब संदर्भ गत लेख में भी उपेक्षित ही रहा। इन सब बातों को देखते हुए लेखक के मन में अनेकों बार यह प्रश्न उठा कि अन्धकार के कूपों में पड़े अनेकों जन कवियों के ऊपर लेखनी चलाने का कार्य हाथ में ले लिया जाय किन्तु खेद है कि लेखक को परिस्थितियों से ऐसा न कर सका। लोक-साहित्य, लोक-कवियों, लोक-जीवन व लोक संस्कृति विषयक लेखों को छापना तो दूर रहा सुनने तक में नाक भौं सिकोड़ने को ही अपना गौरव का अनुभव करने वालों की कमी नहीं। इधर प्रज-प्रदेश के जाने माने लेखक श्री बनारसीदास जी (फीरोजाबाद) के प्रेरणा वाक्यों को 'अमर उजाला' एवं 'ब्रजभारती' में देखा तब कुछ तोष हुआ है और इसी विचार-क्रम में मैंने प्रस्तुत जनकवि—श्रीरामकुमार शर्मा के जीवन एवं कृतित्व पर संक्षेप में विचार किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीरामकुमार शर्मा का जन्म अलीगढ़ जिले की इगलास तहसील की वेसवाँ (विश्वामित्रपुरी) नगरी में श्री पं० भोलानाथ जी के गृह में सम्वत् १९५८ वि० में हुआ था। वेसवां नगरी अलीगढ़-मथुरा मार्ग पर मथुरा अलीगढ़ की सीमा–संधि–स्थली के पास ही स्थित होने के कारण ब्रज के उत्तर-पूर्वी त्रिकोंण के केन्द्र विन्दु पर ठहरती है। यदि मथुरा को ब्रज का केन्द्र मानते हुए एक रेखा अलीगढ़ जिले के टप्पल ग्राम को खींचे और दूसरी सिकन्दराराऊ के लिए खींचे तो इस ब्रज की कोर की ओर के क्षेत्र के उपरिलिखित त्रिकोंण के गर्भ विन्दु पर विश्वामित्रपुरी स्थित है जहाँ श्री रामकुमार शर्मा का जीवन गुजरा। यह क्षेत्र प्राकृतिक सुषमा और ब्रज छटा का केन्द्र रहा है। और यही कारण है कि मथुरा, इगलास, राया और मांट के चतुष्कोणीय क्षेत्र ने अनेकों मेधावी लोक-कवियों को जन्म दिया। श्रीरामकुमार के पिता सनाढ्य ब्राह्मण थे और उन्होंने अपने वर्ण के अनुसार ही रामकुमार जी को विद्याध्यापन के व्यवसाय में लगाया। श्री रामकुमार जी प्राइमरी पाठशाला के प्रधानाध्यापक रहे और उन्हें लोकगीतों के गाने एवं रचने का बड़ा अभ्यास हो गया। ये भजन उपदेशक के रूप में लोक संगीत का तथा शास्त्रीय संगीत के आचार्यत्व को प्राप्त कर चुके थे। मथुरा में कईबार आर्य समाज के उत्सवों में भजन उपदेशक के रूप में गये और प्रथम ठहराये गये। महाराजा भरतपुर, ग्वालियर एवं महाराजा अवागढ़ के यहाँ से उन्हें कई बार अपार सम्मान एवं पदक प्राप्त हुए थे। यद्यपि इनकी शिक्षा हिन्दी, उर्दू की मिडिल तक ही हो पायी थी तथापि बड़ी-बड़ी सभाओं में ने अपने व्यंग्य पूर्ण लोकगीतों के प्रभाव से अमिट छाप छोड़ देते। इन्होंने अगणित लोकगीतों की रचना की थी किन्तु खेद है कि उनके स्वर्गवास (सं० २०१७) के समय के पूर्व कोई उनके द्वारा रचित लोकगीतों को संग्रह न कर सका और इतनी बड़ी निधि अंधकार के गर्त में चली गई। इनके द्वारा रचित कुछ लोकगीत श्री लहरीशङ्कर शर्मा 'कनक' (कवि के छोटे भाई) से मिले हैं। यह भी बताया गया है कि उनके एक शिष्य थे श्री दाताराम (बमनई वाले) किन्तु दुर्भाग्य कि वे भी बम्बई चले गये और लेखक को इनके द्वारा रचित लोकगीतों में से बहुत थोड़े ही लोकगीत संग्रह करने का अवसर प्राप्त हुआ।

एकबार संवत् २००५ में उनके उप विद्यालय निरीक्षक ने अपना प्रभाव प्रदर्शन कर उन्हें गाने के लिए कहा इस पर उन्होंने साफ मना कर दिया और प्रतिज्ञा करली कि वे भविष्य में गायेंगे ही नहीं जिससे आगामी कोई उपविद्यालय निरीक्षक रौब न दिखा सकें और वास्तव में उन्होंने जीवन के अन्तिम १२ वर्षों में कभी नहीं गाया। वे बहुत ऊँचे स्वाभिमानी थे और बड़े लोगों पर तीखे.तीखे व्यंग्य छोड़ने से कभी न चूकते। एक बार मोहकमपुर के एक अध्यापक उनके सिरहाने (चारपाई पर) बैठ गये और कुछ अपने ऐश्वर्य सम्बन्धी प्रभाव का प्रदर्शन किया। इस पर लोककवि का स्वाभिमान जाग उठा और निम्न कवित्त प्रस्फुटित हो गया :—

वृक्षन में एक ताड़ बड़ौ जाकी छांय में कोई बैठ न पायौ।
पक्षीन में एक गिद्ध बड़ौ जाने माँस परायौ हमेशाँ ही खायौ॥
चौपायेन में ऊँटु बड़ौ जाकी पीठि कौ कुब्भु कुढब्बौ बनायौ।
कहै 'रामकुमार' सोचिलै मन में बड़ौ कबहूँ काऊ के काम न आयौ॥

ये अपनी काव्य शैली का उपयोग अपने अध्यापन कार्य में भी किया करते थे। अपने छोटे-छोटे शिष्यों को (कक्षा ४ के शिष्यों को) ईस्ट इण्डिया कम्पनी का इतिहास वे बड़ी सरल शैली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में स्वरचित गीतों के माध्यम से पढ़ाया करते थे। उसका नमूना देखिये :—

जिस समय हमारे भारत में राजा नबाब अधिकारी थे।
पुर्तगाल के बासिन्दे भारत में व्यापारी थे॥
व्यापार विदेशी करते हैं यह अंग्रेजों ने सुन पाया।
हम भी चलकर व्यापार करें अपने मन में ठहराया॥

हैदरअली और टीपू का एक रोचक वर्णन देखिये : –

हैदर के पीछे हुआ सुत टीपू सुल्तान।
अंग्रेजों से सदां ही रखी अपनी शान॥
था मुसलमान कट्टर टीपू अंग्रेजों से लड़ता ही रहा।
आदत से बाज नहीं आया युद्ध सन्धि करता ही रहा॥

अपने विद्यालय के ग्रीष्मावकाश के दिनों में वे अपने छोटे भाई श्री लहरीशङ्कर शर्मा को साथ लेकर लोक-संगीत की अमृत वृष्टि किया करते थे। ब्राह्मण थे किन्तु बड़े से बड़े आश्रय दाता के साथ भी चूकते न थे। जब चुटकी लेते तो अपने से बड़े से बड़े व्यक्तियों पर छींटा कसने में तनिक भी हिचकते थे। एक बार वेसवां के कुँवर साहब राजारमणध्वज प्रसादसिंह व उनके कारिन्दे आदि सब वेसवां के धरणीधर सरोवर पर होने वाली रामलीला में बैठे थे तो इस रामलीला के संयोजक स्वामी निर्भयानंद ने भी रामकुमार जी से कोई व्यंग्य-गीत सुनाने को कहा : वेसवां के राजा जिनकी सात मंजिल की गढ़ी अब भी मौजूद है जिसके ऊपर खड़े होकर आज भी सात कोस की दूरी पर स्थित वृन्दावन नगर देखा जा साकता है उनके सामने ही चुभता हुआ प्रस्तुत लोकगीत सुना डाला :—

क्या तन धोवता रे बाबा माटी मैं मिल जाना॥ टेक॥
राम भगत कूँ कोई नहिं पूछै कान्सटेबिल कूँ खीर।
कारिन्दन पैं कोट पजामा, संतन कूँ एक चीर॥ क्या तन...
राम भगत कूँ कोई न नोंतै रहत जगत ते न्यारे।
नौते में ते नौत दये ऐं डरुआ[1] बदला[2] प्यारे[3]॥

इससे भी वह नहीं अघाये थे और बड़े लोगों पर—जो अभिमान में ऊँची गर्दन करके चलते हैं— व्यंग्य वाण छोड़ दिया : –

चले गये बड़े-बड़े रनधीर, अरे तू क्या है और कितना है॥टेक॥
बालि वीर क्या कुछ निर्बल था, साठि सहस हाथी का बल था,
महा चतुर योद्धा चंचल था, उसका हुआ अखीर रे॥ तू०
रावण कैसा था रण बङ्का, बनी सर्व सोने की लङ्का,
उसका किया काल ने फङ्का, कोई चली नहीं तदबीर रे॥ तू०

---

१. डरुआ—जिससे भय प्राप्त होता था।
२. बदला—जो बदले में जिमाते थे।
३. प्यारे—प्रिय (इष्ट मित्र)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ऐसे व्यक्तियों पर वे बड़े व्यंग छोड़ा करते थे, जिनके घर में उनकी पत्नियों की बात चला करती थी, वे उनकी बड़ी चुटकी लिया करते थे। प्रस्तुत कवित्त में सूम और बिना बात वाले पत्नी द्वारा निर्देशित व्यक्तिओं पर व्यंग्य कसा गया है :—

बाजे-बाजे लोगन के यश की बड़ाई होंति, बाजे-बाजे लोगन की खोटी कसम है।
बाजे-बाजे लोग खाते और खिलाते देखे, बाजे-बाजे लोगों को देने की कसम है॥
बाजे-बाजे लोग तो मुंह के मुछारे देखे, बाजे-बाजे लोंगन की मूछें ही पसम है।
कहै "रामकुमार" मर्दन के मर्द देखे, बाजे-बाजे लोगन की जोरू ही खसम है॥

जो लोग दान देने में भींच-पना करते थे उन्हें वे बड़े आड़े हाथों लिया करते थे। जो भिखारी को भीख तक डालने में भींचू होते उन्हें तो वे एक आंख न देख सकते थे। प्रस्तुत कवित्त में ऐसे ही लोगों को झाड़ा है :—

आपतौ अतीतनाथ बाप तौ बैरागीदास, काका कङ्गालदास, भिखारी दास भाई है।
नाना है निरञ्जन दास, मामा है मङ्गतराम, फूफा फकीरदास, जोगी जती जमाई है॥
मित्र है मदारी दास, सालौ एं लपोर संख, ऐसे परिवार कीऊ कीनी जो बड़ाई है।
ऐसे घर जाय कै मांगिबे की आस करै, आस गई दूरि लाज गांठि की गमाई है॥

हमारे देश में उर्दू के प्रभाव से अनेक पात्रों के नामों में दान शब्द जोड़ कर बोला जाने लगा। तो रामकुमार जी बड़े क्रुद्ध हुए। उन्होंने इन पात्रों के 'दान' को हमारी दान देने की परम्परा में जोड़ कर एक व्यंग्य एवं विनोद पूर्ण गीत लिखा :—

बना दिया भारत को नादानी ने नादान।
देखौ जी इस देश के अन्दर कैसा-कैसा दान दिया,
हरिश्चन्द्र ने साठ भार सोंना देकर जल पिया,
संग लैकें अपनी तिरिया सुत मोरध्वज चीर दिया,
हटे न अपने दिये दिये बचन से, पलट जाय चाहे भान॥ बना...
देखो जी अब देश के अन्दर कैसे कैसे दानी हैं।
लुच्चा गुण्डा बेईमान पूरे बरदानी हैं।
सेंट परसेंट और बाज खानदानी है।
ध्यान देके सुनोगे तो होगी महरबानी है।
एक कहावत में भी बाकी चार-चार दानी हैं।
चूना, सुरमा, गोंददानी और बारूदानी है॥
गरीब से गरीब घर में मिले रायतेदान॥ बना...
ऊपर कहा हमने एक मसाले दान,
बाकी रह गया पान दान, इत्रदान, पीकदान,
सिलवर का कटोरदान, गाड़ियों में पायदान।
खानदान वालों की पतलून में इलायचीदान,
रोशनदान, चूहेदान, रायतेदान, सागदान,
मरते समय दुधमुँही गऊ करते हैं गऊदान॥३॥ बना ..

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनके कृतित्व के सम्बन्ध में अधिक न कहते हुए अन्त में दो कवित्त कहकर यह प्रसंग समाप्त करेंगे। इन कवित्तों में एक में कृषक के द्वारा कुआँ से पानी निक लने (पैरि हांकने) के कार्य को मौत का मुँह और दूसरे में उसे राजगद्दी का दिलाने वाला कहकर उसके प्रति रुचि उत्पन्न करने का कार्य किया है :—

[१]

चाम के चरस पर चतुर्भुज चतुरानन, वांही पै विसुन सो कोड़र में कन्हैया जी।
कीली में कृष्ण बसैं, बिहारी जी विहोरा में, बर्त पै बसत बाबा विश्व को रचैया जो ।।
नारे में नरसी बसैं, मचैड़ी में महादेव, बान् में ब्रह्मा चारि मुख वेद कौ रचैया जी।
कूआ काल चक्र ते विदा होत पांचौ देव खेती कौ कारु चुटिया कुल्ला कौ लिवैया जी ।।

[२]

भौंरे पै भगवान बसै, लाल जी लिलारे में गल्हैन में गरुण गोविन्द माखन के चुरैया जी,
नटैना में नटनागर, पार्छे में परमोदर, मौंगर पै मुरारीलाल चित्त के चुरैया जी,
लड़ामनी में लम्बोदर पाड़ि में है पूरन ब्रह्म, न्हैचिया में नन्दकिशोर नाच तौ करैया जी,
कूआ कालचक्र में निवास करै पाचों देव खेती कौ कारु राजगद्दी कौ दिवैया जी ।।

होली फाग

खेलत राधिका फाग गुपाल सौं,
या विधि चातुरी चाल प्रमान है।
मेलत मूठ ही झूठ कबौं,
कबहूँ पिचकी बिन ही रंग तान है ।।
जानि ठठोली तबै 'अभिराम',
निसंक ह्वै कान्ह लगौ नियरान है।
घालि गुलाल उताल लली,
कही हेरौ अली उग्यौ भोर कौ भान है ।।

× × ×

छोर पीताम्बर कम्मर तें,
मुख पोंछें लग्यौ तब यों नँद नंद है।
आँगुरी की मणि गूंदरी में,
दरस्यौ प्रतिबिम्ब प्रिया मुख चंद है ।।
गी मुख भींज कें सौं,
तब लाल गुलाल उछारि अमंद है।
हाँसी हँसाय लजाइ प्रियाहिं,
कही निरखौ विकसौ अरबिन्द है ।।

—रामभरोसे हयारण, 'अभिराम'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देव-काव्य में नारी-सौन्दर्य का चित्रण

(श्री डा० राज बुद्धिराजा शादीपुर, दिल्ली)

महाकवि देव ने 'रस-विलास' में रूप की अत्यन्त भावपरक व्याख्या की है:—

देखत ही जो मन हरै सुख अंखियन को देइ।
रूप बखानै ताहि जो जग चेरो करि लेइ॥

रूप के प्रति देव की संवेदना अत्यन्त सूक्ष्म है। केवल नारी-सौन्दर्य ही कवि की अमूर्त सौन्दर्य कल्पना के लिए एक ठोस आधार प्रदान करता है जिसको ग्रहण कर, सुरम्य कल्पनाओं से सुवासित संसार उसके अत्यधिक निकट हो जाता है। अङ्गों का जैसा सुषम संस्थान, ऋजुता, मार्दव तथा माधुर्य का जैसा विलास उसे नारी शरीर में दिखाई देता है वैसा पुरुष शरीर में नहीं। नारी का प्रत्येक अंग उसके लिए मादक सुरा है, उसकी कान्ति में तृष्णा की संतृप्ति है। नारी और रूप, रूप और नारी एक दूसरे के पूरक बन गये हैं। वय: सन्धि में छिपते हुये शैशव और यौवन निखार के लिये कवि ने पूर्णिमा के प्रभात की उपमा दी है। इस विशिष्ट अवस्था में जिन आंगिक परिवर्तनों के कारण बाला आकर्षक हो उठती है, प्राय: उन्हीं अङ्गों—नेत्र विस्फार, उरोज औन्नत्य, नितम्ब पृथुलत्व, कटि क्षीणत्व तथा मन्दगति का ही सौन्दर्यांकन किया है। बाला के 'बडेर दृग' तथा 'दृगकोर कटाक्ष' 'गुल-गुले गोरे कपोल,' 'एड़ी लसै पावक की लारी' तथा 'सोने की जुराई' द्रष्टा की सौन्दर्य चेतना को प्रबुद्ध करते हैं।

नायिका की भुजंग जैसी श्याम वेणी मोतियों से गुथी हुई है। रंगीन साड़ी के परिधान में से रूप की तरंगें उठ रही हैं, नेत्र कुरंग के समान हैं। रंग भवन की स्फुटिक भूमि पर इन सबके प्रतिबिम्ब पड़कर मिल जाते हैं, नायिका के आते ही वह रंगमयी हो उठती है:—

माँग गुही मोतिन भुअंग ऐसी बेनी,
उर उरज उतंग औ अनंग गति गौन की।
अंगना अनंग कैसी पहिरे सुरंग सारी,
तरल तुरंग दृग चाली मृग दौन की॥
रूप की तरंगनि बरंगनि के अंगनि से,
सोधै की अरंग लै तरंग उठै पौन की।
सखी संग रंग मै कुरंग नैनी भावै तौलौं,
कैधों रंग मई भूमि भई रंग भौन की॥

देव की नारियाँ तराशी हुई मूर्तियाँ हैं तथा इनका राशि-राशि सौन्दर्य सहृदय की सम्पूर्ण ऐन्द्रिय चेतना को गहराई से स्पर्श करता है:—

आई हुती अन्हवावन नायन सोंधे लिए कोइ सोधे सुभायनि।
कंचुकी छोरि धरी उबटैबो कौ ईंगुर से अंग की सुखदायनि॥
'देव' सरूप की रासि निहारति पाँय ते सीस लों सीस ते पाँयनि।
है रही ठौरई ठाढ़ी ठगी सी हंसीकर ठोढ़ी दिए ठकुरायनि॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संवेगात्मक रूप चित्रण में कवि की वैयक्तिक भावना भी लिपटी हुई है। रंग-बिरंगी साड़ियों और पारदर्शी बहुमूल्य दुकूलों से झाँकती हुई नायिका की उन्मादक शोभा और मणि-माणिक्य तथा कीमती जवाहिरातों से अभिमंडित जगमगाता हुआ उद्दीपक सौन्दर्य सहृदय के संवेगों पर चोट करता है। कवि अपनी प्रतिक्रियाओं को पाठक तक इस रूप में प्रेषित करने में समर्थ है कि उसकी सौन्दर्य-चेतना जहाँ एक ओर झंकृत होती है वहाँ वह कवि का भावात्मक अनुकूलत्व भी प्राप्त कर लेता है। कंचुकी में कसें आवें उकसै उरोज बिन्दु तथा 'बड़े-बड़े नैन कजरारे बड़े मोती नथ' द्वारा पाठक के संवेगों पर चोट होती है और वह भी अपलक कजरारे नयनों से आश्चर्य-चकित हो देखने लगता है।

नारी के उन्मादक रूप के परिणाम स्वरूप नयनोत्सव की व्यंजना में कवि की ऐन्द्रिय मुमुक्षा स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। रूप और यौवन के प्रति एक तीखी ललक, एक अमिट प्यास है:—

अंग-अंग उमग्यो परत रूप रंग, नव-
जोवन अनूपम उज्यासिन उजारी सी।
डगर-डगर बगरावति अगर अंग,
जगर मगर आपु आवति दिवारी सी॥

इस चलती-फिरती दीपावली को देखकर कवि की ऐन्द्रिय मुमुक्षा उपभोग मूलक और वासनामय हो गई है। उसमें यौवन की उष्ण गंध के साथ-साथ प्रगाढ़ता भी है। इस प्रकार के रूप वर्णन में कवि की सम्पूर्ण चेतना नारी के अङ्गों के साथ लिपटी हुई है। कहीं-कहीं वासना की मादक और भीनी-भीनी मधु गंध है तथा कहीं अत्यधिक प्रगाढ़ होगई है।

पीतरंग सभी गोरे अंग मिलि गई 'देव,'
श्रीफल उरोज आभा आभा सै अधिक सी।
छूटी अलकनि झलकनि जल कननिकी,
बिना बेंदी बंदन बदन सोभा निकसी॥

सांवरे लाल के सांवरे रूप को कंचुकी में चोबा रूप से चुपड़ना, वक्ष में भरना, शृङ्गार रूप में आस्वादन करना तथा नयनों में अंजन रूप से आँज लेने में यह उपभोग मूलक वासना कितनी प्रगाढ़ होगई है:—

देव मैं सीस बसायो सनेह कै भाल मृगम्मद बिंदु कै माख्यो।
कंचुकी में चुपरो करि चोवा लगाइ लियो उरसों अभिलाख्यो॥
मैं मखतूल गुने गहने रस मूरतिवंत सिंगार कै चाख्यो।
सांवरे लाल को सांवरो रूप मैं नैनन में कजरा करि राख्यो॥

इस प्रकार देव-काव्य के झीने आवरण में नारी का रेशमी सौन्दर्य झिलमिलाता हुआ दिखाई देता है। कहीं-कहीं तो यह उन्मादक रूप नयनाभिराम चित्रों की सृष्टि करता है तथा कहीं वासना की मधु गंध बिखेरता है तो कहीं भोली-भाली ग्राम्या का नवनीत जैसा मन तथा निर्मल यौवन तारल्य कवि की रसिकता को खुलकर खेलने का अवसर देता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बिहारी सतसई की रचना बिहारी की पत्नी ने की थी

(आचार्य डा० वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी, एम. ए., पी-एच. डी.)

कविवर बिहारीलाल की सतसई हिन्दी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त कर चुकी है। इस ग्रन्थ की जितनी टीकाऐं उपलब्ध हैं अन्य रीतिकालीन ग्रन्थ की नहीं हैं। टीकाकारों का अपना दृष्टिकोण होता है और साथ ही विद्वत्ता। फलतः प्रत्येक टीका गौरव परिपूर्ण ही होती है। आलोच्य टीका में टीकाकार का स्पष्ट उल्लेख नहीं है, इस टीका के प्रारम्भ के पृष्ठ नष्ट हैं, अतः उपलब्ध अंश के आधार पर यह ज्ञात होता है कि इसका लेखक ठाकुर कवि है। जैसा कि निम्न छन्द से स्पष्ट है :—

किय जज्ञ अमितठाकुर सुजस कहत सुकबि कोविद थकत।
नर देव देवकी नंदन के सब गुन गन को कहि सकत॥

प्रारम्भ में 'चिन्तामनि' नामक राजा की स्तुति है :—

राजनीति की रीति सों चिन्तामनि महाराज।
अमलि और नृप भुनकरे सदा सबै सुभ काज॥१४॥

'चिन्तामन' ने दिल्ली कलकत्ता में भी राज्य किया था तथा शृङ्गवेर के पास 'ऐनापुर' स्थान को प्रसिद्ध किया। इनके प्रसिद्ध पुत्र 'देवकीनन्दन' थे। ये ठाकुर कवि के समकालीन थे जैसा कि उन्होंने लिखा है :—

देत सदा कवि कोविदनि, द्विज दीनन कहँ दान।
हरषि जथोचित तोषि सब कहँ लों करौं बखान॥२६॥

ये साण्डिल्य कुल के थे तथा 'पटना' से 'कोड़े' तक इनकी राज्य सीमा थी। पार्वती-पञ्चवदन के उल्लेख होने से उनका शैव धर्मानुयायी होना भी सिद्ध है। देवकीनन्दन स्वयं काव्य रचयिता थे उन्होंने ठाकुर कवि को राजा के समान ही बना दिया था जैसा कि उन्होंने लिखा है—

छोकी नन्दन भूप मोंहि, करिके कृपा विसाल।
दे सुदान सनमान सौं, कीन्हों सम भूपाल॥
आपु अरथ कीन्हों अखिल, सतसैया के भूप।
मोहि दयो आयसु रचो पुस्तक तिलक अनूप॥
तिलक लिखन को भूप मोंहि, आयसु ऐसो दीन।
लिखो वचन हों कहत ज्यों समुझै सहज प्रवीन॥

इससे इस टीका का नाम तिलक है यह स्पष्ट है। प्रथम अध्याय में ४४ पद्य हैं इस अध्याय का नाम 'नृपस्तुति' रखा गया है और इसमें यह भी स्पष्ट किया है कि 'सतसई' बनने का कारण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी लिखूँगा तथा दोहा एवं उनके अरथ भी :—

आयसु नृप को लहि लिखो प्रथम सतसई हेत।
पुनि लिखि हौं दोहा अरथ जे अति मति सुख देत ।।

ठाकुर कवि ने बिहारी को ब्रजवासी लिखा है तथा उनकी पत्नी को सतसई का रचयिता माना है :—

विप्र बिहारी सुद्ध भो ब्रजवासी सुकुलीन।
ता तिय की कवितानि पुनि सतसैया तेहिकीन ।।

एकबार बिहारी कवि दक्षिणा लेने जयसिंह के समीप गये किन्तु राजा तो नवागता रानी के अनुराग में ऐसे बंधे थे जो बाहिर आते ही नहीं थे। बिहारी ने अपनी दशा पत्नी से वर्णित की। बिहारी की पत्नी बड़ी ही चतुर स्त्री थी, उसने एक दोहा लिखकर बिहारी को दिया और कहा कि आप फिर जाइये :—

बोध कियो तिय पिय सुनो दुख न करो मन माहँ।
दियि दोहा लिखि यों कह्यौ जाहु जहाँ नर नाह ।।

निम्न दोहा लिख कर दिया :—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहिकाल।
अली कली हीं सों बंध्यो आगे कोन हवाल ।।

जयसिंह ने इस दोहे को सुनकर सुवर्ण की मोहरों से अञ्जलि भर दीं और कहा कि—

प्रति दोहा दै हौं मुहर, करु इमि और प्रवीन ।।

कविवर बिहारी घर वापिस आये और पत्नी को राजा का सब वृत्तान्त सुनाया तब पत्नी ने चौदह सौ दोहा रचे—

"दोहा चौदह सौ किये तेहि तिय परम प्रवीन ।।"

राजा ने ७०० दोहा उनमें चुने थे, अनेक पुस्तकें लिखीं और गाँव सहित एक प्रति, बिहारी कवि को भेंट की। यही पुस्तक लेकर वे छत्रपाल नृपति के समीप भी गये, ये बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध शासक थे साथ ही अच्छे-अच्छे कविगण उनके दरबार में उस समय स्थित थे, अतः सतसई का मूल्याङ्कन वहां किया जायगा यह भावना बिहारी के हृदय में स्थित थी। छत्रसाल ने उस कृति को कवि प्राननाथ के समक्ष उपस्थित की। किन्तु उन्हें वह अच्छी न लगी। बिहारी बिना बिदा माँगे वापिस आये। स्त्री ने बिहारीलाल से कहा कि पन्ना में ठाकुर जुगलकिशोर जी विराजमान हैं, उसके निज मन्दिर में 'प्राणनाथ' कृत काव्य और सतसई दोनों रखकर कपाट बन्द करदें ठाकुर जी की सही जिस पर हो जाय उसे प्रामाणिक और श्रेष्ठ माना जाय। बिहारी ने छत्रपाल से निवेदन किया और छत्रसाल इस पर राजी हो गये, दोनों ग्रन्थ ठाकुर जी आगे रखे गये, प्रातः सतसई पर भगवान् का हस्त चिन्ह पाया गया। छत्रपाल ने तत्काल बिहारीलाल को ५ गाँव इनाम में दिये और दान पत्र भेंट किया।

इस अध्याय में ४२ पद्य हैं। राधा के इष्टत्व के कारण पर भी इस अध्याय में प्रकाश डाला गया है :—

तिय को अपनो पुरुष तजि सेवित पुरुष न आन।
जग मा राधा इष्ट किय, कवि तिय याते जान ।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बिहारी की पत्नी को राधा का इष्ट था ।

शैली—प्रारम्भ में कवि का दोहा है तदुपरान्त ब्रजभाषा में टीका की गई है टीका अति विस्तार पूर्वक लिखी गई है । राधा ही बिहारी की पत्नी की इष्ट देव थीं । इसके प्रमाण में निम्न दोहा लिखा है :—

दोहा—मेरी भव बाधा हरौ राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झांई परें श्याम हरित दुति होइ ।।१।।

टीका—यहां मङ्गलाचरण में राधा जू को वरन्यो सो कृष्ण प्रिया हैं जगमाता और सतसई की कर्ता जो बिहारी की तिय है ताकी इष्ट देवता हैं और तियकों अपनो पुरुष सिवाइ अन्य पुरुष की सेवा उचित नाहीं है ताते बिहारी की तिय जगमाता राधा जू को इष्ट कियो ताते बिहारी की तिय अति प्रवीन जानों ।

बिहारी की तिय काहू सों कहति है, सोई=राधा मेरी जो है, भवबाधा (संसार की बाधा) हरिलेइ, सोई जाके तन=देह की परछाई परे ते श्याम=पाप हरित होइ=हरि जाय और दुति होइ ।

इस प्रकार—अनेक अर्थ लिखे गये हैं तथा टीका के अन्त में भावार्थ भी है ।

ब्रजभाषा की यह टीका वस्तुतः अवलोकनीय है । इसकी हस्तलिखित प्रति मेरे पास सुरक्षित है ।[1]

---

१. डा० सुधेश जी का मत है कि उक्त टीकाकार के प्रामाण्य पर भी विचार होना चाहिए ।

मैं भी इसका अनुमोदन करता हूँ तथा विचार प्रस्तुत करना भी उचित मानता हूँ । शंका है—ठाकुर कवि ने अपनी पद्य बद्ध रचना में सतसई की लेखिका कवि की पत्नी को ही क्यों सिद्ध किया है ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय इतिहास में वाकाटक वंश

(श्री वृन्दावनदास)

वाकाटक साम्राज्य का काल सन् २४८ से ३४८ ई० तक और परवर्ती वाकाटक काल सन् ३४८ से ५५० ई० तक समझा जाता है। इस राजवंश का प्रथम नरेश विन्ध्य शक्ति नाम का ब्राह्मण था। इन राजाओं का गोत्र विष्णु वृद्ध था जो भारद्वाजों का एक उपविभाग है। विन्ध्य शक्ति का पुत्र प्रवरसेन प्रथम था जिसने चार अश्वमेध यज्ञ किये और सम्राट की उपाधि धारण की। इसने इतनी लम्बी अवधि तक राज्य किया कि इसका पुत्र गौतमी पुत्र राज्य ही न कर सका और इसका नाती रुद्रसेन प्रथम इसका उत्तराधिकारी बना। गौमती पुत्र का विवाह नागराजा भव-नाग की कन्या के साथ हुआ था। उससे ही रुद्रसेन प्रथम का जन्म हुआ। रुद्रसेन प्रथम का पुत्र पृथिवीषेण प्रथम था। पृथिवीषेण प्रथम तक इस राजवंश को अस्तित्व में आये १०० वर्ष व्यतीत हो चुके थे।

पृथिवीषेण प्रथम के पुत्र रुद्रसेन द्वितीय का विवाह चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की पुत्री प्रभावती गुप्ता के साथ सम्पन्न हुआ था। प्रभावती गुप्त सामाज्ञी कुवेर नागा की पुत्री थी जो नाग राजवश की कुमारी थी। उपरोक्त वैवाहिक सम्बन्धों से स्पष्ट है कि नाग, वाकाटक और गुप्तों ने इन आधारों पर अपनी मैत्री दृढ़ की। इन वैवाहिक सम्बन्धों के कारण आपसी सम्बन्धों में खटपट कम हुई और यह सम्मिलित शक्ति विदेशी शक्ति से लोहा लेने और उसे पराजित करने में सक्षम रही। यदि मध्यकाल में भी इसी प्रकार की मैत्री सम्भव हुई होती और हिन्दू राजा लोग आपस में युद्धरत न रहते तो भारत में मुसलमानी राज्य कदापि न हो पाता और पृ वीराज चौहान और राणा साँगा को उस पराजय का मुँह न देखना पड़ता जिसके फलस्वरूप भारत पराधीन हो गया।

रुद्रसेन द्वितीय की मृत्यु असमय होगई। परिणाम स्वरूप प्रभावती गुप्त अपने अल्पवयस्क पुत्र दिवाकर सेन की अभिभावक बनकर राज्य करती रही। उस समय दिवाकर सेन की अवस्था तेरह वर्ष की थी। इसके बाद दामोदर सेन–प्रवरसेन अपने दूसरे पुत्र के शासन में भी उसे अभि-भावक के रूप में राज्य-काज सम्हालना पड़ा। प्रभावती गुप्त ने लगभग २० वर्षों तक अपने दो पुत्रों की अल्पवयस्कता में राज्य किया।

यद्यपि समुद्र गुप्त और उसके बाद के गुप्त सम्राटों के काल में वाकाटक लोग गुप्त साम्राज्य के अन्तर्गत ही थे परन्तु वे लोग पूर्णरूपेण स्वतन्त्र भी थे। वे गुप्तों के अधीनस्थ करद राजा थे और अपनी इच्छानुसार युद्ध और सन्धि कर सकते थे।

उनका राज्य बुन्देल खण्ड की पश्चिमी सीमा पर स्थित अजयगढ़ और पन्ना में होता था। समस्त मध्य प्रदेश, बरार और त्रिकूट पर उनका राज्य था। प्रवरसेन ने चार अश्वमेध यज्ञ किये। चार अश्वमेध यज्ञ किये जाने से सिद्ध होता है कि प्रवरसेन ने एक लम्बी अवधि तक राज्य किया। वाकाटकों ने वाजपेय यज्ञ के अतिरिक्त वृहस्पति सव भी किये। वृहस्पति सव केवल ब्राह्मण ही कर सकते हैं इससे सिद्ध होता है कि वाकाटक लोग ब्राह्मण थे। ऐसा प्रतीत होता है कि वाकाटक वंश के प्रवर्तक का नाम विन्ध्य शक्ति इसलिये पड़ा कि वह विन्ध्य से निकली हुई एक नवीन शक्ति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के रूप में प्रगट हुआ। ऐसा सम्भव है कि वह नागों का कोई महान सेनापति हो जिसने अनेक प्रदेशों को जीतकर अपनी विजय दुंदुभी बजाई हो और अपना नाम क्षेत्रीय देशभक्ति के आधार पर धारण कर लिया हो। वाकाटक सम्राट प्रवरसेन ने पुष्यमित्र शुङ्ग और सातवाहन सम्राट सातकर्णि की भाँति 'द्विरश्वमेधयाजिन्' की उपाधि धारण की थी। इसका उल्लेख वायु, विष्णु और ब्रह्मांड पुराणों में मिलता है।

वाकाट नाम का कस्बा झाँसी जिले में ओड़छा के ६ मील उत्तर में ओड़छा तहसील में ही है। यह ब्राह्मणों का गाँव है। यहाँ के निवासी ब्राह्मण अपने को द्रोणाचार्य का वंशज बतलाते हैं और भारद्वाज ब्राह्मण कहलाते हैं। गंज नचना जो कि एक पुराना कस्बा है और जिसमें किला भी अति प्राचीन है वही पुराना चनका या कांचन का नामी स्थान है जहाँ वाकाटकों की राजधानी थी।

प्रवरसेन के पिता विन्ध्य शक्ति के नाम के कोई सिक्के नहीं मिलते हैं। प्रवरसेन और उसके पौत्र रुद्रसेन प्रथम के नाम के बहुत मिलते हैं। विन्ध्यशक्ति वस्तुतः नाग सम्राटों का अधीनस्थ राजा था पहिले नाग लोग विदिशावृष कहलाते थे फिर उनको किलकिला वृष कहा जाने लगा। विंध्यशक्ति को किलकिला राजाओं में से मानने का अर्थ यह था कि वह नागों का ही अधीनस्थ सेनापति या राजा होगा। भूतनन्दी से नाग राजाओं को किलकिला राजा कहा गया है। किल-किला नदी बुन्देलखण्ड में पन्ना के पास है।

पुराणों में लिखा है कि वाकाटकों का साम्राज्य ९६ वर्ष रहा। वाकाटकों के मूर्धाभिषिक्त राजा विन्ध्यशक्ति ने ३६ वर्ष और उसके पुत्र प्रवरसेन प्रथम ने ६० वर्ष राज्य किया। प्रवरसेन के पौत्र रुद्रसेन प्रथम के काल से समुद्रगुप्त के विजय अभिमान के कारण वाकाटक साम्राज्य का अन्त हो गया और वाकाटक लोग गुप्तों के अधीनस्थ राजा हो गये। रुद्रसेन प्रथम के उत्तराधि-कारी वाकाटक राजागण गुप्तों के अधीनस्थ थे। परन्तु रुद्रसेन प्रथम का पुत्र पृथिवषेण चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य का सम्बन्धी था। पृथिवीषेण के पुत्र रुद्रसेन द्वितीय से चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की पुत्री प्रभावती गुप्त का विवाह हुआ था। इस कारण वाकाटक राजा की स्थिति कुछ सम्मानजनक थी और विशेषरूप से अधीनस्थ राजा की सी न थी। इसी कारण उसे अपने सिक्के प्रचलित करने की भी छूट थी यद्यपि गुप्तों के समय में अधीनस्थ राजाओं को अपने सिक्के चलाने का अधिकार न था। पृथिवीषेण, रुद्रसेन द्वितीय, प्रभावती गुप्त, दिवाकरसेन, दामोदरसेन आदि सभी के सिक्के मिले हैं।

प्रवरसेन को पुराणों में प्रवीर भी लिखा है। वह बड़ा योद्धा और विजेता था। उसने चार अश्वमेध यज्ञ किये जो इस बात के सूचक हैं कि उसने चार बड़े-बड़े युद्धों में विजय प्राप्त की थी। वह अपने आपको मानधाता और वसु के समकक्ष मानता था। उसने अपने आपको समस्त भारत का सम्राट घोषित किया था। प्रवरसेन के चार पुत्र थे, सबसे बड़ा गौतमी पुत्र तथा तीन और। तीन लड़के उपराज के रूप में राज्य करते थे। ज्येष्ठ पुत्र गौतमी पुत्र अपने पिता के लम्बे राज्यकाल के कारण उत्तराधिकार प्राप्त न कर सका, गौतमी पुत्र के पुत्र रुद्रसेन प्रथम ने प्रवरसेन का उत्तराधिकार प्राप्त किया। यह भारशिव राजा का दौहित्र था और अपने पितामह के जीवनकाल में ही भारशिव राजा के रूप में सिंहासनासीन हुआ था और अपने पितामह प्रवरसेन के संरक्षण से पुरिका में शासन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करता था। बाद में वह चनका में भी प्रवरसेन का उत्तराधिकारी हुआ। यह समुद्र गुप्त का समकालीन था।

रुद्रसेन प्रथम का पुत्र पृथिवीषेण प्रथम था। यह समुद्रगुप्त और चन्द्रगुप्त द्वितीय का समकालीन था। इसने कुन्तल राज्य पर विजय प्राप्त की थी। पृथिवीषेण का पुत्र रुद्रसेन द्वितीय हुआ जिसे चन्द्रगुप्त द्वितीय की पुत्री प्रभावती गुप्त व्याही थी। प्रभावती गुप्त सम्राज्ञी कुवेर नागा की कन्या थी। उसके दो पुत्र हुए दिवाकर सेन और दामोदर-प्रवरसेन। इन दोनों पुत्रों की अल्पवयस्कता में प्रभावतीगुप्त ने अभिभाविका के रूप में लगभग २० वर्ष शासन किया।

दामोदरसेन का पुत्र नरेन्द्रसेन ८ की वर्ष अवस्था में सिंहासनारूढ़ हुआ। आगे चलकर इसने कुन्तलराज की कन्या के साथ विवाह किया। कोशल, मेकला और मालव के राजा इसके अधीनस्थ करद राजा थे। नरेन्द्रसेन के दो पुत्र थे, पृथिवीषेण द्वितीय और देवसेन द्वितीय। देवसेन परम सुन्दर राजा था। वह आनन्द से जीवन व्यतीत करना पसन्द करता था। उसने अपने पुत्र हरिषेण के लिए सिंहासन का परित्याग कर दिया था।

वाकाटकों का पुराणों के आधार पर निम्नलिखित तिथिक्रम निश्चित होता है—

१. विंध्यशक्ति	सन् २४८ – २८४ ई०
२. प्रवरसेन प्रथम	सन् २८४—३४४ ई०
३. रुद्रसेन प्रथम	सन् ३४४—३४८ ई०
४, पृथिवीषेण प्रथम	सन् ३४८—३७५ ई०
५. रुद्रसेन द्वितीय	सन् ३७५—३९५ ई०
६. प्रभावती गुप्ता (दिवाकर सेन) की अभिभावक	सन् ३९५—४०५ ई०
७. प्रभावती (दामोदर सेन की अभिभावक)	सन् ४०५—४१५ ई०
८. प्रवरसेन द्वितीय	सन् ४१५—४३५ ई०
८. नरेन्द्रसेन	सन् ४३५—४७० ई०
९. पृथिवीषेण (द्वितीय)	सन् ४७०– ४८५ ई०
१०. देवसेन	सन् ४८५—४९० ई०
११. हरिषेण	सन् ४९०—५२० ई०

वाकाटकों के राज्यकाल के तीन विभाग हैं :—

[१] साम्राज्यकाल [२] गुप्तों के साथ-साथ राज्यकाल [३] गुप्तों के बाद का समय।

पुराणों में वाकाटकों के साम्राज्य का काल ९६ वर्ष बताया गया है। वाकाटकों के इतिहास का साम्राज्यकाल ३४४ ई० में समाप्त हो जाता है। रुद्रसेन प्रथम के राज्यभिषेक काल अर्थात् सन् ३४४ ई० से ४३५ ई० तक वाकाटक लोग गुप्तों के अधीनस्थ करद राजा थे। नरेन्द्रसेन के समय से अर्थात् ४३५ ई० से गुप्तों के बाद का समय आता है जो येन केन प्रकारण ५२० ई० तक चलता रहा। नरेन्द्रसेन से हरिषेण तक गुप्तों के बाद का समय है।

पृथिवीषेण द्वितीय ने अपने डूबे हुए वंश का उद्धार किया था। हरिषेण ने कुन्तल, अवंती, कलिंग, कोशल, त्रिकूट लाट और आंध्र देशों पर विजय प्राप्त की थी। इसी के मन्त्री हस्ति भोज ने अजन्ता का गुहा मन्दिर बनवाया था और बौद्ध भिक्षुओं को अर्पित किया था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जब तक समुद्रगुप्त सम्राट पद पर न पहुंचा था तब तक तो उसका राज्य वाकाटक साम्राज्य के अन्तर्गत ही था। इस समय उसका राज्य अयोध्या और काशी के मध्य किसी स्थान पर था। वह वाकाटकों का करद और अधीनस्थ राजा था। उसके सिक्के भी यह बात प्रगट करते हैं कि राजा कि हैसियत से जारी किये हुए सिक्के सम्राट पद से निकले हुए सिक्कों से बहुत भिन्न हैं। गरुड़ध्वज का विरुद उन्हीं सिक्कों पर चिह्नित है जो सम्राट पद से निकले हैं। प्रवरसेन प्रथम की मृत्यु के बाद ही उसे अपने विजयाभियान करने और अपना साम्राज्य विस्तृत करने का अवसर मिला था।

प्रवरसेन की मृत्यु होते ही समुद्रगुप्त ने तुरन्त अपना वह अभियान आरम्भ कर दिया और उसने प्रयाग और कौशाम्बी के युद्ध क्षेत्र में रुद्रसेन को पराजित किया, कदाचित् इन्हीं युद्धों में नागराजा अच्युत, नागसेन और गणपति नाग की मृत्यु हो गई थी। यद्यपि समुद्रगुप्त के समय में वाकाटक साम्राज्य समाप्त हो गया फिर भी वाकाटकों का राज्य गुप्तों के सामाज्य के अन्तर्गत चलता रहा। गुप्तों ने वाकाटकों से बराबरी का सम्बन्ध रक्खा जैसा कि गुप्तों और वाकाटकों के वैवाहिक सम्बन्धों से विदित है।

वाकाटक लोग अपने पुत्रों और सम्बन्धियों को भिन्न-भिन्न प्रान्तों का शासक नियुक्त करते थे। प्रवरसेन के चार लड़के प्रान्तों के शासक नियुक्त हुए। उन प्रान्तों के नाम थे माहिषी, मेकला, कोसला और विदुर। इन सभी प्रान्तों के विषय में पुराणों में बताया गया है कि वहाँ कौन-कौन से शासक थे और उन्होंने कितने-कितने समय राज्य किया। मेकला के राजाओं को विन्ध्यकों का वंशज बताया गया है और इन राजाओं को वायु पुराण में सप्तान्ध्र कहा है। मेकला आजकल की वस्तर रियासत का क्षेत्र थी। माहिषी से अभिप्राय माहिष्मती से है जो नर्मदा किनारे नीमाड़ के समीप है। नैषध की राजधानी विदूर थी जो आजकल का बीदर है। कोसला उड़ीसा और कलिंग के प्रदेश को कहते थे। महीषियों का राजा सुप्रतीक नभार बड़ा प्रतापी था, वह अपने देश का स्वामी था और उसने तीस वर्ष राज्य किया। माहिषी क्षेत्र में तीन जातियाँ बसती थीं। उनके नामों के अन्त में मित्र शब्द जुड़ा रहता था जैसे पुष्यमित्र, पटुमित्र और पद्ममित्र। ब्रह्माण्ड पुराण में त्रिमित्रों का उल्लेख है। इनके राज्य का प्रजातन्त्री होने और उस प्रजातन्त्र के दस प्रजातन्त्री राष्ट्रपतियों का उल्लेख है। पुराणों से पता चलता है कि मेकला में सात कोसला में नौ और नैषध (विदूर-बरार) देश में नौ शासक हुए। पुरिका में नागपुर, अमरावती और खान देश शामिल थे। प्रवीर पुरिका और चानका दोनों का शासक था।

समुद्रगुप्त की जिन ऐतिहासिक विजयों का उल्लेख उसके शिला लेखों में है वे सब उन राजाओं और प्रजातन्त्रों पर थीं जो वाकाटक साम्राज्य के अन्तर्गत थे। यह वाकाटक साम्राज्य की खूबी थी कि तत्कालीन लगभग समस्त प्रजातन्त्री भारत ने वाकाटकों को अपना नेता मान लिया। प्रवरसेन अपने को समस्त भारत का सम्राट घोषित करता था और उसका यह मानना ठीक भी था। जब प्रवरसेन के उत्तराधिकारी रुद्रसेन प्रथम की समुद्रगुप्त के हाथों पराजय हुई तो उस समस्त वाकाटक साम्राज्य पर जिसमें पूर्वी पंजाब, गुजरात, राजपूताना, मालवा आदि के आभीर मालव, आर्जुनायन, यौधेय, माद्रक आदि गण राज्य साम्मिलित थे समुद्रगुप्त का आधिपत्य हो गया। यह स्पष्ट ही है कि गुप्त-साम्राज्य की नींव वाकाटक साम्राज्य के ध्वंस पर ही पड़ी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाकाटक साम्राज्य की उपलब्धियाँ:—प्रवरसेन प्रथम ने अखिल भारतीय साम्राज्य की कल्पना को न केवल पुनर्जीवित किया वरन् साकार करके दिखा दिया। कुशनों को भारत से निकालने का काम वाकाटकों का ही था। वाकाटकों के समय में संस्कृत का पुनरुद्धार हुआ। उस काल में संस्कृत न केवल साहित्य की भाषा थी अपितु उसका प्रयोग सरकारी कामों में भी होता था और वह विद्वानों में बोलचाल की भाषा हो गई थी। कौमुदी महोत्सव में उस समय के साहित्यिक आन्दोलन का चित्र है। कौमुदी महोत्सव ग्रन्थ एक महिला द्वारा एक आसन पर बैठ कर लिखा गया था। वाकाटकों के समय में हिन्दुओं का सामाजिक पुनरुत्थान हुआ। वाकाटक लोग कला-प्रेमी थे। अजन्ता की गुफाओं का निर्माण वाकाटकों ने कराया था। वाकाटक लोग कट्टर शैव थे। केवल रुद्रसेन द्वितीय अपती पत्नी प्रभावती गुप्त और श्वसुर चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के प्रभाव के कारण वैष्णव मत का मानने वाला था।

हिन्दी का एक अज्ञात काव्य—
वसन्त लतिका की अपूर्ण प्रति

(श्री अगरचन्द 'नाहटा' बीकानेर)

हिन्दी साहित्य की परम्परा बहुत प्राचीन और समृद्ध है : ज्यों-ज्यों खोज की जाती है नित्य नये-नये और अज्ञात ग्रन्थों की जानकारी मिलती रहती है। वैसे भी अभी प्राचीन हिन्दी-साहित्य की खोज का कार्य करीब ७० वर्षों से चलते रहने पर भी थोड़े से प्रदेशों में ही हुआ है और वह भी पूरा नहीं। राजस्थान में प्राचीन हिन्दी साहित्य बहुत अधिक सुरक्षित है और वहाँ तो खोज का कार्य और भी कम हुआ है। इसलिए अभी सैकड़ों कवियों की हजारों रचनायें राजस्थान में अज्ञात अवस्था में पड़ी है। कई वर्ष पहले मुन्शी देवी प्रसाद जी ने इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय कार्य किया था। फिर जयपुर के हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन पर 'राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार' ग्रन्थ संवत् २००१ में प्रकाशित हुआ। राजस्थान हिन्दी विद्यापीठ के साहित्य संस्थान, उदयपुर से राजस्थान के हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों की खोज के चार भाग प्रकाशित हुये जिनमें से भाग दो और चार मेरे सम्पादित हैं और उनमें केवल अज्ञात ग्रन्थों का ही परिचय दिया गया है तदनन्तर डा० मोतीलाल मेनारिया ने राजस्थान का हिन्दी साहित्य संबंधी शोध प्रबंध लिखा जो राजस्थान का पिंगल साहित्य के नाम से प्रकाशित हो चुका है। डा० मोतीलाल शर्मा का राजस्थान के मत्स्य प्रदेश की हिन्दी सेवा नामक शोध प्रबन्ध भी राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित हो चुका है। भरतपुर के हिन्दी साहित्य समिति से वहाँ के कवियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और उनकी रचनाओं का परिचय ग्रन्थ निकल चुका है। इतना कार्य हो जाने पर भी अभी बहुत बड़ा कार्य शेष पड़ा है।

प्राचीन हिन्दी साहित्य के बहुत से ग्रन्थ अब पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हैं। उनकी अपूर्ण और त्रुटित प्रतियाँ यत्र-तत्र मिल जाती हैं। पर पूरी प्रति प्राप्त हुए बिना उनके रचयिता, रचनाकाल, ग्रन्थ परिमाण आदि आवश्यकीय ज्ञातव्य प्राप्त नहीं होता। हमारे संग्रह की एक प्रति में प्राप्त ऐसा ही एक अज्ञात हिन्दी काव्य का विवरण यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है।

कई वर्ष पूर्व हस्तलिखित प्रतियों की खोज एवं संग्रह कार्य मैंने प्रारम्भ किया। तो बसन्त-लतिका नामक अज्ञात हिन्दी काव्य की एक त्रुटित प्रति प्राप्त हुई। जिसमें पत्रांक १७ से ४९ तक के पत्र हैं। अर्थात् प्रारम्भ के १६ पत्र और अन्त के पत्र अप्राप्त हैं। बसन्तलतिका के प्रथम स्तवक की प्रथम कलिका प्रारम्भ के पत्रों में थी वे तो अब प्राप्त नहीं हैं। द्वितीय कलिका के भी ६३।। पद्य उन्हीं पत्रों में थे अतः पद्याङ्क ६४ से ही प्राप्त है। अंतिम पत्र में द्वितीय स्तवक की प्रथम कलिका पूर्ण होती है और द्वितीय कलिका के ७ पद्य लिखे हुए हैं। इसके बाद तृतीय स्तवक और कलिकायें थीं यह बतलाने का कोई साधन प्राप्त नहीं है। प्राप्त कलिकाओं का विवरण इस प्रकार है—

१. प्रथम स्तबक, द्वितीय कलिका—इसमें ८३ पद्य हैं। दोहा, सोरठा, सवैया, कवित्त, छन्दों का प्रयोग हुआ है। पद्याङ्क ६८ में मधुलेखाजु सवैया शीर्षक दिया हैं। प्रारम्भ व अन्त का पद्य इस प्रकार है—

.....मज्यावत लाल चबावत वीरा ।।६४।।

दोहा—मालिन सुथरी सामु है, बैठि विहंसि भरि चाय।
फूल कलि वनमाल तन, श्याम देत पहिराइ ।।६५।।

अन्त—मनमोहन भयभीर कै, आनन्द नींद समाधि।
प्यारी छविल पढ़ाय मन, सोय रहै हित नाधि ।।८३।।

इति श्री मद्बसन्त लतिकायां प्रथम स्तब के द्वितीय कलिका ।।

२. प्रथम स्तवक, तृतीय कलिका—इसमें पद्य ९४ हैं। उसमें धनिष्टा, कामदा, प्रियंबदा, बासन्ती, मदोन्मदा, कर्पूरलतिका, गुनमाला, अम्बिका, पयोद, विमल, पुष्पाङ्क, मधुमङ्गल, हासा, मधु, भेरी गौतमी, पौढ़िपलिका, सखियों आदि का नाम है।

३. प्रथम स्तवक, चतुर्थी कलिका—इसमें ६१ पद्य हैं। श्री श्याम, भद्रा, चन्द्रावली, श्यामला, पद्मा, गोपाली, विमला, पाली, विशाखा, तारिका, मंगला, ललिता, मनिमंजरी, कर्पूरलतिका, बासन्ती, सखियों के नाम वाले पद्य हैं।

४. प्रथम स्तबक, पंचम कलिका—इसमें ९४ पद्य हैं। श्री दाम, श्री वराम, श्री सूबल, श्री लाल, श्री वधुवन, मधुमङ्गल, ब्रज सुन्दरि गन, श्री ललिता श्री वीरा, मोहनी, श्री प्रिया, के नाम पाये जाते हैं। प्रथम स्तबक यहाँ तक समाप्त होता है। अन्तिम दोहा और प्रशस्ति इस प्रकार है :—

दोहा—चौकि चले निजु ठौर मै, पञ्चम जुगल किसोर।
को जानै निसि सेस मै, को ससि कौन चकोर ।।९४।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इति श्रीमद्वसंतल लतिकायां पञ्चमी कलिका समाप्ता ।

श्री मन्मरकत रूचिरूचिरतरु तरूणा बलम्बितायां ।
नवदल दलित ललित मंजु मञ्जरी संयुतायां ।।

अलिकुल कृतायां प्रादुर्भूत केलि कोरक भाम प्रथमस्तबकः ।

५. द्वितीय स्तवक का प्रारम्भ इस दोहे से होता है :—

अमलमुखी प्राची प्रिया, मुख पट करकैं दूर ।
प्रात भाल नभ में दियो, लाल अरून सिंदूर ।।१।।

५. द्वितीय स्तबक की प्रथम कलिका—इसमें ४३ पद्य है । इसमें श्री वृन्दा, लाल, ललिता, मदोन्मदा, विशाखा, मधुमती, चित्रा, कलभाषिणी, इन्दुलेखा, रत्नवेणि, कर्पूरलतिका, रङ्गदेवी, मनिमती, सुदेवि, मधुलेखा, रूपमञ्जरी, के नाम पद्यों के प्रारम्भ में लिखे गये हैं । अन्तिम दोहा इस प्रकार है—

नैन वैन में सकुच लै,हिय में प्रियतम नेह ।
पहुँची सब चुपचाप सों, अपनी अपनी गेह ।।

इति श्रीमद्वसन्त लतिकायां द्वितीय स्तबके प्रथमा कलिका ।

६. दूसरी कलिका का प्रारम्भिक दोहा इस प्रकार है :—

हारित मीत मदनुजझल, मलत अमल वर ओप ।
प्रात दिखाई दीन्ह दिवी, देव दिवाकर कोप ।।

पद्याङ्क ६ वाले कवित के पहले श्री पूर्णमासीजु और ७ वें के पहले श्री जहिलांजु का नाम लिखा है । इसके बाद का अंश अप्राप्त है ।

ग्रन्थ कवित्व पूर्ण है । श्री कृष्ण भक्ति सम्प्रदाय के कवि की रचना है । पर किस सम्प्रदाय के किस कवि ने इसकी कब रचना की और कितने स्तबक और कलिकाओं में ग्रन्थ पूर्ण हुआ है यह पूरी प्रति मिलने पर ही निश्चित रूप से कहा जा सकता है ।

मथुरा, वृन्दावन आदि ब्रज प्रदेश में इसकी रचना हुई होगी । अतः यहाँ के विद्वान् इस ग्रन्थ के संबंध में खोज करके अधिक प्रकाश डालें यही अनुरोध है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विचार परिचर्या

स्वातन्त्रोत्तर भारतीय साहित्य की विकासमान प्रवृत्ति में ब्रजभाषा की विकासोन्मुखी गति कौ राष्ट्रीय महत्त्व

(श्री मोहनलाल शर्मा, एम० ए०, सा० रत्न, कोसीकलाँ)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पाछें भारत की सर्वाङ्गीण उन्नति करिबे कौ प्रयास हमारे देश में पूरी शक्ति व भावना के सङ्ग प्रारम्भ भयौ। अपनौ संविधान बनाइके हमने लोकतान्त्रिक गणराज्य की व्यवस्था कूँ स्वीकार कीयौ तथा जनतन्त्रात्मक प्रणालीन के आधार पै अपने विकास की दिशा निर्धारित करी। सामाजिक कुरीतीन कूँ दूरि करिबे के ताईं शासकीय और रूप ते ऐसौ वातावरण निर्माण कियौ गयौ जामें प्रगतिशील समाज की आवश्यकतान कूँ अनुभव करते भए परम्परान के सुधार और नवीन-नवीन रूपन के ग्रहण करिबे की ओर उत्साह दिखाई दियौ। राजनैतिक चैतन्य तौ इतने प्रखर रूप ते मुखरित भयौ कै भारत में प्रजातन्त्र की जड़ बीस वर्ष के या अल्पकाल में बहुत गहरी पहुँच गई। नारी और युवक जीवन के सम्बन्ध में हू एक वैचारिक क्रान्ति कौ सूत्रपात भयौ। धर्म हू एक नवीन परिवेश के सङ्ग उपस्थित भयौ। इन समस्त प्रकार के प्रयासन कौ सामूहिक प्रभाव भारतीय साहित्य पै बड़े ही स्वाभाविक रूप में परयौ है।

यों तौ भारतीय साहित्य सदैव तेई नए जीवन कौ प्रणेता और नवीन विचारन कौ उद्गाता रह्यौ है। विचार और लेखन स्वातन्त्र्य हमारे साहित्य की विशेषता रही है। याही कारण वामें एक प्रकार कौ प्रवाह, गतिशीलता और विकासमान प्रवृत्ति सदैव ते रही है। अपने युग के कालगत बन्धन कूँ तोरिकें भारतीय साहित्य ने सदैव अतीतोन्मुख ह्वै कें भविष्य की राह बनाई है। ई वाकौ अपनौ विशिष्ट गुण है। चाहे भाषान के परिधान अलग-अलग रहे हों, बोलीन के शृङ्गार ते रङ्ग बिरङ्गी छटा दिखाई दै रहीं हों, लिपीन के अलग-अलग धरातलन पै थिरकन ह्वै रही हो पर सबकौ सामूहिक स्वर एक ही सुमधुर ध्वनि निकारै है, एक ही राग की अलग-अलग ताल सुर से लगै हैं और एक ही नृत्य की अलग-अलग मुद्रा दिखाई परै हैं। अनेकत्व में एकत्व कौ भव्य स्वरूप और बाकी सहज अभिव्यक्ति भारतीय साहित्य की सार्वदेशिक विशेषता हैं।

कहनौ न होगौ कै स्वतन्त्रता के पश्चात् या राष्ट्रीय एक्य की अनुभूति अपने प्रबलतम वेग में होंनी आवश्यक समझी गई। इतने विशाल राष्ट्र कूँ संवारबे और सुधरिबे के ताँईं बड़ी एकता, धैर्य, लगन और उत्साह की आवश्यकता अपेक्षित ही। वस्तुतः ई भारतीय साहित्य कै ताईं गौरव-मय बात है कै या संक्रमण-काल में हू वाकौ सार्वदेशिक महत्व रह्यौ और सांस्कृतिक पुनर्जागरण के ताईं वानें अपने राष्ट्रीय स्वरूप की रचना करी। देश के सभी भागन की साहित्यिक अभिव्यक्ति राष्ट्रीय एक्य के या सांस्कृतिक उत्तरदायित्व कूँ लिए भए है। या प्रकार भारतीय साहित्य ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के पाँछे जहाँ एक ओर विकासमान पथ अपनायौ है वहाँ सङ्ग में दूसरी ओर राष्ट्रीय आवरण धारण कर अपनौ सार्वदेशिक महत्व प्रतिष्ठित कियौ है।

सम्पूर्ण भारतीय साहित्य के अन्तर्गत ब्रजभाषा साहित्य में हू या काल में नवीन प्रेरणा कूँ नवीन सृजन प्रदान करि अपनौ उत्तरदायित्व निभायौ है। कहा काव्य, कहा गद्य, कहा लोकतत्व और कहा अनुसन्धान, कहा नाट्य और कहा कथा लगभग समस्त क्षेत्रन में ब्रजभाषा साहित्य के अन्तर्गत या काल में एक ऐसी विकासोन्मुखी गति दृष्टिगोचर होय है, जाकौ राष्ट्रीय दृष्टि से स्थायी महत्व है।

—:**:—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रजभाषा साहित्य सम्मेलन : कुछ प्रश्न

(डा० सुधेश, वृन्दावन)

वर्षों के व्यवधान के बाद ८ दिसम्बर सन् १९६७ को वृन्दावन की नगरपालिका के तत्वावधान में ब्रजभाषा साहित्य सम्मेलन सम्पन्न हुआ, जिसकी अध्यक्षता अलीगढ़ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष डा० हरवंशलाल शर्मा ने की। उनके अतिरिक्त डा० विजयेन्द्र स्नातक, श्री प्रभुदयाल मीतल, श्री जवाहर लाल चतुर्वेदी, श्री ललिताचरण गोस्वामी, श्री ब्रजभूषण शरण, डा० कैलाशचन्द्र भाटिया आदि विद्वानों ने इसमें भाग लिया।

विषय-प्रवर्तन करते हुए श्री प्रभुदयाल मीतल ने ब्रजभाषा की उत्पत्ति, विकास एवं प्रसार का संक्षिप्त इतिहास बताने के बाद जिन समस्याओं की ओर संकेत किया, वे ये हैं :—

१—ब्रजभाषा को शिक्षा के पाठ्यक्रम में सम्मिलित कराना।
२—ब्रजभाषा के उपलब्ध साहित्य का संरक्षण।
३—ब्रजमंडल के अन्तर्गत तथा उसके बाहर बिखरे ब्रजभाषा साहित्य के विपुल भंडार की खोज।
४—विभिन्न प्रदेशों में प्राप्त ब्रजभाषा साहित्य को देवनागरी लिपि में रूपान्तरित करना।
५—ब्रजभाषा का प्रामाणिक व्याकरण, तथा शब्दकोष प्रकाशित करना।
६—ब्रजभाषा गद्य का प्रचार, ब्रजभाषा साहित्य के इतिहास का निर्माण।
७—ब्रजभाषा के महाकवियों की प्रामाणिक रचनाओं का प्रकाशन।
८—ब्रज प्रान्त का निर्माण।

डा० हरवंशलाल शर्मा, श्री ललिताचरण गोस्वामी और श्री जवाहरलाल चतुर्वेदी, प्रभृति विद्वानों ने बड़े गम्भीर विद्वत्तापूर्ण वक्तव्य दिये, जिनमें ब्रजभाषा की प्राचीन परम्परा, उसके माधुर्य, व्यापकता तथा महत्ता की चर्चा अधिक रही। जिन प्रश्नों को आरम्भ में मीतल जी ने उठाया था, उन पर ब्यौरेवार विचार करने का अवकाश शायद वक्ताओं के पास नहीं था। यों तो 'ब्रज साहित्य सम्मेलन' का आयोजन स्वयं में एक सफलता है, पर उसी पर सन्तोष न करके दूरगामी परिणामों की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए कहना पड़ेगा कि यह 'सम्मेलन' कुछ असफल रहा। ऐसे एक दर्जन 'सम्मेलन' पहले भी हो चुके हैं, उनका क्या परिणाम निकला सब पर विदित है। ब्रजभाषा का गुणगान करने मात्र से ब्रजभाषा की उन्नति नहीं होगी। जिन महानुभावों से आशा की जाती थी कि विचार विमर्श द्वारा ठोस समाधान प्रस्तुत करेंगे, वे भी अंधेरे में कुछ टटोलते से प्रतीत हुए।

एक रोचक प्रस्ताव आया कि 'सम्मेलन' की कार्यवाही 'ब्रजभाषा' में हो। पर किसी ने भी ब्रजभाषा में बोलने का साहस नहीं किया। 'खड़ी बोली' की शिकायत भी होती रही और भाषणों में 'खड़ीबोली' का खुलकर प्रयोग भी होता रहा। यदि कोई वक्ता 'ब्रजभाषा' में अपना वक्तव्य देते तो कोई आपत्तिजनक बात नहीं थी, परन्तु इस आशय का एक प्रस्ताव प्रस्तुत करना एक विशेष मनोवृत्ति का सूचक है। इस प्रस्ताव का मौखिक समर्थन तो सबने किया पर उसके मूल में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो संकीर्ण मनोवृत्ति छिपी है, उसकी ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया। इस प्रस्ताव के मूल में कहीं गहरे यह भाव छिपा है, कि जिसे हिन्दी कहा जाता है, वह 'ब्रजभाषा' से अलग कोई वस्तु है—वह शायद 'खड़ी बोली' का दूसरा नाम है। जब 'खड़ी बोली' एक छोटे से क्षेत्र की बोली होते हुए भी 'राष्ट्रभाषा' बन गई तो ब्रजभाषा' क्यों पीछे रहे? प्रस्तावकर्त्ता को यह मालूम नहीं कि हिन्दी उस जनभाषा का नाम है, जिसके अलग रूप हैं, अनेक शैलियाँ हैं—दूसरे शब्दों में, यह कि वह विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार बोली जाती है और इन्हें ही अनेक बोलियों की संज्ञा दी जाती है। 'साहित्यिक हिन्दी' के स्वरूप का निर्धारण 'खड़ी बोली' की सहायता में, यह भी ऐतिहासिक' कारणों से, अवश्य हुआ, पर 'खड़ी बोली' और 'हिन्दी' पर्यायवाची शब्द नहीं। जिन कारणों से ब्रजभाषा कभी सारे उत्तरी भारत की 'साहित्यिक भाषा' रही, वैसे ही परिस्थितिगत कारणों से 'खड़ी बोली' को वह स्थान मिला। लेकिन हिन्दी न केवल 'खड़ीबोली' है और न केवल 'ब्रजभाषा'। जिस दिन वह केवल 'खड़ी बोली', या केवल 'ब्रजभाषा', या केवल 'अवधी', या केवल 'कुमायूंनी' हो जाएगी, उस दिन वह चाहे जो कुछ हो जाए हिन्दी नहीं रहेगी।

हिन्दी की विभिन्न बोलियों का विकास हो, उनके मौखिक तथा लिखित साहित्य की रक्षा की जाए, उनमें नवीन साहित्य का निर्माण हो, उनकी निजी विशिष्टताओं का पोषण एवं संवर्द्धन हो—इस बारे में दो राय नहीं हो सकतीं। लेकिन इसका यह ढङ्ग नहीं कि 'ब्रजभाषा''खड़ी बोली' या 'अवधी' की आड़ में संकीर्ण-हितों का द्वन्द्व शुरू कर दिया जाए।

श्री प्रभुदयाल मीतल ने 'ब्रजप्रान्त का निर्माण' विषय का उल्लेख करके ब्रजभाषा प्रेमियों के एक वर्ग का प्रतिनिधित्व अवश्य किया, परन्तु उसकी अव्यावहारिकता की ओर संकेत करके उन्होंने दूरदर्शिता का परिचय दिया। मेरा विचार है कि 'ब्रजभाषा साहित्य सम्मेलन' और उसकी गतिविधियों को राजनीति का अखाड़ा न बनाया जाए। 'ब्रज प्रान्त का निर्माण' एक ऐसी मांग है जो 'ब्रजभाषा' के स्वस्थ शरीर में राजनीति का इंजेक्शन देकर उसके स्नायुमंडल में एक तनाव उत्पन्न कर सकती है। 'ब्रजभाषा साहित्य मंडल' यदि इसका आधार लेकर चला तो न 'ब्रज प्रान्त' का निर्माण होगा और न ब्रजभाषा साहित्य के विकास का काम आगे बढ़ेगा। वही बात होगी—"न खुदा ही मिला न विसाले सनम, न इधर के रहे न उधर के रहे।" ब्रजभाषा प्रेमियों का यह कर्तव्य है कि वे ऐसे 'नारों' के चक्कर में न पड़े, क्योंकि उनका उद्देश्य ब्रजभाषा की उन्नति नहीं, वरन राजनीतिज्ञों के निहित स्वार्थों की पूर्त्ति है।

'सम्मेलन' के अन्त में वृन्दावन नगरपालिका के अध्यक्ष श्री मगनलाल शर्मा ने घोषणा की कि ब्रजभाषा साहित्य के शोधकर्त्ताओं के आवास व भोजन आदि की व्यवस्था के लिए 'वृन्दावन' में धनराशि एकत्र की जाएगी और ब्रजभाषा की हस्तलिखित पाण्डुलिपियां शोधकर्त्ताओं को उपलब्ध कराई जाएंगी। ब्रजभाषा साहित्य के 'प्रकाशनार्थ एक 'प्रकाशन-निधि' की स्थापना का निर्णय भी किया गया, जो वास्तव में प्रशसनीय है।

इस अवसर पर 'ब्रजभाषा की पाण्डुलिपियों' की एक छोटी प्रदर्शनी भी आयोजित की गई, जिसकी सूचना 'सम्मेलन' की समाप्ति पर दी गई। इस प्रकार इस प्रदर्शनी का कोई उपयोग न हो सका।

—:* *—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी की 'से' विभक्ति

(श्री किशोरीदास बाजपेयी)

भाषा में उलट-पलट के खेल सदा होते रहे हैं। रूप-परिवर्तन जीवन के लक्षण हैं। मैंने हिन्दी की 'से' विभक्ति संस्कृत की 'भिस्' विभक्ति से समझाई है। 'भिस्' के आद्य व्यंजन का लोप होकर 'इस्'='एस्' और वर्ण-व्यत्यय से स्+ए='से'। 'तृणैस्तत्'—तिनकों से वह (हुआ)। सम्भव है, पहले 'इस्' रूप ही हो और फिर उसमें 'भ्' का 'आगम' हो गया हो ! यह भी सम्भव है कि 'भिस्' से ही 'इस्'=एस्=ऐस् रूप हों। सस्कृत में 'मेघ' और ब्रजभाषा में 'मेघ'। 'घ' से 'ग्' का लोप। यह भी हो सकता है कि 'मेह' से ही 'मेघ' बना हो, 'ग्' का आगम करके। धातु 'मिह्' है; 'मिघ्' 'नहीं'। पाणिनि ने 'भिस्' से एक जगह 'ऐस्' रूप माना है—'अ-तो भिस ऐस्'। हिन्दी ने 'एस्' किया-लिया। उसे उलटकर 'से' विभक्ति बना ली। जैसे 'इन' के वर्णों में उलट-फेर करके (और 'गुण' सन्धि से) 'ने' विभक्ति, उसी तरह 'भिस्' यानी 'इस्' से 'एस्' और वर्ण-विपर्य्यय से 'से' विभक्ति। वर्ण-विपर्य्यय इसलिए कि विभक्ति के आद्य अंश में 'व्यंजन' रहे। व्यंजन का आग्रह इसलिए कि 'सन्धि' की झंझट न रहे। स्वरादि विभक्ति की, स्वरान्त 'प्रातिपदिक' से, 'सन्धि' हो जाती है—इस+इ='इसे' और उस+इ='उसे'। इस 'इ' को कुछ सर्व-नाम-प्रातिपादिकों तक ही हिन्दी ने रखा और सो भी, वैकल्पिक रूप से—इसे-इसको, उसे-उसको; आदि। अन्यत्र कहीं 'इ' विभक्ति नहीं रखी। सर्वत्र 'को' चलती है। इसी प्रवृत्ति ने 'इन' की जगह 'ने' और 'इस्'='एस्' की जगह 'से' रूप अपनाया है।

कुछ लोग इसे (भाषा की प्रकृति-प्रवृत्ति न मान कर) मेरी प्रकृति-प्रवृत्ति के खेल समझते हैं। परन्तु वे यह नहीं बतला सकते कि फिर 'से' कहाँ से आ गई।

भाषा में वर्ण-विपर्य्यय के उदाहरण दुर्लभ नहीं हैं। ब्रजभाषा में 'धुरवा बरसन आए' का 'धुरवा' शब्द भी उलट-फेर से है। संस्कृत में 'वारि' और 'वार्' ये दोनों शब्द एकार्थक हैं। 'वारिधर' प्रचलित हैं; 'वार्धर' दुर्लभ है। भाषा की स्वरान्त प्रियता कारण है। किसी समय 'वार्धर' चलता होगा। उसी से भाषा-प्रवाह ने 'धुरवा' कर लिया—'वार्धर' का वर्ण-विपर्य्यय से, 'धर्वा'=धरवा='धुरवा'।

'बादल' भी उलट-फेर से है। 'वारिद' की ही तरह 'वार्द' 'जल' का पर्याय है; स्वरान्त 'वारि' का ही चलन अधिक है। परन्तु कभी 'वार्द' भी चलता होगा। उसी का रूपान्तर 'बादल' है—वार्द=बारद=बादर='बादल'। वाराणसी=वाणारसी=बनारसी='बनारस'। बनारस से फिर 'बनारसी' विशेषण है।

'महन्त' को लोग सामासिक 'महान्त' का रूपान्तर समझते थे। 'अन्त' का अर्थ 'सिद्धान्त' करके, महान् सिद्धान्त जिसका हो, वह-'महान्त'। मैंने कहा कि यह 'महान्तः' के विसर्ग हटाकर 'महान्त' का रूपान्तर 'महन्त' है। 'महान्' और 'महन्त' एकार्थक हैं, जैसे 'हनुमान्' और 'हनुमन्त'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आदि। पानी 'महन्त' सामासिक 'महान्त' से नहीं है; 'महान्तः' के विसर्ग हटाकर 'महन्त' है। अन्यथा, 'सन्त' का विकास बना 'सान्त' से समझा जाएगा ?

विसर्ग हटाकर बहुवचन-रूप को स्वतन्त्र प्रातिपदिक बनाने की चाल बहुत पुरानी है। 'देवृ' के बहुवचन रूप 'देवरः' ने विसर्ग हटाकर 'देवर' एक पृथक् प्रादिपदिक बना। ऋग्वेद में 'देवर' शब्द आया है। 'गो' प्रातिपदिक के पु० बहुवचन रूप 'गावः' के विसर्ग हटाकर 'गाव'; जो फारसी में गृहीत है। 'व्' को 'य' करके 'गाय' हिन्दी में और 'ग' को 'क' करके 'काव' अंग्रेजी में। 'गाव' को ईकारान्त करके 'गावी' पतञ्जलि के समय में जनभाषा में चलता था। परन्तु 'भाषा विज्ञानी' लोग अन्यथा समझते-कहते हैं। वे 'स्नापित' से 'नापित' बतलाते हैं। नाई 'जजमान' को स्नान कराता है, उससे 'स्नापित' नहीं होता है। वे ही 'भाषा विज्ञानी' मेरा मूक-विरोध करते हैं। मुझे सनकी समझते हैं।

पत्र.व्यवहार--

अन्तर्जनपदीय परिषद् विषयक

८/७ हरिनगर, अलीगढ़
२०-१-६८

डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन', डी० लिट्०
भूतपूर्व अध्यक्ष,
हिन्दी स्नातकोत्तर अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग
द० भा० हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

(१)

प्रिय श्री वृन्दावनदास जी, सादर सप्रेम नमस्ते !

'व्रजभारती' का मार्ग शीर्ष सं० २०२४ वि० वाला अङ्क देखा; प्रसन्नता हुई। आप व्रज-भाषा-साहित्य की संवृद्धि के लिए और जनपद कल्याणी योजना को सक्रिय रूप से जीवन्त बनाने के लिये जो प्रयत्न करने वाले हैं उसके लिए आप निश्चित रूप से बधाई और साधुवाद के पात्र होंगे, यदि आपने वास्तव में सच्ची निष्ठा से योजनाबद्ध रूप में इसका समारम्भ कर दिया।

व्रजभाषा-साहित्य में अष्टछापी भक्त कवियों का एक विशाल योगदान काव्य के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत है। उनकी कविताओं में जो वस्त्र,आभूषण, वाद्य, मिठाइयाँ, पक्वान्न, भोज्य-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पदार्थ, पर्व, संस्कार, नेगन्चार आदि से सम्बद्ध शब्दावली है। उसमें से बहुत-से शब्दों की अर्थमयी आत्मा को आज भी हिन्दी का पाठक नहीं जानता है। यह तभी सम्भव है जब आप अपनी जनपद कल्याणी योजना के अन्तर्गत एक सुनिश्चित रूप रेखा बनाकर कुछ कर्मठ पृथ्वीपुत्रों को साथ लेकर चलें। पहले मथुरा नगरी और उसके आस-पास की बारह कोसी अर्द्धव्यासी परिधि को दृष्टि-पथ में रखकर कार्यारंभ कीजिए। मथुरा नगरी और वृन्दावन नगरी के घर-घर में पहले अलख जगाइए और उक्त प्रकार की शब्द राशि संग्रह कराइए। यदि आपने प्राचीन पकवानों, वस्त्रा-भूषणों और मिठाइयों आदि से सम्बद्ध शब्द-संग्रह विस्तृत अर्थ सहित तैयार करा लिया तो वास्तव में एक बहुत बड़ा कार्य हो जाएगा। ब्रजभाषा और ब्रज-साहित्य के लिए आपका यह प्रशंसनीय योगदान होगा। हिन्दी के लिए भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने स्वयं किया भी था और कराया भी था। मुझे आप से आशाएँ हैं और विश्वास है कि ब्रज-साहित्य-मण्डल के अध्यक्ष के रूप में आप भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को आदर्श मानकर उनके चरण-चिह्नों पर चलेंगे। इतना सारस्वत अभिनन्दन आपको मिल सका तो आप निश्चित ही ब्रज-साहित्य-सेवियों में चिरस्मरणीय बन जाएँगे। शेष फिर निवेदन करूँगा।

आशा है आप सानन्द होंगे।

आपका

अम्बाप्रसाद 'सुमन'

८/७ हरिनगर अलीगढ़।

(२)

ब्राह्मणपुरी, खंडवा (म० प्र०)

दिनांक ६–३–६७

रामनारायण उपाध्याय

प्रिय भाई साहब, सस्नेह वन्दे।

आपका पत्र मिला। आप अन्तर जनपदीय परिषद को पुनर्जीवित करने के लिये प्रयत्नशील है यह जानकर प्रसन्नता हुई। आदरणीय श्री पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी, जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी एवं श्री पं० गणेश चौबे ने भी इस सम्बन्ध में प्रयत्न करने को लिखा था। अभी पिछले सप्ताह में दिल्ली गया था सो श्री डॉ० श्यामप्रसाद, श्री डॉ० सुरेश अवस्थी, एवं डॉ० प्रभाकर माचवे से भी इस सम्बन्ध में चर्चा की। सब इस राय से सहमत हैं कि लोक-साहित्य पर काम करने वालों का एक सम्मेलन होना चाहिये।

आज से १५ वर्ष पूर्व श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी एवं बालकृष्ण शर्मा नवीन के प्रयत्नों से ब्रज-साहित्य मण्डल के तत्वावधान में हाथरस में अन्तर जनपदीय परिषद की पहली बैठक हुई थी। उसमें स्वयं राष्ट्रपति श्री डॉ० राजेन्द्रप्रसाद जी भी उपस्थित थे साथ ही श्री डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामनरेश त्रिपाठी, देवेन्द्र सत्यार्थी, शिवसहाय चतुर्वेदी, श्री डॉ० सत्येन्द्र, श्यामप्रसाद, रामनारायण उपाध्याय, बनारसीदास चतुर्वेदी, जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी, नवीन जी, कृष्णानन्द गुप्त एवं देवीलाल सामर आदि लोक-साहित्य के विद्वान् उपस्थित थे।

यह पहला अवसर था जब लोक-साहित्य पर कार्य करने वालों का राष्ट्रपति से परिचय कराया गया और विचित्र लोक भाषाओं पर होने वाले कार्यों की भी विस्तृत चर्चा की गई।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उसी अवसर पर एक अन्तर जनपदीय परिषद की भी स्थापना की गई थी। तथा परिषद के अन्तर्गत "जनपद" नाम से एक त्रैमासिक पत्रिका प्रकाशित की गई जिसके करीब चार अङ्क प्रकाशित हुये एवं अध्ययन पूर्ण सामग्री उसमें प्रकाशित की गई थी। आज तक वैसा सम्मेलन एवं वैसी पत्रिका दूसरी नहीं निकली।

उसके बाद लोक-साहित्य पर देश में पर्याप्त काम हुआ है।

अनेकों विश्व-विद्यालयों में भी शोध कार्य चल रहे हैं अनेकों ग्रन्थ भी प्रकाशित हो चुके हैं।

लेकिन इन सब कार्यों को व्यवस्थित रूप से गति प्रदान करने वाली कोई संस्था नहीं है।

लोक-साहित्य के कार्य को व्यवस्थित रूप देने एवं उसके सम्मेलन सम्पादन, खोज, शोध और अध्ययन के लिये— अन्तर जनपदीय परिषद के पुनर्संगठन की आज नितांत आवश्यकता है।

इसके लिये सबसे पहले एक बैठक बुलाने की आवश्यकता है जिसमें देश के विभिन्न हिस्सों में काम करने वाले साथी मिल सकें एवं विचार विमर्ष कर सकें।

परिषद की ओर से एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन किया जाना चाहिये।

पत्रिका में खोज और अध्ययन पूर्ण निबन्धों के साथ कहाँ पर क्या काम हो रहा है इसका विवरण भी होना चाहिये।

आशा है इस दिशा में आप पूरा-पूरा प्रयत्न करेंगे। यदि आगरा में बैठक बुला रहे हों तो यह उत्तम है।

मेरे योग्य कार्य निःसंकोच लिखियेगा।

मेरे इस पत्र को आप ब्रजभारती में प्रकाशित कर सकते हैं।

आपका प्रेमी
रामनारायण उपाध्याय

(३)

निम्नलिखित पत्र व्यवहार
जो श्रद्धेय श्री बनारसीदास चतुर्वेदी
और श्री रवीन्द्र के मध्य हुआ

श्री अरविन्दाश्रम
पांडिचेरी
५-२-६८

मान्य भाई,

आपके आदेश से मेरे पास ब्रजभारती नियमित रूप से आ जाया करती है। इस बार आपके कई पत्र पढ़कर मन में कुछ शंकाएं उत्पन्न हुई, इन्हें आपके सामने रख रहा हूँ। बचपन में पढ़ा था—ख़ताए बजुर्गा गिरिफ़तन खता अस्त। यह छिद्रान्वेषण के लिए नहीं, आपकी स्थिति को ठीक तरह जानने के लिये शंकाएं उठा रहा हूँ। आप अपने पत्रों में बार-बार ब्रजमंडल की बातें करते हैं। पत्रों से यह स्पष्ट है कि आपको उसके राजनीतिक रूप की बहुत परवाह नहीं है। आप सांस्कृतिक रूप पर अधिक जोर देते हैं, परन्तु मैं जानना चाहूँगा कि यह मांग गति पकड़ ले तो उसे राजनीतिक लोगों से कौन बचायेगा? भाषावार प्रदेश बनाना स्वाभाविक था परन्तु उनके बन जाने पर देश की क्या व्यवस्था हुई है। आज चारों ओर से अपनी भाषा और अपने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रदेश की आवाजें उट रही हैं और इस शोर में भारतवर्ष का नाम डूबता जा रहा है। आज यहाँ बैठकर मुझे हिन्दी पत्र लिखते हुए शंका होती है कि न जाने पहुँचेगा या नहीं ? हम रोज ही सुनते हैं बम्बई महाराष्ट्र वालों की है यहाँ से लुंगी वालों को हटाओ, आसाम आसामियों का है पगड़ी वालों को निकालो। यहाँ के अखबारों में कभी-कभी भोजपुरी और मैथिली के वकीलों के पत्र छपा करते हैं जिनमें कहा जाता है कि तमिल की तरह हमारी भाषाऐं भी हिन्दी की साम्राज्यवादी लोलुपता का शिकार हैं। भोजपुरी प्रदेश और मैथिल प्रदेश अलग होने चाहिये जहाँ उच्चतम स्तरों तक इन्हीं भाषाओं का उपयोग हो। विश्लेषण करने पर मालूम होता है कि भाषा के प्रश्न केवल कुछ सरकारी कुर्सियों के लिये उठाये जा रहे हैं और सारे देश का वातावरण क्षुब्ध किया जा रहा हैं।

क्या इस समय ब्रज मंडल और विंध्य भूमि, बघेल खण्ड और रुहेलखण्ड की आवाजें झाँसी वाले को आगरे में, मेरठ वाले को रामपुर में विदेशी न बना देंगी ? हिन्दी भाषी प्रदेश वैसे ही काफी पिछड़े हुए हैं, हर जगह जूतों में दाल बँट रही है और अधिक विभाजन उन्हें कहाँ पहुँचायगा ? आज भी पाठ्य पुस्तकें नियत करते समय यह देखा जाता है कि लेखक किस प्रदेश का है। सांस्कृतिक विभाजन (उसका अर्थ मैं ठीक तरह नहीं समझता) कहीं ऐसी स्थिति न ले आये कि सूर और रसखान ब्रज-मण्डल के और तुलसी अवध के कवि बनकर रह जायें। हर एक 'अपनी डेढ़ ईंट की जुदी मस्जिद' बनाने में लगा रहे और हिन्दी सब की होकर किसी की न रह जाय।

मैं स्वीकार करता हूँ कि समष्टि ही सब कुछ नहीं है और व्यक्ति का भी अस्तित्व है जिसका पूर्ण विकास समष्टि के विकास के लिये आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है परन्तु कहीं ऐसा न हो हममें से हर एक, एक-एक अङ्ग को पुष्ट करने में लग जाय और सारा शरीर क्षुधार्त होकर सूख जाय। अच्छी चीज भी अयोग्य हाथों में पड़कर बुरी बन जाती है।

ब्रजभारती देखने से लगता है मानो उसका मुख्य उद्देश्य ब्रज-मण्डल के भूतकाल के गुण गाना ही है। भूतकाल का बहुत महत्व है किन्तु फिर भी वह भूत बन चुका है। वह हमें नया भविष्य गढ़ने में कुछ सहायता दे सकें तभी उसका मूल्य है। परन्तु इस विषय में सचमुच कितने लोग सोचने की क्षमता रखते हैं ? मैं स्वयं ब्रजभाषा, भोजपुरी आदि का शौकीन हूँ परन्तु मेरे सामने अभी तक यह चीज स्पष्ट नहीं है कि भविष्य में इनका हमारे जीवन में क्या स्थान होगा, हिन्दी के साथ इनका कैसा सम्बन्ध होगा। यह काफी ऊहा-पोह का विषय हैं। आपको जँचे तो ब्रजभारती के द्वारा या किसी अन्य माध्यम से इस विषय पर अपने विचार व्यक्त करें। ब्रजभारती में ब्रजभाषा के गद्य का अंश कभी-कभी आता है उसमें से कोई कहानी पुरोधा में ले लिया करता है।

आपका
स्नेहभाजन
रबीन्द्र

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(४)

फीरोजाबाद
७-२-६८

प्रिय रवीन्द्रजी,

आपके पाँच फरवरी के पत्र में ब्रज प्रान्त के निर्माण के विषय में जो प्रश्न किये हैं, वे निस्सन्देह महत्वपूर्ण हैं।

उनका उत्तर देने के लिये यह बात मैं प्रारम्भ में ही स्वीकार किये लेता हूँ कि मैं कोई राजनैतिक जन्तु नहीं और इस प्रश्न में राजनैतिक पहुलुओं पर अधिकार पूर्वक कुछ भी नहीं लिख सकता।

वस्तुत: मैं जनपदीय कार्य का समर्थक हूँ—'मधुकर' का **जनपद अङ्क** मैंने बहुत वर्ष पहले निकाला भी था—और सुप्रसिद्ध रूसी लेखक मैक्सिम गोर्की के साथ मेरा भी यह दृढ़ विश्वास है कि प्रत्येक जनपद की एक आत्मा होती है। ब्रजवासी होने के कारण मुख्यतया ब्रज की आत्मा के विषय में कुछ ज्ञान प्राप्त करने की मेरी इच्छा सर्वथा स्वाभाविक ही है, मैं सभी जनपदों के सर्वाङ्गीण विकास का पक्षपाती हूँ। जहाँ तक जनपदीय भाषाओं तथा बोलियों का प्रश्न है, मैं उनकी उन्नति के लिये पूरा-पूरा मौका दिये जाने का समर्थक हूँ। यदि मैथिली भोजपुरी अथवा राजस्थानी या ब्रजभाषा में कुछ किताबें छप जावें अथवा कुछ पत्र प्रकाशित होने लगें, तो उससे हमें डरने की कोई जरूरत नहीं। राष्ट्रभाषा का स्टीम रौलर चला कर जनपदीय बोलियों को कुचला नहीं जा सकता। वे बोलियाँ खड़ी बोली की सौत नहीं माता हैं—माता! और अब भी उनमें देशज शब्दों तथा मुहाविरों का अक्षय भंडार विद्यमान है।

महत्वाकांक्षी राजनैतिक नेताओं की तिकड़मों से अब सारा देश भली भाँति परिचित हो चुका है और साधारण जनता के हृदय में उनके प्रति कोई सम्मान भी बाकी नहीं रहा। वह साँप-नाथों और नागनाथों में कोई भेद नहीं कर सकती और सभी पार्टियाँ इस विषय में समान रूप से दोषी हैं। भावीयुग राजनीतिका नहीं, साहित्य तथा संस्कृति का है।

मैं यह मानता हूँ कि यदि जनपदीय जागृति अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाय तो सम्भवत: अनेक राजनैतिक प्रश्न भी उठ खड़े होंगे। जैसे स्वास्थ्य लाभ कर लेने पर आदमी अपनी नवीन शक्ति का दुरुपयोग भी कर सकता है, पर उससे डरकर क्या हम पूर्ण स्वस्थ बनने की चिन्ता ही छोड़ दे?

भाषाओं तथा उपभाषाओं के प्रश्न कोई भारत की खुसूसियत नहीं है। अन्य देशों में भी ये विवाद उठ खड़े हुए थे और उन्होंने अपने-अपने ढङ्ग पर उन्हें सुलझाया भी था। खास तौर पर रूस ने इस प्रश्न को सफलता पूर्वक हल किया है। जिन बोलियों की कोई लिपि भी नहीं थी, उनमें भी वहाँ अब ग्रन्थ प्रकाशित होने लगे हैं।

निस्सन्देह पद लोलुपता की भयंकर बीमारी ने हमारे राष्ट्रीय शरीर को जकड़ लिया है और यह बड़े दुर्भाग्य की बात है। सैकड़ों वर्षों की गुलामी इसका मूल कारण हो सकती है। मन्दाग्नि से पीड़ित व्यक्ति में अपनी भूख खुल जाने पर जैसे अट-संट भोजन कर लेने की प्रवृत्ति जागृत हो जाती है, स्वाधीनता प्राप्ति के बाद कुछ वसी ही हालत हमारे देश की भी होगई है। इसमें स्वयं सांस्कृतिक तथा साहित्यिक व्यक्तियों और पत्रकारों का अपराध कम नहीं। हम लोग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजनैतिक नेताओं के पीछे चकरघिन्नी बने घूमते रहे हैं और उन्हें अनुचित महत्व देते रहे हैं। उनके हंगने मूतने और छींकने तक की खबरें हम लोग छापते रहे हैं और इसलिये उनका दिमाग आसमान पर चढ़ गया है। अगर अखबार वाले उनको महत्व देना छोड़ दें तो वे सातवें आसमान से धड़ामधम नीचे आ गिरेंगे।

देश में प्रान्तीयता से प्रेरित भाषा-सम्बन्धी जो झगड़े हो रहे हैं उनका निदान वैज्ञानिक ढङ्ग पर किया जाना चाहिये। जनपदीय जागृति इस बीमारी की जड़ हर्गिज नहीं है। अगर भारत की सभी उपभाषाओं या बोलियों को खतम कर भी दिया जाय तो हमारी पद लोलुपता का खातमा थोड़े ही हो जायगा।

मुख्य प्रश्न है समाज व्यवस्था को बदलने का। किसी-न-किसी प्रकार का समाजवाद या साम्यवाद इस देश में आकर रहेगा और तदर्थ हमें तन-मन-धन से प्रयत्न भी करना चाहिये। किसी देश विशेष की नकल किये बिना हमें अपने देश की विशेष परिस्थितियों के अनुरूप अपनी समाज व्यवस्था कायम करनी चाहिये। यदि जनता की शक्ति का सदुपयोग इस उद्देश की पूर्ति में कर लिया जाय तो छोटे-मोटे झगड़े अपने आप ही खतम हो जायेंगे। जब तक कि देश के द्रव्य साधनों पर इने-गिने आदमियों का अधिकार रहेगा और करोड़ों व्यक्ति उनके दासानुदास बनकर ही अपनी जिन्दगी बसर करने के लिये मजबूर होंगे तब तक राष्ट्र के शरीर को ये आधिव्याधियाँ ग्रसती ही रहेंगी।

योगी अरविन्द ने एक महान वैज्ञानिक की भाँति अपनी प्रयोगशाला में क्षुद्र राष्ट्रीयता क्षुद्रतर प्रान्तीयता और क्षुद्रतम साम्प्रदायिकता तथा जातीयता की बीमारियों का व्यावहारिक इलाज खोज निकाला था। आवश्यकता इस बात की है कि उनके आश्रम के आदर्श सीधी सादी जवान में जनता तक पहुँचाये जावें। यह कार्य राजनैतिक जन्तुओं का नहीं—वे हकीम नहीं बन सकते, क्योंकि वे तो खुद मरीज हैं।

क्षमा कीजिये, आपकी अनुमति के बिना मैं आपके पत्र तथा अपने इस उत्तर को पत्रों में छपने के लिये भेज रहा हूं ताकि दूसरे लोग भी इनमे उठाये सवालों पर कुछ विचार कर सकें।

विनीत

बनारसीदास चतुर्वेदी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्रन्थावलोकन

(श्री राजेन्द्र रंजन एम० ए०)

श्रीरूप सखीजी की वाणी :—

संपादक:—श्री राधा मोहनदास गुप्त प्रकाशक – लाला हरगूलाल बेरी वाले श्री विहारीजी का बगीचा वृन्दावन मथुरा।

रसिक अनन्य नृपति स्वामी श्री हरिदासजी ने राधाकृष्णोपासना की एक विशिष्ट परम्परा का प्रवर्त्तन किया जो भारतीय धर्म साधना विधान को उनकी एक महत्त्वपूर्ण देन है। उनकी गोपीभाव की उपासना असाधारण है जो प्रेम और भक्ति के उस स्तर पर टिकी है, जहाँ पहुँचकर साधक स्वयं अपने अस्तित्व को विस्मृत कर देता है। यह तो प्रेम का वह अनूठा और बाँका पथ है जहाँ लोक वेद की मर्यादा स्वतः तिरोहित हो जाती हैं। अतः इस सम्प्रदाय का साहित्य भी बाँके बिहारी की नित्य निकुंज लीला के रास से अभिभूत है अतः इन महात्माओं का साहित्य भी अलौकिक है। संप्रदाय के अष्टाचार्यों के अतिरिक्त किशोरीदास नवल सखी कृष्णादास रूपसखी पीताम्बर दास भगवत रसिक शीतलदास और सहचरिशरण जी का काव्य इसी परम्परा में हैं। संप्रदाय के भक्त इन्हें गोप्य रखते हैं क्योंकि भगवत रसिकजी के अनुसार ललिता सखी रूप श्री हरिदास जी का उपासना तत्त्व तो वह सिंहनी का दूध है जिसे या तो समर्थ सिंह शावक ही पचा सकता है अथवा सोने के पात्र में ही उसे रक्खा जा सकता है। किन्तु श्री राधामोहन दासजी ने इन महात्माओं की वाणी का प्रकाशन कर जहाँ ब्रजी साहित्य के एक विशिष्ट क्षेत्र को प्रकाशित किया है वहाँ भक्ति की इन अनूठी स्थितियों को संसार में प्रस्तुत कर दिया है ताकि विश्व का कोई भी दर्शन, साधना-पद्धति इसको आँके और भारतीय-भक्त मानस इन्हें पढ़कर आनंदित हों। पुस्तक का संपादन प्रकाशन अभिवन्द्य है, हाँ, प्रयत्नों के बावजूद ब्रजी के शब्दों के स्वरूप प्रूफ की त्रुटियों के कारण कहीं-कहीं विरूप हो गये हैं। श्री राधामोहन दास ने इन प्रेम के सर्वोच्च गायकों की वाणी संग्रह की परम्परा को निभाया भी है। अ० भा० निम्बार्क-शोध मण्डल वृन्दावन (मथुरा) से प्रकाशित **श्री किशोरदास जी की वाणी**। श्री किशोरदास जी भी हरिदासजी की परम्परा में ही श्री पीताम्बर देवजी के शिष्य थे। इतिहास की दृष्टि से भी उनकी वाणी महर्घ्य हैं। इस संकलन में श्री गुप्त ने प्रेमानन्द पच्चीसी श्रीवृन्दा विपिन विलास नेह तरङ्ग वर्षोत्सव और आचार्योत्सव के पदों को संकलित किया है। इसी प्रकार **श्री विहारीवल्लभ जी की वाणी** में श्रीसखी सुखसार सिद्धान्त, होरी धमार, प्रशंस, श्री भगवत रसिक अनन्य नाम प्रताप, प्रभाव एवं भगवद्भक्त नामावली का संपादन है। संकलन के आरम्भ में संपादकीय भूमिका में वाणीकार के व्यक्तित्व, जीवनी, और साहित्य के सम्बन्ध में भी शोधपूर्ण जानकारी प्रस्तुत की गई हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज कवि अङ्क (श्रीवल्लभ विज्ञान) :—

संपादकः—गोपालदास झालानी—प्रकाशक अ० भा० पुष्टि मार्गीय वैष्णव परिषद् इन्दौर (म० प्र०) मूल्य १.२५ पैसे ।

जब कभी ब्रजी काव्यधारा के सम्बन्ध में बात चलती है तो प्रायः यह ही कह दिया जाता है कि ब्रजी काव्य-धारा अब अवरुद्ध और निश्चेतन है । ब्रज-काव्य की इति श्री कविरत्न रत्नाकर से मानली जाती है अधिकांश इतिहासकारों ने इसी धारणा को दोहराया है जब कि वास्तविकता इसके विपरीत है । तथापि इस धारणा के मूल में कारण यह रहा कि ब्रज काव्य क्षेत्र में जो सर्जना हो रही है उसका प्रकाशन उतने रूप में नहीं हो रहा । परन्तु इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि ब्रज काव्यधारा आज भी अपनी अबाध गति से अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित है, आज भी वह सप्राण है और उसका निरंतर परिष्कार हो रहा है और कहीं-कहीं तो आज ब्रज-भाषा का ऐसा सुन्दर स्वरूप सामने आता है जो मध्य-कालीन काव्य में किसी-किसी कवि की वाणी में ही है । ब्रजभाषा-कविता आज की खड़ी बोली की अकविता विकविता की होड़ में बहुत बढ़ी चढ़ी है वह आज अपनी दिशा माँग रही है । और इसी तथ्य की प्रतीक है यह ब्रज कवि अङ्क । डॉ० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' के 'शब्दों में' ब्रजभाषा में आज भी एक से एक श्रेष्ठ कवि काव्य साधना में रत हैं, इसका परिचय इस विशेषांक से भली प्रकार हो जाता है । राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त से लेकर आज तक के कवियों की इन रचनाओं का पारायण करके सबसे पहली बात तो यह ध्यान में आती है कि ब्रजभाषा को हमने केवल भक्ति या शृङ्गार की व्यंजना में ही सक्षम मानकर उसके साथ बड़ा अन्याय किया है । इस अङ्क में प्रकाशित श्री मनोहर शर्मा चतुर्वेदी की 'कुमा' श्री सुभाषी की 'सपन सुहावने' और श्री महेशशर्मा की 'जिन्दगी कौ कर्ज' शीर्षक रचनायें देखकर क्रमशः नई कविता छायावाद और प्रगतिवाद में व्यक्त भावनाओं वाली कविताओं का स्मरण हो आता है । ये रचनायें अपनी अभीष्ट अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने में पूर्ण रूपेण सफल हैं । दूसरी बात यह है कि ब्रजभाषा में जो भावाभिव्यंजन की स्वाभाविक शक्ति है वह अद्भुत रूप से इस अङ्क में संग्रहीत कवियों की कविताओं से प्रकट होती है । मुझे तो यह अङ्क मीठी रोटी जैसा ही लगा । एक से एक सरस रचनायें इसमें संग्रहीत हैं । इस अङ्क में बाईस प्रतिष्ठित कवियों की कविताऐं संकलित हैं इसे वर्तमान ब्रजी काव्य का प्रतिनिधि संकलन कहा जा सकता है । यत्र-तत्र प्रूफ की अनेक अशुद्धियाँ है पर श्री जवाहरलाल चतुर्वेदी के शब्दों में ब्रज कवि अङ्क ब्रज और उसकी भाषा तथा साहित्य से इतना रगमगा है कि उसे मन छोड़ने को नहीं करता, गुलाब के फूलों के साथ काँटा चुभना लोक रीति नीति हैं अतः जो संपादन तथा प्रूफ की त्रुटियाँ गुलाब के फूल के काँटों की तरह त्याज्य हैं किन्तु तद्भूत पुष्प गुलाब हृदय की चीज बन जाता है ।

तुलसी कौ ब्रजागमन :—

कविः—श्री राजाबाबू बर्मन प्रकाशक : श्री निरंजनदेव शर्मा—महाप्रभु वल्लभाचार्य मार्ग मथुरा मूल्य : २५ पैसे ।

पुष्टि मार्ग के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ "दोसौं बावन वैष्णवन की वार्ता" में नन्ददास और उनके चचेरे भाई तुलसीदास के ब्रजागमन का प्रसंग आता है । यद्यपि कुछ विद्वान अनुमान के आधार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर इसकी यथार्थता में सन्देह करते हैं किन्तु केवल अनुमान ही किसी साक्ष्य को अप्रमाणित नहीं कर सकता। अस्तु गोस्वामी तुलसीदास जी भाई नन्ददास को राम भक्ति की ओर ले जाने के लिये ब्रज आये किन्तु यहाँ आकर उस द्वैध को भूल गये और नन्ददास की सराहना करते लौटे। यह प्रसंग बड़ा रोचक है। इस कृति के कवि श्री बर्मन अपनी वंश परम्परा से पुष्टि मार्गीय हैं अतः पुष्टि मार्ग की बातें उनके रक्त में घुली मिली है, उन्होंने इस रोचक प्रसंग को और भी रोचक बना दिया और उनकी संप्रदाय के प्रति निष्ठा और सेवारस के प्रति ललक इस रचना में सर्वत्र मिलती है। ब्रज भाव की प्रमुखता तो है ही। 'ब्रज में ठौर मठरी के ठाठ हैं, यहाँ सूखा सतुआ कहीं नहीं मिलेगा' वास्तव में कितने परम सुख की कल्पना है।

वृन्दावन :—

कवि:—श्री मधुसूदन चतुर्वेदी प्रकाशक : भारतीय पुस्तक भण्डार बेगम बाजार हैदराबाद (आन्ध्र) चतुर्वेदी प्रकाशन समिति कमतरी (आगरा) मूल्य १.२५ पैसे।

'वृन्दावन' में श्री मधुसूदन जी की ब्रजभाषा रचनाओं का सुन्दर संकलन है। 'पथिक रचना पढ़ने से एक बात तो यह सामने आती है कि चतुर्वेदी जी का ब्रजी पर अच्छा अधिकार है दूसरे कोमल भावनाओं की व्यंजना में उन्हें अच्छी सफलता मिली है। इसके अतिरिक्त 'समस्या पूर्ति' में उन्होंने विविध भावों को छोटे से घनाक्षरी छन्द में सुन्दरता से सँजोया है। 'चाकरी कौ चुनाव' एवं 'सुभीते की सवारी' हास्य रस की मधुर रचनायें हैं। 'कालिन्दी कूल' उनके ब्रज प्रेम का परिचायक है। सबसे बड़ी विशेषता 'वृन्दाबन' में जो निखर के आयी है वह है—परम्परा-वादिता से मुक्ति एवं ब्रजी में उन्मुक्त और जीवन्त तत्त्वों की व्यंजना। नागरी के निवेदन में वे लिखते है:—

अँग्रेजी कौ मोह अजहुँ नेतन पै छायौ।
अपनी भाषा की उन्नति कौ ध्यान न आयौ॥
हिंदी भाषा के लियें दक्खिन भयौ बिदेस।
अँग्रेजी पै रीझि कें देत हिये में ठेस॥

—चोट गहरी लगै।

शृङ्गार शतक :—

प्रकाशक—चतुर्वेदी प्रकाशन समिति कमतरी मूल्य १.००।

महाराज भर्तृहरि के शृङ्गार शतक का महाराजा प्रतापसिंह जूदेव के श्री भाषा-काव्यानुवाद सहित यह सुन्दर प्रकाशन किया है। इससे पहले समिति नीति शतक भी प्रकाशित कर चुकी हैं।

राजस्थान भारती (भाग १० अङ्क १)

संपादक-अगरचन्द नाहटा—सादूल राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट बीकानेर विभाषाओं के मूल्यवान साहित्य के संरक्षण और संवर्धन में यह पत्रिका विशेष महत्त्व पूर्ण है। राजस्थानी भाषा में मौलिक साहित्य सृजन और प्राचीन साहित्य के शोध और संरक्षण में भारती का प्रयास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वंदनीय है। राजस्थान भारती से राष्ट्रभाषा का कोष समृद्ध होगा क्योंकि विभाषाओं से भाषा का तनु तो पुष्ट होता ही है, आत्मा भी अकलुष, सशक्त एवं प्रभावमय बनती है।

ज्ञानदा (प्रवेशांक) :—

संपादकः—ज्यो० राधेश्याम द्विवेदी, प्रकाशक भारती अनुसन्धान भवन मथुरा।

अनुसन्धान भवन की 'ज्ञानदा' नामक अनुसन्धान-पत्रिका प्रकाशित करने की योजना अभिनंदनीय है। प्रस्तुत अङ्क में अनेक माननीय विद्वानों के मननीय निबन्ध संकलित हैं।

नेह निवाह (महाकवि ग्वाल कृत) :

संपादकः—कविरत्न गोविन्दजी प्रकाशक भारती अनुसन्धान भवन, मथुरा।

महाकवि ग्वाल के साहित्य का शीघ्र ही प्रकाशन होना चाहिये, भवन ने इस कार्य का श्रीगणेश कर बहुत सुन्दर कार्य किया हैं, हाँ प्रूफ की असंख्य भूलों से काव्य को विरूप न बनाया जाय।

अखण्ड विजय ज्योति

ब्रज प्रदेश की साहित्यिक, सामाजिक सांस्कृतिक विशिष्ट सामग्री से युक्त बाल जगत् नारी लोक व उच्च-कोटि के उत्तम लेखों से समन्वित यह पत्रिका पठनीय है।

वार्षिक मूल्य ५.५० पैसे, एक प्रति ५० पैसे।

पता–व्यवस्थापक :

अखण्ड विजय ज्योति, गोवर्धन मथुरा।

देशभक्त हौरेशस—

(संपापक—बा० वृन्दावनदास)

रोमन वीर और देशभक्त हौरेशस के चारु-चरित का वर्णन लॉर्ड मैकोले ने अँग्रेजी में किया है उसी काव्य का ब्रज-भाषानुवाद ब्रजकोकिल सत्यनारायण कविरत्न ने किया है। कविरत्न सत्यनारायण द्वारा रचित यह उद्दाम प्रेरणाप्रद गाथा ब्रज-भाषा के राष्ट्रीय वीर काव्य का प्रतीक है। सरल ब्रज-भाषा में रचा गया यह सुन्दर खंड काव्य है। मूल्य १) रु०

(ब्रज-साहित्य मण्डल, मथुरा से प्राप्य)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी सम्पूर्ण बचत आज ही

उत्तर प्रदेश कोआपरेटिव बैंक लिमिटेड

प्रधान कार्यालय लखनऊ में

जमा कर अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कीजिये

उक्त बैंक सहकारी आन्दोलन के अन्तर्गत सरकारी साझेदारी तथा बैंकिंग संस्थान अधिनियम के अन्तर्गत सरकार द्वारा निरीक्षित एक मात्र एवं विश्वसनीय बैंकिंग संस्था है

शाखाएँ — आगरा, अल्मोड़ा, बरेली, फैजाबाद, डी० ए० वी० कालेज कानपुर, गोंडा, पीलीभीत, कानपुर रामपुर, सीतापुर, वाराणसी।

क्षेत्रीय कार्यालय आगरा, गोरखपुर, कानपुर, बरेली।

हमारी विशेषताएँ

१—राज्य की समस्त कृषि योजनाओं के लिए जिला एवं केन्द्रीय सहकारी बैंकों के माध्यम से आर्थिक सुविधाएँ प्रदान करना।

२—प्रत्येक प्रकार की बैंकिंग सुविधायें प्रदान करना।

३—अल्प सामयिक एवं मियादी अमानतें आकर्षक दरों पर स्वीकार करना।

आप भी राष्ट्र निर्माण योजनाओं की पूर्ति, उसकी समृद्धि के निमित्त अपना धन लगाकर सहयोग प्रदान कर राष्ट्र निर्माण में हाथ बटाएँ।

अन्य जानकारी

क्षेत्रीय अधिकारी, शाखा प्रबन्धक या मुख्य कार्यालय से प्राप्त कीजिये

गत ५ वर्षों में बैंक की प्रगति के कुछ आंकड़े

	३०—६—६०	३०—६—६५
१—पूँजी	२५४·७६ लाख	५३८·७६ लाख
२—अमानतें	७४७·४६ लाख	२०६०·०८ लाख
३—सहकारी संस्थाओं को ऋण दिया गया	१३०५·९५ लाख	३३३६·२५ लाख
४—लाभ	१६·०५ लाख	३७·०२ लाख

ए० पी० सिंह
आई० ए० एस०
अध्यक्ष

मथुरा सिंह
उपाध्यक्ष

धीर सिंह वर्मा
सामान्य प्रबन्धक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१-हमारे जवानों के शौर्य ने शत्रु के मनसूबे धूल में मिला दिए।

२-हमारे यहाँ बने हथियारों के सामने अमरीकी हथियार कामयाब न हो सके।

३-हमें अपने को अन्नोत्पादन में भी आत्म निर्भर होना है।

४-अमरीका या अन्य देशों का मुँह ताकना धोखा दे सकता है।

देश का हर व्यक्ति राष्ट्र की इस सबसे बड़ी समस्या में अपना योग दे सकता है। जिला सहकारी बैङ्क में अपना धन आप जमा करें जहाँ वह पूर्ण सुरक्षित है, ब्याज दूसरे बैङ्कों से आपको ज्यादा मिलेगा और किसानों के अन्नोत्पादन के कार्य में आपके धन का उपयोग होगा।

जिला निवासियों के लिये हमारी शुभ कामनाओं के साथ हम आशा भी करते हैं कि आप अपने ही सहकारी बैंक को अपनाकर अपना तथा इस बैंक का और अपने राष्ट्र का सदैव हित करेंगे।

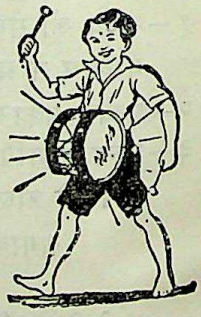

ब्याज की दरें

सेविंग खाता पर	४	प्रतिशत	वार्षिक
कौल डिपौजिट पर	३।।।	,,	,,
६ माह की अमानत पर	५।।	,,	,,
१ साल की अमानत पर	६।	,,	,,
२ साल की अमानत पर	६।।	,,	,,
३ साल की अमानत पर	६।।।	,,	,,
४ साल की अमानत पर	७	,,	,,
५ साल की अमानत पर	७।	,,	,,
७ साल की अमानत पर	७।।	,,	,,

मथुरा जिला सहकारी बैंक लि०, मथुरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कल्याण तेल

की

विशेषतायें–

★ गठिया का दर्द

★ शरीर की जकड़न

★ जोड़ों में दर्द

★ पसली के दर्द

★ कमर में दर्द को

आराम पहुँचाता है ।

निर्माता–

सहकारी औषधि निर्माणशाला,

रानी खेत (उ० प्र०)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज साहित्य मंडल के कुछ प्रकाशन

द्रौपदी दुकूल—[लेखक–कविवर रामलला]

इस खण्ड-काव्य में महाभारत की द्रौपदी-चीरहरण-कथा का ब्रज-भाषा में मनोग्राही वर्णन है। मूल्य ५० पैसे

पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ

सेठ कन्हैयालालजी पोद्दार के सम्मान में ब्रज जनपद के बहुमुखी अङ्गों पर लगभग ८० विद्वानों के लेखों का संग्रह। यह ग्रन्थ ब्रज-भाषा, साहित्य एवं संस्कृति का विश्वकोश है। सुपर रायल साइज में ग्लेज कागज पर छपा हुया अनेक रङ्गीन और सादे चित्रों सहित, पृष्ठ सं० ११५४। मूल्य ३० रुपये

अष्टछाप के वाद्ययंत्र—[लेखक–श्री चुन्नीलाल 'शेष']

अष्टछाप के समय में प्रचलित विविध भारतीय वाद्ययंत्रों का विद्वत्तापूर्ण विवेचन, विविध वाद्यों के ५४ रेखाचित्रों सहित। मूल्य ३ रु०

ब्रज का इतिहास (दूसरा भाग)—[लेखक–श्री कृष्णदत्त बाजपेयी]

प्रस्तुत ग्रन्थ में ब्रजभाषा के समस्त उच्चकोटि के कवियों का संक्षिप्त जीवन-वृत्त उनकी उत्तम कृतियों सहित दिया गया है। ब्रजभाषा काव्य के इससे अधिक सुन्दर इतिहास की कल्पना नहीं की जा सकती। ब्रजभाषा के कवियों और उनकी उत्तम कृतियों का इसे विश्वकोष समझिये। पृष्ठ संख्या ८०० से ऊपर हैं। मूल्य ८ रु० मात्र

ब्रज-लोक-संस्कृति—[संपादक : डा० सत्येन्द्र]

ब्रज के लोक-जीवन, साहित्य, संगीत, नृत्य, इतिहास, शिलालेख तथा उसकी संस्कृति एवं विभिन्न कलाओं पर, मंडल द्वारा आयोजित शिक्षण शिविर में देश के गण्यमान्य विद्वानों के लेखों एवं भाषणों का अपूर्व संकलन। लोक-जीवन के प्रेमियों एवं अध्येताओं के अनेक चित्रों से सज्जित यह ग्रन्थ अत्यन्त उपादेय है। मूल्य ४ रु०

ब्रज की लोक-कहानियाँ—[संपादक : डा० सत्येन्द्र]

ब्रज में प्रचलित लोक-कहानियों का लोक-भाषा में ही किया गया हिन्दी का सर्व प्रथम कहानी संग्रह, जो विद्वानों व भाषाशास्त्रियों के अध्ययन और साधारण पाठकों के मनोरञ्जन की सुन्दर सामग्री से सज्जित है। इसमें बालकों, बूढ़ों, युवकों सभी के लिए कहानियाँ हैं। व्रत तथा त्यौहारों की कहानियों के कारण यह स्त्रियोपयोगी भी है। यह पुस्तक प्रत्येक घर में रखने योग्य है। सुरुचिपूर्ण सुन्दर छपाई, रङ्गीन आवरण, पृष्ठ सं० १८७। मूल्य ३.२५ रु०

ब्रजभारती–मण्डल की शोध सम्बन्धी त्रैमासिक मुख-पत्रिका

संपादक : बा० वृन्दावनदास

मूल्य ४ रु० वार्षिक.

बाबू वृन्दावनदास अध्यक्ष ब्रज साहित्य मण्डल, के लिए राष्ट्रीय प्रेस,
डैम्पियर नगर, मथुरा में मुद्रित तथा प्रकाशित।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh